युद्धोपरान्त

युद्धबन्दियों के साथ

वीरसिंह

तिरुपति प्रकाशन
हापुड़-245101

श्री धर्मपाल 'अकेला'
के लिए
सादर-

अनुक्रम

भूमिका

जब कोई व्यक्ति किसी महान् घटना का साक्षी हो तो उसे अपना यह दायित्व समझना चाहिए कि अपने अनुभवों को या तो वह स्वयं लिखे या किसी अन्य अनुभवी लिपिकार से शब्दबद्ध करा ले जिससे कि आने वाली पीढ़ियों को उसके अनुभव उपलब्ध हो सकें।—प्रस्तुत पुस्तक द्वारा मैंने यही दायित्व निबाहने की चेष्टा की है।

दिसम्बर 1971 का उत्तरार्द्ध—। अनायास ही मुझे एक सुयोग मिला और मैं भारतीय इतिहास के एक अपूर्व घटनाचक्र का साक्षी बन सका। मुझे बंगलादेश-मुक्ति संग्राम में पकड़े गए पाकिस्तानी पक्षधरों के लिए बनाए गए युद्धबन्दी शिविरों में से एक मे युद्धबन्दियों के साथ नियुक्त किया गया था। पूरे दो वर्ष दो महीने मैं पराजित योद्धाओं के बीच में रहा हूं। शिविर मे युद्धबन्दियों के साथ, रहते-रहते मेरे मन में यह सहज जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि उनके मन में भारतीय राष्ट्र और भारत के प्रति क्या भाव हैं। इस जिज्ञासावश ही मैं उनकी घृणा का भयंकर खतरा उठाते रहकर भी दिन-प्रतिदिन उनके अधिकाधिक निकट होता चला गया। प्रत्येक सांझ को या फिर रात में मैं युद्धबन्दियों से संबंधित दिन भर में अर्जित अपने अनुभवों को अपनी डायरी में टीप लिया करता था। और अब वही डायरी आप पढ़ेंगे।

पुस्तक के प्रथम अध्याय में द्वितीय विश्वयुद्ध तक युद्धबन्दियों की समस्या के समाधान हेतु किए गए विश्व प्रयासों का जिक्र मैंने संक्षेप में किया है। इसी अध्याय में जेनेवा अभिसमय के कतिपय प्रावधानों का परिचय भी पाठकों को मिलेगा। ये अभिसमय युद्धबन्दियों के प्रति व्यवहार

सबंधी प्रचलित आधुनिकतम अन्तर्राष्ट्रीय कानून हैं। इन समझौतों पर हस्ताक्षर करने वाले सभी देश इनका पालन करने के लिए प्रतिवद्ध होते है।

पुस्तक पढ़कर पाठक यह जान सकेंगे कि भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय कानून का पालन कितनी ईमानदारी से किया। शायद यह बुराई को भलाई से जीतने की दिशा मे एक कदम कहा जाएगा। जिस भी शिविर में मैं गया मुझे बदियों के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को व्यक्त करने वाली पक्तिया—"युद्धवन्दी अपराधी नही वरन् केवल वे व्यक्ति है जो स्वदेश के लिए शस्त्र सम्भालने मे असमर्थ हैं, जिनका अनादर न कर नजरबन्द होने पर जिनके साथ मानवतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए—" लिखी मिली। सभवत इसी कारण मैं सारी अवधि पर्यंत एक मानव रहा। मात्र एक मानव, न हिन्दुस्तानी न हिन्दू और न पाकिस्तानी। इस पुस्तक में शिविर मे मेरी नियुक्ति के समय की मेरी मन स्थिति का चित्रण है। शिविर मे नियुक्त भारतीय अधिकारियों, भारतीय सरकार एवं भारत के प्रति वन्दियो के मन मे क्या भाव थे, उनका दैनन्दिन जीवन एवं समस्याएं क्या थी, वन्दी का मनोविज्ञान कैसे निर्मित होता है, आदि की झलक पुस्तक मे मिलेगी।

शिविरों मे वन्दियो के आवास, भोजन व स्वास्थ्य, धार्मिक स्वतन्त्रता, क्रीड़ा-मनोरजन, शिक्षा और भारत द्वारा प्रदत्त तत्संबंधी सुविधाओं का विस्तृत वर्णन अलग-अलग अध्याय बनाकर प्रस्तुत पुस्तक मे किया है। एक अध्याय मे नजरबन्दी की अवधि मे वन्दियो द्वारा शिविर से भाग निकलने के प्रयत्नो का वर्णन भी किया गया है। इसके अतिरिक्त युद्धवन्दियो की वापसी पर एक पूरा अध्याय लिखकर मैंने भारतीय प्रवन्ध-पटुता का वर्णन किया है, साथ ही शिविरो मे रहे उन हजारों व्यक्तियों की भारत के प्रति धारणा का आभास भी पाठको को मिलेगा जो कभी "भारत-ज्वर" नामक रोग मे पीड़ित थे। वास्तव मे भारतीय अधिकारियों ने अपने मृदु, उदार एव अपूर्व व्यवहार से युद्धबन्दियों का दिल जीत लिया था। जो कुछ कहूंगा सत्य कहूगा, सत्य के अतिरिक्त कुछ नही कहूगा—की नीति मानते हुए मैंने एक पूरा अध्याय शिविर मे अय्याशी, समलैंगिकता, पारस्परिक

अनैक्य और बंदियों में व्याप्त अन्य अनेक मनोविकारों के सम्बन्ध में लिखा है तो उनकी अनुशासनप्रियता की प्रशंसा भी की है।

युद्धबन्दियों के साथ सहजीवन की उस सारी अवधि के मध्य मुझे उनकी हंसोड़ प्रवृत्ति और स्वयं अपने ऊपर हस लेने की मर्दानगी के भी कई नमूने मिले जिनका उल्लेख मैंने यत्र-तत्र किया है। साथ ही मुझ पर वन्दियों के वैयक्तिक एव गोपन जीवन से संबधित जो अनेक तथ्य प्रकट हुए, उनको भी मैंने अपने पाठकों के सम्मुख रखा है। बन्दियों के मुझ पर विश्वास के कारण जो पत्र मेरे देखने में आए मैंने उनका उपयोग भी पुस्तक में किया है जिससे पाठक जान सकेंगे कि वन्दियों का बाह्य जगत से किस प्रकार का संबंध था। कई बार बन्दियो के पिछले गार्हस्थिक जीवन की अनेक समस्याएं सुनकर मेरे भी आंसू निकले हैं। यह पुस्तक पढ़ते हुए शायद आप भी उन स्थलो को खोज सकेंगे—'दर्द सबका एक होता है।'

युद्धवन्दियो की समस्या किसी एक राष्ट्र की समस्या न होकर समस्त मानव समाज की समस्या है। पुस्तक के अन्तिम अध्याय को पढ़कर पाठक अनुमान लगा सकते हैं कि युद्ध और युद्धबन्दियों की समस्याओं को समाप्त करना विश्व के समक्ष आज भी एक चुनौती वनी हुई है। इस दिशा में अभी भी कितना कुछ करने की सम्भावनाएं है? इन समस्याओं को सुलझाने के लिए यदि कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए तो एच० जी० वेल्स की "शेप ऑफ थिंग्स टु कम" में की गई कल्पना भी उसकी अन्य कल्पनाओं की तरह सिद्ध हो सकती है जिसमे उसने अन्तिम युद्ध मे मानव के महाविनाश का दु:स्वप्न देखा था।

लगभग 93,000 पाकिस्तानी युद्धबन्दियों को दो से ढाई वर्ष तक नजरबंद रखने के बाद 1974 में ही वापस किया जा सका था। तदनुसार यह पुस्तक 1974 के अन्त तक लिखी जा चुकी थी। किन्तु कई व्यावहारिक कारणों से तत्काल प्रकाशित न हो सकी इनमे से एक युद्धबन्दी शिविरों से भारत की पूर्वोत्तर सीमा पर मेरा स्थानांतरण भी है। जहां मुझे तीन वर्ष से भी अधिक समय तक अत्यधिक व्यस्त रहना पडा। महीने मे पन्द्रह से बीस दिन तो यायावर की तरह दौरे पर ही रहना पड़ता था। चार वर्ष के इस लम्बे अन्तराल को देखते हुए इस पुस्तक को असामयिक

कहा जा सकता है। पर आज भी भारतीय पाठक इसमे वर्णित तथ्यो से अनभिज्ञ हैं। अतः पाठको से मेरा अनुरोध है कि युद्धवन्दियों की समस्याओं से संबंधित तथ्यो को सामयिकता की परिधि मे न रखकर उन्हे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे ही देखा जाए।

इस पुस्तक के लेखन मे मेरे जिन मित्रों, शिविरों मे नियुक्त भारतीय सैनिक अधिकारियों और शुभचिंतकों की प्रेरणा, प्रोत्साहन, सहयोग, आशीर्वाद और शुभकामनाएं मेरे साथ रही उनके प्रति कृतज्ञता और आभार प्रकट न करू तो यह धृष्टता होगी। विशेषतया सर्वश्री धर्मपाल अकेला, (अब स्व०) जौहर अदीब, मोहम्मद सज्जाद रिजवी और भाई रामपालसिंह का उल्लेख अनिवार्य है।

अन्त मे एक बात और कह दूं···प्रस्तुत पुस्तक मे व्यक्त विचार, साक्ष्य और एतदर्थ निकाले गए सभी निष्कर्ष मेरे अपने हैं, और इसमें व्यक्त विचारो का संबंध भारत सरकार से किंचित भी नही है। मैं प्रसन्न हू कि मेरी मातृ-भाषा, मेरी राष्ट्रभाषा मे युद्धबंदियों पर लिखी गई विश्व भर मे यही एकमात्र पुस्तक है।···जयहिन्द।

लेखा अधिकारी — **बीरसिंह**
रक्षा लेखा नियन्त्रक
पश्चिमी कमान
चण्डीगढ़

युद्धवन्दी और जेनेवा अभिसमय

"युद्ध का सम्बन्ध राज्यो से होता है न कि युद्धवन्दियों से जो दुर्घटना वश ही सघर्ष में फंस जाते हैं"—रूसो।

युद्धरत दो पक्षो की विजय-पराजय क्षति और प्राप्ति का लेखा-जोखा जहां युद्ध काल में और युद्धोपरांत विश्व भर के समाचार पत्रों मे प्रमुखतया छपता है वही युद्धवन्दियों के समाचार भी मुखपृष्ठों पर स्थान पाते हैं। युद्धवन्दी मात्र अपने देश और स्वजनों को ही नहीं वरन् विश्व की सभी मानवतावादी संस्थाओं एवं व्यक्तियो के लिए चिन्ता का कारण होते हैं। वास्तव मे युद्धवन्दी वे अभागे सैनिक होते हैं जो अपनी मातृभूमि की रक्षा करते करते असहाय हो शत्रु शक्ति के हाथो मे पड़ जाते हैं।

प्राचीन काल मे वन्दी बनाने का प्रयोजन राजनीतिक होता था। अत राजाओं अथवा सेनापतियों को ही वन्दी बनाकर राजनीतिक सौदेबाजी की जाती थी। सिकन्दर ने पुरू को ही बन्दी बनाया था न कि उसकी सेना को। मध्यकाल में सैनिकों को बडे पैमाने पर वन्दी न बनाकर उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाता था। राजा अथवा सेनापति के वन्दी बनाए जाने पर भी यदि विजयी पक्ष के हितो के अनुसार संधि न होती तो उनकी हत्या कर दी जाती या जीवन भर सड़ने के लिए कारागार में डाल दिया जाता था। मोहम्मद गौरी पृथ्वीराज चौहान की आखे निकलवाने के पश्चात भी उसे अपने साथ ले गया था। आज के युग में सैनिको को वन्दी बनाकर

लम्बी अवधि तक हिरासत मे रखने का उद्देश्य राजनीतिक होता है। इसके अतिरिक्त शत्रु की सैन्य शक्ति को कम करने य। युद्धबन्दियों का "ब्रेनवाश" कर उनकी विचारधारा का अपने सिद्धान्तो के अनुसार परिवर्तन करने के उद्देश्य से भी उन्हे हिरासत में रखा जाता है। युद्ध के इन अभागों को हिरासत मे रखना या मुक्त कर उनके स्वदेश लौटा देना प्रतिबंधक देश के अपने हितो की पूर्ति पर निर्भर करता है। जब तक इन हितो की पूर्ति नही हो जाती, कई राजनीतिक दबाव होने के बावजूद भी, युद्धबन्दियो को मुक्त नही किया जाता।

युद्धबन्दियो की समस्या प्राचीन काल से ही मानवतावादी लोगो का ध्यान आकर्षित करती रही है। महाभारत में भीष्म पितामह कहते है— "नि शस्त्र सैनिक पर आक्रमण न किया जाए, जिस सैनिक का शस्त्र टूट गया हो उस पर अथवा सवारी के पशु अर्थात हाथी-घोड़े पर वार न किया जाए, तथा ठीक होने पर उसे पूर्ण सम्मान के साथ विदा दी जाए।" किन्तु मध्य काल मे युद्धबन्दियों के प्रति व्यवहार सम्बन्धी किसी आचार सहिता का उल्लेख नही मिलता। उस काल में युद्धबन्दियो को अपराधी समझ उनके साथ तदनुसार ही व्यवहार किया जाता था। यह स्थिति सत्तरहवीं शती तक रही। सभ्यता के विकास के साथ-साथ विश्व के देश एक-दूसरे के निकट आए। बर्बर एवं अमानवीय प्रवृतियो की भर्त्सना की जाने लगी। क्षेत्रीय देश अपनी समस्याओ को सुलझाने एव आपसी सम्बन्धो को बढावा देने के लिए अनेक समझौते एव सधियां करने लगे। फलस्वरूप युद्ध-बन्दियो का "अपराधी" विशेषण समाप्त हुआ। उन्हें अपराधी न समझ उनके साथ मानवीय व्यवहार पर जोर दिया जाने लगा। ब्रूसल्स मे (1874) में कई देशो का सम्मेलन हुआ जिसमे युद्धबन्दियो की समस्या पर प्रथम बार विचार किया गया और तत्संबंधी कुछ नियमों की स्थापना हुई। उसके पश्चात् 29 जुलाई 1899 को हेग मे हुए एक सम्मेलन में "भूमि पर युद्ध के नियम व प्रथाओ से सम्बंधित हेग अभिसमय" की स्थापना हुई। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया इन नियमो को परिवर्द्धित एवं विस्तृत करने की आवश्यकता महसूस की जाती रही। 1907 में हेग में ही हुए एक और सम्मेलन में पहले अभिसमय को संशोधित किया गया। उसके

बाद का काल प्रथम विश्व युद्ध का काल है। इस युद्ध में भाग लेने वाले देशों ने युद्ध की भीषणताओं को भोगा। युद्धबन्दियों की समस्या ने और भी व्यापक रूप लिया। फलस्वरूप 1929 में जेनेवा में एक सम्मेलन हुआ जिसमे तब तक स्थापित नियमों पर विचार-विमर्श कर उन्हें और भी विस्तृत एवं प्रभावशाली किया गया जिसे अनेक देशों की सहमति मिली।

1939 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ जो 1945 तक चला। इतने बड़े पैमाने पर इससे पहले कभी युद्ध नहीं हुआ था। इसमें ससार के विभिन्न देशों के असंख्य सैनिक बन्दी बनाए गए। संघर्षरत राष्ट्रो मे अनेक स्थानों पर युद्धबन्दी शिविरों की स्थापना हुई। नई-नई समस्याओं का जन्म हुआ। युद्धबन्दियों को यंत्रणा देने एवं उनके साथ दुर्व्यवहार की असंख्य घटनाएं रोज ही घटने लगी। उनके प्राण सस्ते हो गए। युद्ध के बाद 1949 में अगस्त तक जेनेवा सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में विश्व के अनेक देशों ने भाग लिया। युद्ध ग्रस्त लोगों की समस्याओं के समाधान एवं उनके बन्दी बनाए जाने की स्थिति मे उनके प्रति व्यवहार सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय नियमो की स्थापना करने के उद्देश्य से 12 अगस्त, 1949 को एक समझौता हुआ। इस समझौते की शर्तों को "जेनेवा अभिसमय" का नाम दिया गया जिस पर हस्ताक्षर कर भाग लेने वाले देशों ने सहमति से इन शर्तों का पालन करना स्वीकार कर लिया। उसके पश्चात भी संसार के विभिन्न भागों में साम्राज्यवाद की शृंखलाओं को तोड़कर अनेक देश स्वतन्त्र हुए। इन देशों ने भी "जेनेवा अभिसमय" को मान्यता दी एवं उसके सदस्य बन गए। आज विश्व के डेढ़ सौ से अधिक देश "जेनेवा अभिसमय" को मान्यता दे चुके हैं। किसी भी संघर्ष के फलस्वरूप यदि ये देश शत्रु राष्ट्र के सैनिकों को युद्धबन्दी बना कर नजरबन्द रखते है तो उनके प्रति व्यवहार में इन देशों को प्रतिबंधक देश की हैसियत से इन "जेनेवा अभिसमय" का पालन करना होता है। इन अभिसमयों को निम्न चार भागों में विभाजित किया गया है :—

(अ) रणक्षेत्र में सशस्त्र सेनाओं के घायलों और बीमारों की स्थिति में सुधार के लिए 12 अगस्त, 1949 का जेनेवा अभिसमय,

(ब) नौसेना के घायलों, बीमारों और संकट ग्रस्त समुद्री जहाज के

सदस्यो की स्थिति में सुधार के लिए 12 अगस्त, 1949 का जेनेवा अभिसमय,

(स) युद्धवन्दियों के प्रति व्यवहार संबंधी 12 अगस्त, 1949 का जेनेवा अभिसमय,

(द) युद्ध काल मे असैनिक नागरिकों की सुरक्षा सवन्धी 12 अगस्त, 1949 का जेनेवा अभिसमय,

भारत ने भी जेनेवा सम्मेलन में भाग लिया था और "जेनेवा अभिसमयो" को मान्यता दे इन पर हस्ताक्षर कर इनके पालन को सहमति दी थी। यही नही भारत ने 12 मार्च, 1960 को अधिनियम—6 के द्वारा भारतीय सविधान मे भी "जेनेवा अभिसमय" का प्रावधान कर दिया। इस अधिनियम का नाम "1960 का जेनेवा अभिसमय अधिनियम" रखा गया है।

युद्धवन्दियों के प्रति व्यवहार सम्बन्धी जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद — 4 मे युद्धवन्दियों की परिभाषा इस प्रकार की गई है —

"इस अभिसमय के अनुसार निम्नलिखित श्रेणियों में से किसी भी एक श्रेणी के वे व्यक्ति युद्धबन्दी होते हैं जो शत्रु शक्ति के हाथो मे पड़ गए है—

1. सघर्षरत किसी पक्ष की सशस्त्र सेना, सहायक सेना अथवा स्वयं सेवक सेना के सदस्य जो सशस्त्र सेना के भाग है —
2. सगठित प्रतिरोधी आन्दोलन के सदस्यो सहित अन्य सहायक और स्वय सेवक सेनाओ के सदस्य जो सघर्षरत किसी एक पक्ष से सम्बन्धित है और अपने क्षेत्र के अन्दर या वाहर सक्रिय हैं, चाहे उस क्षेत्र पर शत्रु का अधिकार ही क्यों न हो, बशर्ते कि सहायक, स्वय सेवक सेनाओं—और संगठित प्रतिरोधी आन्दोलन के वे सदस्य जो नीचे लिखी शर्तों को पूरा करते हैं—

(i) उनका एक उत्तरादायी नेता हो जिसके आदेशों का वे पालन करते है,

(ii) दूर से पहचाने जाने वाला कोई निशान काम में लाते हों,

(iii) अपने साथ खुले आम शस्त्र रखते हों,

(iv) युद्ध के नियम और प्रथाओं का पालन करते हुए संघर्ष में सक्रिय हों,

3. स्थायी सशस्त्र सेनाओं के वे सदस्य जो प्रतिबन्धक शक्ति द्वारा अमान्य किसी सरकार अथवा प्रभुत्व के प्रति राजभक्ति स्वीकारते हों,
4. वे सब व्यक्ति जो सशस्त्र सेनाओं के सदस्य न होते हुए भी उनके साथ रहते हों जैसे सैनिक वायुयान के चालक समूह के असैनिक सदस्य, युद्ध संवाददाता, आपूर्ति ठेकेदार, सशस्त्र सेनाओं की सेवा में रत श्रमिक अथवा ऐसे व्यक्ति सशस्त्र सेनाओ का कल्याण जिनके उत्तरदायित्व में हो बशर्ते कि वे सशस्त्र सेना की सहमति से उसके साथ हैं जो उन्हे अधिकार पत्र भी देती है,
5. वायुयान चालक समूह के सदस्य, पायलेट और व्यापारी जहाज के प्रशिक्षार्थी, असैनिक वायुयान के चालक समूह के सदस्य जो संघर्षरत किसी एक पक्ष से सबद्ध हों और जिन्हे किसी अन्तर्राष्ट्रीय कानून के तहत अधिक सुविधाएं उपलब्ध न हों,
6. उस क्षेत्र के निवासी जिस पर शत्रु का अधिकार न हो, जो शत्रु के पहुंचने पर आक्रमणकारी सेना को रोकने के लिए स्वेच्छा से शस्त्र उठा लेते है, जिन्हें स्वयं को स्थायी सेना के रूप मे संगठित कर पाने को समय ही न मिला हो, बशर्ते कि वे अपने साथ खुले आम शस्त्र रखते हो तथा युद्ध के नियम और प्रथाओं का आदर करते हों।"

संघर्ष में बन्दी बनाए जाने या आत्म समर्पण करने के समय से प्रत्यावर्तित हो स्वदेश लौटने के समय तक युद्धबन्दियों पर जेनेवा अभिसमय लागू होते हैं। जहां इन अभिसमयों का अक्षरशः पालन कर इनके तहत युद्ध बन्दियों के प्रति व्यवहार करना अभिरक्षक अथवा प्रतिबंधक देश का नैतिक कर्त्तव्य है वहीं युद्धबन्दियों को भी सैनिकोचित अनुशासन में रहकर इस अभिसमय के अनुच्छेदों का पालन करना होता है। प्रतिबंधक देश से अपेक्षा की जाती है कि वह युद्धबन्दियों की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर उनकी जीवन रक्षा करें और अपने यहां प्रचलित कानून के विरुद्ध उन्हें सजा न दें।

आत्म समर्पण करने अथवा बन्दी बना लिए जाने के बाद युद्धबन्दियो को रणक्षेत्र अथवा युद्ध में जीते गए क्षेत्र से तुरन्त हटाकर सुरक्षित स्थान पर भेजा जाना चाहिए जहां उन पर किसी प्रकार का आक्रमण न हो सके। प्रतिबधक देश चाहे तो इन युद्धबन्दियो को अपने यहां सुरक्षित स्थान पर बने शिविरो मे रख सकता है। यदि वह देश ऐसी स्थिति मे नही है तो अपने पक्षधर किसी अन्य देश को अभिरक्षक देश मानकर उसकी सुरक्षा मे सौंप सकता है। आज जब सचार एव यातायात के साधन इतने विकसित हो गए है युद्धबन्दियों को युद्ध क्षेत्र से हटा शिविरो में स्थानान्तरण कर देना कोई बड़ी समस्या नही रह गई हैं। विगत मे ऐसे भी उदाहरण मिल जाएगे जब इन अभागो को उबड़-खाबड़ रास्तो पर चार-चार सौ मील तक पैदल पशुओ की तरह हांककर ले जाया जाता था। भूख,थकावट और अनेक रोगो मे ग्रस्त हो कितने ही लोग तो गन्तव्य स्थान पर पहुंचने से पहले रास्ते मे ही दम तोड देते थे। अमेरिका ने विश्व युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन तथा द्वितीय विश्व युद्ध मे फ्रांस, बेलिजयम, लग्जेमबर्ग एवं आस्ट्रेलिया को युद्धबन्दियों का स्थानान्तरण किया था। इसी प्रकार जर्मनी ने भी अफ्रीकी संघर्ष मे पकडे गए अनेक युद्धबन्दी इटली भेजे थे। जेनेवा अभिसमय भी इस प्रकार के स्थानान्तरण की अनुमति देता है।

प्रतिबंधक अथवा अभिरक्षक देशों से अपनी हिरासत में रखे युद्धबन्दियो के प्रति मानवीय व्यवहार की अपेक्षा की गई है। हिंसा, अपमान, भय, धमकी, प्रतिशोध एव जन उत्सुकता पर प्रतिबंध हैं। किसी भी ऐसे कार्य जिससे युद्धबन्दी की मृत्यु का भय हो अथवा स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़े, उनके अंग भग और जिनका कोई औचित्य नहीं उन सभी वैज्ञानिक और चिकित्सा सम्बन्धी प्रयोगो पर रोक है। उनके साथ पद, लिंग, स्वास्थ्य आयु एवं व्यावसायिक योग्यता को ध्यान मे रखते हुए उनकी जाति, धर्म, राष्ट्रीयता, राजनैतिक विचारधारा तथा ऐसे ही मापदण्डों पर आधारित बिना किसी भेद-भाव के समान व्यवहार करना चाहिए।

स्थायी शिविरो में स्थानान्तरण के पश्चात सुरक्षा की दृष्टि से शिविर अधिकारी को युद्धबन्दियों से उनकी मूल्यवान वस्तुएं, कपड़े, घड़ी, आभूषण रेडियो, शस्त्र एवं मुद्रा आदि लेकर अपने पास रख लेना चाहिए। इसके

बदले उन्हें व्यक्तिगत रसीद दी जानी चाहिए । जिसके आधार पर प्रत्यावर्तन के समय उनका सामान उन्हे वापस किया जा सके । ऐसा करते समय युद्धवन्दियों से वे वस्तुए नही ली जानी चाहिए जिनका उनके लिए कोई भावनात्मक महत्व हो जैसे विवाह की अंगूठी, पद-चिन्ह अथवा वीरता प्रदर्शन के लिए मिले तमगे । नजरबन्दी की अवधि में यदि युद्धवन्दी का एक शिविर से दूसरे शिविर में स्थानान्तरण हो तो उसके साथ ही उसके सामान को भी भेजा जाए । इस प्रक्रिया मे युद्धबन्दियो का भी यह नैतिक कर्तव्य हैं कि आदेश मिलने पर अपने मूल्यवान सामान को वे शिविर अधिकारियों को सौप दें ।

शिविरों का प्रबन्ध अभिरक्षक अथवा प्रतिवंधक देश, अन्तर्राष्ट्रीय रेड क्रास की समिति जैसी मानवतावादी संस्थाएं, तटस्थ राष्ट्र जिस पर दोनों शत्रु देशो का विश्वास हो और युद्धवन्दियो के प्रतिनिधि सम्मिलित रूप से कर सकते है । शिविरो में युद्धवन्दियो के आवास की व्यवस्था वैसी ही होनी चाहिए जैसी अभिरक्षक देश उस स्थान एव जलवायु विशेष मे अपने सैनिकों के लिए करता है । उनके आवास आग और सीलन आदि से सुरक्षित हो जिनमें प्रकाश और पानी की उचित एवं पर्याप्त व्यवस्था हों । शिविर मे सोने का स्थान, स्नानागार, संडास, रसोई घर, मनोरंजन क्लब एव क्रीडा स्थल आदि की उचित व्यवस्था होनी चाहिए । स्त्रियो को पुरुषो से अलग रखा जाए । शिविर प्रबन्ध करने मे युद्धबन्दियो की आदतो प्रथाओं तथा मान्यताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए । शिविरो में सफाई एव स्वच्छता की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए जिससे रोग न फैले और युद्धवन्दियों के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव न पड़े । बीमार युद्धबन्दियो की चिकित्सा एवं औषधि का उचित प्रबन्ध होना चाहिए । इसके लिए युद्धबन्दियों मे से ही सैनिक चिकित्सकों एवं अन्य व्यक्तियो की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है । जहा युद्धबन्दियों में इस प्रकार के चिकित्सक उपलब्ध न हों, वहां अभिरक्षक देश को अपने सैनिक चिकित्सक अधिकारियों का प्रबन्ध करना चाहिए । जहां तक हो सकें दोनो ओर के चिकित्सक मिलकर युद्धबन्दियों की चिकित्सा का प्रबन्ध करें और समय समय पर उनका वैसा ही निरीक्षण करें जैसा अभिरक्षक देश अपने सैनिकों का करता

है। आवश्यक हो तो मानवतावादी सस्थाओं की ओर से भी चिकित्सक दल शिविर में नजरबन्द युद्धबंदियो का निरीक्षण कर सकता है।

बन्दी मानव आत्मा के निकट हो ईश्वर, देश और स्वयं के प्रति अधिक जागरूक होता है। ऐसे में उसकी धार्मिक प्रवृत्तिया जागती हैं। जेनेवा अभिसमय मे भी युद्धबन्दियों को उनके धर्म से संबंधित सभी सुविधाओं का प्रावधान है जैसे पूजा के स्थान और सामग्री की समुचित व्यवस्था धर्म-साहित्य एव समय समय पर प्रचारकों के प्रवचन का प्रबंध, पुजारी पुरोहित व धर्म-शिक्षको की व्यवस्था (युद्धबन्दियों मे से ही), धार्मिक उत्सव एव त्यौहारों को मनाने की छूट तथा ऐसे अवसरों पर दैनिक कार्य व श्रम मे अवकाश आदि। अभिरक्षक देश द्वारा उनकी धार्मिक भावना को ठेस पहुचाने वाले सभी कर्मों पर रोक है। युद्धबन्दियों के धर्म सम्बन्धी पुजारी, पुरोहित धर्म शिक्षक आदि का उनमें से ही उपलब्ध न होने पर यद्यपि अभिरक्षक देश द्वारा व्यवस्था करने का भी प्रावधान जेनेवा अभिसमय मे है, किन्तु कभी कभी व्यावहारिक कठिनाईयों के कारण यह सभव नहीं हो पाता। अरब देश, पाकिस्तान, ईरान, नेपाल और इजराइल आदि धर्म-प्रधान देश है जहा दूसरे धर्म की सभी सुविधाएं विधर्मी युद्धबन्दियों के लिए उपलब्ध करने में कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। इससे भी बदतर हालत साम्यवादी देशो में होती हैं जहा धर्म का कोई महत्व नही है। रूस और चीन को युद्धबन्दियो के लिए धर्म सबंधी सभी सुविधाओं का प्रबंध कराने के लिए बाध्य नही किया जा सकता। भारत जैसे धर्म-निरपेक्ष देश मे किसी भी धर्म के अनुयायी युद्धबन्दियो को सभी धार्मिक सुविधाए उपलब्ध कराने मे कठिनाई नहीं होती किन्तु विश्व मे इस प्रकार के देश है कितने ? इसके अतिरिक्त युद्धबन्दियों द्वारा अपने राष्ट्रीय अवकाश मनाने की छूट का प्रावधान भी जेनेवा अभिसमय में है।

शिविरों में युद्धबन्दियो के अध्ययन के लिए पुस्तकालय एवं वाचनालय और मनोरंजन हेतु अन्य साधनों की व्यवस्था होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त क्रीडा एवंम् खेल के उपकरण भी उपलब्ध कराये जाएं। जिससे वे अधिकाधिक समय व्यस्त रहकर मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ रह सकें। इससे जहां युद्धबन्दी व्यक्तिगत चिन्ता तथा मानसिक विकार से

बचते हैं वहां प्रतिबन्धक देश के सामने, खाली समय में किसी विद्रोह आदि की योजना बनाकर, कोई समस्या भी उत्पन्न नहीं करते। शिविरों में जेनेवा अभिसमय की प्रतियां युद्धबन्दियों की भाषा में एक ऐसे स्थान पर रखी जाएं जहां वह सभी युद्धबन्दियों को पढ़ने के लिए आसानी से उपलब्ध हो सके। ऐसा करने से वे अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों के प्रति सचेत रहते हैं।

युद्धबन्दियों के जीवन में बाह्य जगत से आने वाले पत्र एवं पार्सलों का बड़ा महत्व होता है। इससे उसकी मानसिक पीड़ा कम होती है और ये ही उसके बाह्य जगत से सम्बन्धों के मुख्य स्रोत होते हैं। बन्दी बनाए जाने पर युद्धबन्दी सर्वप्रथम एक "कैपचर कार्ड" लिखकर अपने सगे सम्बन्धियों को सूचना देता है तथा उन्हें, अपना पता देकर उनसे उत्तर की प्रतीक्षा करता है। जिससे उसके साथ पत्र-व्यवहार हो सके। प्रत्येक माह वह अपने मित्रों व स्वजनों को दो से छ. तक पत्र लिख सकता है जिससे वह मानसिक रूप में उनसे जुड़ा रहता है। युद्धबन्दियों की आने-जाने वाली डाक को सुरक्षा की दृष्टि से सैंसर करने का अधिकार अभिरक्षक देश को होता है। अतः उन्हें चाहिए कि वे ऐसी कोई आपत्तिजनक बात अपने पत्रों में न लिखें जिससे उसकी डाक ठीक पते पर पहुंचाने में अभिरक्षक देश को कोई कठिनाई हो। इसी प्रकार की सलाह वह अपने मित्रों व स्वजनों को दे सकता है। आपत्तिजनक अनेक पत्र लिखकर क्या लाभ जब वे अपने गन्तव्य स्थान तक ही न पहुंच पाए। युद्धबन्दियों के पास शुल्क रहित कपड़े, पुस्तकें, खाद्य सामग्री तथा अन्य सामानों के पार्सल सामूहिक अथवा व्यक्तिगत रूप में, आने का प्रावधान भी जेनेवा अभिसमय में है। इन पार्सलों को युद्धबन्दियों के मित्र, स्वजन, उनका देश और मानवतावादी संस्थाएं भेजती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति अथवा तटस्थ राष्ट्रों और अन्य मानवतावादी संस्थाओं के प्रतिनिधियों के द्वारा युद्धबन्दी बाह्य जगत से सम्बन्ध बनाये रखते हैं। इन प्रतिनिधियों के समक्ष ही वे अपनी उन मांगों को रख सकते हैं जिन्हें अभिरक्षक देश पूरी नहीं कर सकता है। इसके अतिरिक्त वे इन प्रतिनिधियों के द्वारा ही अपने घरों को सन्देश भिजवाते हैं अथवा घरों से अपने लिए सन्देश मंगवाते हैं। किन्तु

जेनेवा अभिसमयों का पालन सभी देश समान रूप से नहीं करते। फेहर्लिंग ने अपनी पुस्तक "वन ग्रेट प्रीजन" में यह उद्घाटन किया है कि द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान रूस ने युद्धबन्दियों को पत्राचार की सुविधा नहीं दी थी। भारत-चीन संघर्ष के फलस्वरूप भारतीय सैनिकों को बन्दी बनाकर रखने पर चीन ने उन्हें कैंपचर कार्ड तक नहीं लिखने दिए थे। कोरिया ने तो अन्तर्राष्ट्रीय रेड-क्रास समिति के प्रतिनिधियों को भी शिविरों में प्रवेश नहीं करने दिया था।

पहले युद्धबन्दियों को कठिन परिस्थितियों में रखकर उन्हें नाना प्रकार की मानसिक व शारीरिक यत्रणाएं दी जाती थीं। उनसे तब तक काम कराया जाता था जब तक वे आगे और कार्य करने के योग्य नहीं रह जाते थे। भूख, बीमारी, कमजोरी, थकावट तथा बन्दी जीवन की यातनाओं से पीड़ित वे धीरे-धीरे मृत्यु के ग्रास बनते जाते थे। प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान जर्मनी ने अंग्रेज युद्धबन्दियों को बदबू और गन्दगी भरे कूड़ा-करकट को हटाने मे लगाया था।

फ्रांसिसी युद्धबन्दियो से दलदल में काम कराया जाता था। वार क्राईम्स रिपोर्ट देखने से पता चलता है कि "दशाव" नामक शिविर में युद्धबन्दियो से प्रति दिन बारह घंटे काम कराया जाता था। इस प्रकार अन्य अनिवार्य कार्यों के सयय को मिलाकर वे प्रतिदिन सतरह-अठारह घंटे श्रम कार्य करते थे। यही नही अंग्रेजों ने युद्ध क्षेत्र से "माईन्स"—हटवाने जैसे भयकर कार्य युद्धबन्दियो से करवाए। जर्मनो की नृशंसता से कौन अनभिज्ञ है। वे युद्धबन्दियो को सामूहिक रूप से तहखानों मे बन्द कर ऊपर से ताला लगा देते थे। जहां युद्धबन्दी भूख से तड़प-तड़पकर अन्ततः प्राण छोड देते थे। जेनेवा अभिसमयो के उद्भव से युद्धबन्दियों की समस्याएं कुछ कम हुई हैं। यद्यपि युद्धवन्दियों मे श्रम कार्य कराने की जेनेवा अभिसमय में कोई मनाही नही है, तथापि उसके लिए कुछ नियम निर्धारित अवश्य ही कर दिए गए हैं। श्रम कार्य मे लगाते समय अब युद्धबन्दियो की आयु, लिंग, पद, शारीरिक क्षमता एवं समर्थता को ध्यान मे रखा जाता है। जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद-50 के तहत युद्धबन्दियों को केवल नीचे लिखे कार्यों में लगाया जा सकता है।

1. कृषि,
2. कच्चे माल के निस्सारण या उत्पादन सम्बन्धी उद्योग, निर्माण उद्योग यंत्र एवं धातु शोधन के सिवाय वे सार्वजनिक एवं निर्माण कार्य जिनका कोई सैनिक उद्देश्य अथवा महत्व न हो,
3. ऐसे सामान का रख-रखाव व परिवहन जिसका कोई सैनिक उद्देश्य अथवा महत्व न हो,
4. वाणिज्य व्यापार, कला, दस्तकारी,
5. घरेलू सेवा,
6. सार्वजनिक उपयोगिता की सेवाएं जिनका कोई सैनिक उद्देश्य व महत्व न हो।

युद्धवन्दियों को उन कार्यों पर नहीं लगाया जाएगा जिनसे उनके जीवन को खतरा हो, जो उनके सम्मान के विरुद्ध हो अथवा जिस कार्य पर प्रतिबधक देश अपने सैनिकों को न लगाता हो। श्रम करने की वे ही शर्तें युद्धबन्दियो पर भी लागू होंगी जो उस स्थान पर, उस जलवायु में, उस प्रकार का श्रम करने वाले प्रतिबंधक देश के श्रमिकों पर लागू होती हैं। श्रम करने की अवधि भी उस देश के श्रमिकों पर लागू होने वाली ही होनी चाहिए। जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद-54 के अनुसार प्रतिबंधक देश युद्धवन्दियों को श्रम के बदले कुछ पारिश्रमिक भी देगा। किन्तु कितने ही देश इन पवित्र अन्तर्राष्ट्रीय नियमों को ताक पर रखकर युद्धबन्दियों से मनमाना श्रम कराते हैं। रूसी शिविरों में कृषि फार्मों और शिविरों अधिकारियों के बीच युद्धबन्दियों को लेकर दास प्रथा की तरह सौदेबाजी होती थी। कभी-कभी इन समस्याओं का व्यावहारिक रूप होता है। जिनका समाधान अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का पालन करने के वावजूद भी अभिरक्षक देश नहीं कर पाते। उदाहरणस्वरूप यदि पश्चिमी देशों के सैनिक किसी एशियाई देश के युद्धबन्दी बन जाएगें तो वे कभी संतुष्ट नहीं होंगे। कारण है पश्चिमी देशों में एशियाई देशों की तुलना में जीवन स्तर एवं श्रमिक दरों का बहुत ऊंचा होना। और चीन जैसे देश में तो युद्ध-वन्दियों को श्रम के बदले कुछ मिलेगा इसकी आशा ही नहीं करनी चाहिए। किसी कार्य को करने के विभिन्न देशों के साधन व तरीके भी तो अलग-

अलग होते है। अत: जहा तक भी हो सके युद्धवन्दियो से उनकी इच्छा के विरुद्ध श्रम न कराया जाए।

जेनेवा अभिसमय मे युद्धवन्दियों को उनके पद के अनुसार मासिक पेशगी वेतन देने का भी प्रावधान है जिससे वे दैनिक कार्य मे आने वाली वे वस्तुए जुटा सके जो उन्हे जेनेवा अभिसमय के तहत नही मिल पाती। इसके अतिरिक्त युद्धवन्दी आवश्यकतानुसार अपने स्वजनो एव मित्रो से भी धन प्राप्त कर सकते हैं बशर्ते कि अभिरक्षक देश को वह मान्य हो।

यदि युद्धबन्दी का स्वदेश उसकी नजरबन्दी की अवधि मे उसकी पदोन्नति के आदेश प्रकाशित करता है तो तदनुसार शिविर में भी उसके नए पद के अनुसार उसे रखा जायेगा। साथ ही उसके मासिक पेशगी वेतन मे भी बढोतरी होगी। किसी भी युद्धबन्दी पर नियमित रूप से मुकदमा चलाये बिना उसे सजा अथवा मृत्यु दण्ड नही दिया जा सकता। अपराधी करार दिये जाने पर प्रत्येक युद्धबन्दी को अपनी पैरवी करने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। जहा तक युद्धबन्दियो से पूछताछ का प्रश्न है वे केवल अपना पहला नाम, आयु, पद और सेना मे नम्बर बताएंगे। इससे अधिक कुछ बताने के लिए उनको बाध्य नही किया जा सकता। किन्तु विरले प्रतिबन्धक देश ही इस नियम का पालन कर पाते है। अन्यथा इस प्रकार के अनेको उदाहरण मिल जाएगे जब युद्धबन्दियों को अमानवीय यातनाएं देकर उनके देश के सैनिक रहस्य उगलवाने के प्रयत्न किए गए या "ब्रेनवाश" कर उनकी धार्मिक, राजनैतिक व नैतिक विचार धारा को बदलने के प्रयास किये गये। 1962 के युद्ध के पश्चात चीन ने भारतीय युद्धवन्दियों पर सभी प्रकार के हथकडे अपनाए थे।

नजरबन्दी की अवधि मे यदि किसी युद्धबन्दी की मृत्यु हो जाती है तो उसके देश एव धर्म में प्रचलित प्रथाओं के अनुसार ही सैनिकोचित सम्मान देकर उसका अन्तिम संस्कार किया जाना चाहिए। उनकी कब्र एव समाधियो की देख-रेख का उत्तर दायित्व प्रतिबन्धक या अभिरक्षक देश पर होता है। यदि आवश्यक हो तो अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के प्रतिनिधि इन कब्रो व समाधियों का निरीक्षण भी कर सकते हैं। यदि मरने से पहले कोई युद्धबन्दी अपनी वसीयत आदि लिखना चाहें तो उसकी समुचित

व्यवस्था का प्रावधान भी जेनेवा अभिसमय में है।

किन परिस्थितियों में प्रत्यावर्तन होना चाहिए तथा प्रत्यावर्तन के समय प्रतिबन्धक देश के क्या कर्तव्य हैं। इसकी झलक भी जेनेवा अभिसमय मे मिलेगी। घायल एवं बीमार सैनिको की अदला-बदली मे कुछ कठिनाई नहीं होती क्योंकि वे सक्रिय संघर्ष में भाग तो ले नही सकते, दूसरे वे प्रतिबंधक देश पर एक भार मात्र होते है। हालांकि यह भी डर रहता है कि स्वदेश लौटने पर उनका प्रदर्शन कर प्रतिबंधक देश के विरुद्ध प्रचार किया जाएगा। 1962 के युद्धोपरान्त चीन ने एक तरफा निर्णय लेकर भारतीय घायल व बीमार युद्धवन्दियो को वापस कर दिया था। जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद-109 के अनुसार जब युद्ध बहुत दिनों तक चले तो मानसिक विकार से बचाने के लिए उन युद्धवन्दियों को वापस कर देना चाहिए जिन्हें बन्दी जीवन व्यतीत करते अरसा गुजर गया हो। इनमें भी प्रौढ़ तथा परिवार-बच्चों वाले युद्धबन्दियों को प्राथमिकता देनी चाहिए। यद्यपि यह प्रतिबंधक देश की इच्छा और सुविधा पर निर्भर करता है। युद्धवन्दियों को पैरोल (युद्धवन्दी द्वारा किया गया पवित्र वायदा कि वह मुक्त होने पर संघर्ष में भाग नही लेगा) पर भी मुक्त किया जा सकता है। इस प्रकार की व्यवस्था युद्धबन्दी एव प्रबन्धक देश के बीच आपसी समझौते और समझ पर निर्भर करती है। लेकिन इस प्रकार के समझौते पर असंख्य युद्धवन्दियों को मुक्त नही किया जा सकता। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान यूरोपीय देश युद्धवन्दियों को पैरोल पर छोडते रहे हैं। फ्रांसीसी सरकार ने अपने क्षेत्र के अन्दर जर्मन युद्धबन्दी अधिकारियों को पैरोल पर छोड़ा था किन्तु जब परिणामस्वरूप जर्मनी ने ऐसा नहीं किया तो फ्रांसीसी सरकार को भी बाध्य हो यह सुविधा समाप्त करनी पड़ी थी। एक समय था जब युद्धवन्दियो को जुर्माना या जुर्माने के रूप में कुछ वस्तु प्राप्त करने के बाद ही मुक्त किया जाता था। यद्यपि यह प्रथा अठारहवीं शती के बाद प्रायः समाप्त हो गई थी किन्तु उसके बाद भी कुछ उदाहरण मिल जायेंगे जब प्रतिबन्धक देश ने इस प्रकार का व्यवहार किया। कास्ट्रो ने क्यूबा के विद्रोहियो को अमेरिकी पक्षधरों से लाखों की औषधि आदि लेकर ही मुक्त किया था। विश्व के इतिहास में ऐसे भी उदाहरण मिल

जाएगे जब प्रतिबधक देश को शत्रु के दबाव में आकर पीछे हटना पड़ा और पीछे हटने से पहले उसने अपनी हिरासत में रखे युद्धबन्दियो की सामूहिक हत्या कर दी। ऐसा भी हुआ जब युद्धवन्दियों के देश की सेना ने सघर्ष कर प्रतिबधक देश से युद्धबदियो को मुक्त कराया है।

जेनेवा अभिसमय मे तो प्रावधान है कि युद्ध की समाप्ति पर अभिरक्षक या प्रतिबधक देश शीघ्रातिशीघ्र उन्हें मुक्त कर युद्धबन्दियो को प्रत्यावर्तित कर दें ताकि वे अपने देश, अपने घरों को लौट सकें। लेकिन इस प्रकार की वापसी में कठिनाई तब होती है जब युद्धरत किसी पक्ष में एक से अधिक देश सहभागी हो। ऐसी स्थिति मे सभी देशो की सहमति के बिना युद्धबन्दियो का मुक्त होना सभव नहीं हो पाता। कभी-कभी बन्दियों का स्वदेश भी उनके प्रत्यावर्तन मे अडचन बन जाता है। 1971 के भारत-पाक युद्ध के बाद भारत को बाध्य हो पाकिस्तानी युद्धबन्दियों को दो वर्ष से भी अधिक समय तक अपनी हिरासत में रखना पडा था। बगला देश की सहमति के बिना भारत के लिए इन युद्धबदियों को मुक्त कर देना सभव नही था। उनकी रिहाई में पाकिस्तान भी कोई रुचि नही ले रहा था। क्योंकि उस समय पराजय के कारण वहां की बिगडी हुई आन्तरिक स्थिति में यदि 93,000 युद्धबन्दी भी तुरत वहा पहुंच जाते तो संभव था कि पाकिस्तान गृह-युद्ध की आग मे झुलस जाता या उसके और भी टुकड़े हो जाते। अतः जब तक सभी संबद्ध देशों की सहमति न हो युद्धबन्दी मुक्त नही हो पाते। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मित्र राष्ट्रो ने लगभग तीन लाख युद्धबन्दियो को लम्बे समय तक मुक्त नही किया था। कई राष्ट्रो ने तो उनमें से अनेको को अपने अर्थतत्र मे ही घुला-मिला लिया था। रूस के शिविरो मे जर्मन युद्धबन्दी वर्षो तक यत्रणा भोगते रहे हैं।

स्वतत्र रहने की आकाक्षा मानव में प्रकृति दत्त होती हैं। युद्धबदी भी इसके अपवाद नही होते। उनकी यह आकांक्षा जब जोर पकड़ती हैं और वे जब यह महसूस करते हैं कि बन्दी बनाकर उनके स्वाभिमान को ठेस पहुचाई जा रही हैं तो वे शिविरो से भाग निकलने का प्रयास करते हैं। ऐसा करने में उनकी यह भी धारणा होती हैं कि इस तरह भागकर अपनी सेनाओ अथवा देश में पहुचने पर उनका भव्य स्वागत किया जाएगा।

उनकी सराहना होगी। प्रतिवधक देश को जहा युद्धवन्दियों को रोक रखने का अधिकार होता है वहीं युद्धवन्दी जेल से भाग निकलना अपना नैतिक कर्तव्य समझते हैं। उनका यह पलायन तभी सफल माना जाता है जब वे प्रतिवधक अथवा अभिरक्षक देश की सीमा के पार हो जाए, अपनी अथवा अपने मित्र राष्ट्रो की सेना मे पहुंच जाए या अपने देश के किसी समुद्री जहाज पर सवार हो जाएं। इस प्रकार भाग निकलने के प्रयास में फिर से पकड़े गए युद्धवन्दियों पर सजा देने के उद्देश्य से शस्त्रो के प्रयोग पर प्रतिबंध है। इनके विरुद्ध केवल अनुशासनात्मक कार्यवाही की जा सकती है।

☐ ☐

युद्धबन्दियों के साथ : एक सुयोग

20 दिसम्बर, 1971···पटना···। गांधी मैदान के चारों ओर की नियोन बत्तियां एक-एक करके जल उठी हैं। सत्तरह दिन पहले ऐसी ही एक साझ को भारत के प्रतिरक्षा मंत्री श्री जगजीवन राम ने यहां एक विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए भारत-पाकिस्तान के बीच दिन-ब-दिन बढ़ते तनाव को शान्तिपूर्ण तरीकों से समाप्त करने एवं पूर्वी बंगाल से आए एक करोड़ शरणार्थियों को ससम्मान वापस उनके घर भेजने की बात कही थी। भाषण सुनकर मैं लौट रहा था। रास्ते में सुना कि पाकिस्तानी बमवर्षकों ने अपनी पूरी ताकत से भारत के लगभग एक दर्जन हवाई अड्डों पर जबरदस्त आक्रमण कर दिया है। जनरल याह्या खां की दस दिन के अन्दर-अन्दर मैदान-ए-जंग में आने की बात सच निकली। सच यही है कि "शान्ति का रथ उस मार्ग पर नहीं बढ़ सकता जिस पर तोपें बिछी हों।"···जब कुत्ते पूरे जोर से भौंक रहे हों तो उन्हें केवल अपनी इच्छा-शक्ति से ही चुप नहीं किया जा सकता।···अन्ततः पाकिस्तान ने एक और युद्ध भारत पर थोप दिया—

पूर्वी और पश्चिमी दोनों मोर्चों पर चौदह दिन तक युद्ध चला। भयावह। उत्तेजनापूर्ण। रात को सारा नगर निविड़ अंधकार में डूबा रहता। सड़कों से गुजरती मोटर गाड़ियों की रोशनी धीमी जलती। लोग खिड़की, दरवाजे व प्रकाश बंद किए कदमकुंआ के निकट अपने घरों में बैठे हैं और रेडियो पाकिस्तान से समाचार प्रसारित किए जा रहे हैं—"पाकिस्तान के बहादुर हवाबाजों ने आज हमला कर पटना के मुहल्ले कदम कुंआ को

तहस-नहसकर दिया है। सैकडों इमारतो से आग की लपटें उठती हुई देखी गई। आग अभी तक नहीं बुझाई जा सकी।" युद्ध की भयंकरता के बीच भी उस दिन इस सफेद झूठ पर बडी हंसी आई थी।

युद्ध — मुक्ति संग्राम, संसार भर की नजरें इस युद्ध पर लगी है। मुझे नसीमून आरा की यह पक्ति याद आती है—"ए आंधार कूल प्लावी कते क्षणा रबै, तिमिर हननेर गान आमार कंठे।"

चौदह दिन के सतत संघर्ष के पश्चात् ससार के मानचित्र पर एक नया नाम उभरा है—'बंगला देश'। एक और राष्ट्रीय ध्वज···हरे कपड़े के बीच लाल रंग का टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओ से घिरा एक निशान। उपमहाद्वीप के इतिहास ने करवट ली है। भूगोल बदल कर रह गया है। अब मेघना, पदमा और जमना पाकिस्तान मे नही बहेंगी। सुन्दर वन ने पाकिस्तान से मुंह मोड लिया है। यहा पाकिस्तान की मृत्यु हो चुकी है। विवेकानन्द, टैगोर, सुभाष और अरविन्द की भूमि पर फिर काजी नजरूल इस्लाम का 'मुसावात' का गीत गूजेगा। तोड़-फोड़, लूटपाट, बलात्कार, आतंक एवं नरमेध कल की बात हो गई। घायल सपने अब संगीनो पर नहीं [illegible] जाएंगे, अभिलापाएं अब बूटो की नोंक से नही कुचली जाएगी। [illegible] और अन्तिम सिपाही तक लड़ने का दम भरने वाले पाकिस्तानी [illegible] के हौंसले पस्त हो चुके हैं। लेकिन, वाशिंगटन और [illegible] वर्तमान कर्णधारों द्वारा बगाल की खाडी में सातवां बेड़ा [illegible] और सर्वहारा की क्राति का नारा लगाने वाले चीन के [illegible] किसी काम न आए!

···शहीदों का रुधिर काम आया···और मेरे [illegible] जो 'सोनार बागला' के आने वाले कल के लिए [illegible], जिनका स्मरण कर आखें नम हो जाती हैं, [illegible] है, उन शहीदो को शत शत प्रणाम!

आने वाले असंख्य पाकिस्तानी युद्धवन्दियों को शिविरों में रखा जाएगा। प्रत्येक युद्धवदी शिविर के साथ हमारे विभाग का एक प्रतिनिधि रहेगा। आपको भी इस कार्य के लिए चुन लिया गया है। यह रहा आपका पोस्टिंग आर्डर। 23 दिसम्बर को स्टेशन हेडक्वार्टर रामगढ़ में जाकर आपको रिपोर्ट करनी है।" सुनकर सैलानी मन को बडा अच्छा लगा था। अब मैं नई जगह पर जाऊगा। नए लोग, उनके रीति-रिवाज, रहन-सहन, भाषा, नई-नई जलवायु एव नई धरती के प्रति बचपन से ही मेरा लगाव रहा है। और इस बार तो दूसरे देश के नागरिकों के सान्निध्य में रहने का भी चाव था।

मैं नई जगह जा रहा हू सोचकर मन आनंद से भर उठा किन्तु साथ ही अपने नए कार्यक्षेत्र के प्रति थोडा भय भी लग रहा था। वहा सब कुछ नया होगा। वहा जाकर मुझे सबद्ध सैनिक अधिकारियो से संबंध स्थापित कर और परिस्थितियो का अध्ययन कर मुख्य कार्यालय को एक रिपोर्ट भेजनी है, जिससे आवश्यकतानुसार मेरे कार्यालय के लिए अतिरिक्त स्टाफ आदि भेजा जा सके। अनुभवी अधिकारियो ने बताया था—"अधिक से अधिक छ: महीने लगेंगे।" 'इण्डियन नेशन' के भवन के सामने आज भीड नहीं है, बिल्कुल भी। कोई नही रुक रहा यहां। तीन-चार दिन पहले सडक पार करने के लिए जगह नही मिलती थी। लोगों की भीड़ गरमा-गरम बहस मे डूबी कितनी ही झूठी-सच्ची युद्ध-कथाओं में उलझी, आखें गडाए दुमंजिले पर टगे बोर्ड को देखती रहती। जिस पर रोशनी के अक्षरों में समय-समय पर युद्ध के नवीनतम समाचार उभरा करते—"कराची हार्बर ब्लाक्ड, शाहजहा मीट्स वाटरी ग्रेव, गाजी डूम्ड, जेसोर फालन, पाकिस्तानीज रिट्रीट, खुलना फालन, गवर्नमेंट हाऊस बम्बार्डड, आदम मलिक रिजाइन्ड, इन्डियन फोर्सेज नियर ढाका, पाकिस्तानी जनरल सरेन्डर्ड—

मैं रेलवे स्टेशन जा रहा हूं बर्थ रिजर्व कराने। परसो जाना है..."

मैं नई जगह आ गया हू। लम्बा-चौड़ा सैनिक क्षेत्र बहुत बड़ी छावनी।

एक ओर दामोदर बह रही है। दूर तक फैले घने जंगल। एक दूसरी से गले मिलती सी पर्वत श्रेणियां। सड़क से लगा एक छोटा सा कस्बा। शान्त सुरम्य वातावरण, नगरों की भीड़ और कोलाहल से अपरिचित। अच्छा लगा। छावनी में जगह-जगह कितने ही पुराने बैरक हैं, कई नए मकान निर्माणाधीन हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय भी ध्रुव-राष्ट्रों के युद्धबन्दी यहां नजरबन्द थे।

दो तीन दिन बीत गए।

युद्धबन्दी अभी नहीं आए। तीन अलग-अलग स्थानो पर असख्य बैरक और आस-पास के क्षेत्र को कंटीले तारों की दो-दो पंक्तियों से घेरा जा रहा है। युद्धबन्दी शिविरो का निर्माण मैं अपनी आखों देख रहा हू। कंटीले तारों की पक्तियों के बाहर चारो ओर ऊचे-ऊचे टावर्स बन रहे हैं। उनके लिए पानी, बिजली, फर्नीचर एव भोजन आदि की व्यवस्था हो रही है। सभी कार्य युद्ध स्तर पर चल रहे है। रात को एक बजे तक असख्य श्रमिक पेट्रोमैक्स के प्रकाश में, हाड कंपा देने वाले शीत के बावजूद बल्लियां गाड़ रहे हैं, तार खींच रहे हैं। शिविरों के प्रशासन, प्रबन्ध एवं सुरक्षा के लिए प्रतिदिन भारतीय सेना की विभिन्न यूनिट्स से अनेक अधिकारी एव सैनिक आ रहे हैं। चारों ओर चहल-पहल है। योजनाएं बन रहीं हैं, कितने-कितने युद्धबन्दियों को कहा-कहां रखा जाएगा। प्रातः से गयी रात तक कितनी ही कान्फ्रेंस चलती है। सभी व्यस्त हैं। अपने-अपने कार्यक्षेत्र एवं उत्तरदायित्व को संभाल रहे हैं। जैसे किसी बहुत बड़े उत्सव का आयोजन हो रहा हो। मैं शिविर क्षेत्र के निकट बाह्य तार पंक्ति से लगभग 30 गज दूर दुमंजिले पर एक सहयोगी के साथ रह रहा हूं। पटना से यहां सर्दी अधिक है। और अब प्रतीक्षा है सिर्फ बन्दियो की।

—27 दिसम्बर, 1971। सुबह उठकर बरामदे में आया। सामने तार पक्ति के पीछे खाकी वर्दी वाले तीन चार जनो को धूप सेंकते हुए देख रहा हूं, वे सहमे-सहमे से आपस में बातें कर रहे हैं। दायीं ओर थोड़ी दूर पर उन्ही जैसे कुछ और, बाई ओर भी। कुछ बैठे हैं, कुछ चहलक़दमी कर रहे हैं। कुछ भौंचक से इधर-उधर का जायजा ले रहे हैं। वे सभी साफ रंग वाले हृष्ट-पुष्ट लेकिन उदास, मायूस और भयभीत से जवान हैं।

उनके दिल उनके चेहरों पर आ गए हैं और (बकौल मीर के) "जाना जाता है कि इस राह से लश्कर गुजरा"…की कैफियत है। *तार पंक्तियों* के बाहर सशस्त्र गार्डस थोड़ी-थोड़ी दूरी पर। उधर टावर पर भी एक गार्ड एल० एम० जी० के साथ, बिल्कुल सतर्क। एक और गार्ड सैनिक कुत्ते के साथ-साथ तार पंक्तियों के बाहर चल रहा है। समझ गया। युद्धबन्दी *आ गए हैं। कितनी ही देर तक उन्हें देखता रहा।…*

शिविर मैदान मे वे श्रेणी क्रमानुसार फालन हैं। सभी अपने-अपने सामान, बिस्तर बन्द, अटैचो, बक्सों के साथ पंक्तिबद्ध बैठे हैं गुमसुम, बिल्कुल चुपचाप। शायद आगामी समय के विषय में सोचते हुए। एक ओर स्त्रियां बुर्केधारी, सलवार कमीज़ और साड़ी पहने, बच्चों के साथ पंक्तियों मे बैठी हैं। उनके चेहरों पर भी अनिश्चित भविष्य चिपका है—कभी चुप न रहने वाले बच्चे भी चुप। शायद उन्हें भी बता दिया गया होगा कि वे अब 'दुश्मन' की कैद मे हैं। वे सब नतशिर हैं। भारतीय अधिकारियों से आख-से-आंख मिलाकर बातें नहीं कर रहे। वरिष्ठ युद्धबन्दियों को अलग बुलाकर आवश्यक निर्देश दिए जाते हैं। दिनचर्या समझाई जाती है। उसके बाद वे अपने वरिष्ठ साथियों के साथ सामान उठाकर पंक्तिबद्ध मार्च करते हुए अन्दर बताए हुए बैरकों मे चले जाते हैं। स्त्रियों व कम आयु के बच्चों को एक ओर रखा जाता है। और फिर कई दिनो तक बराबर युद्धबन्दियों से भरी गाड़िया आती रही। पचास, साठ सैनिक, असैनिक ट्रक, बसें और लारिया उन्हे स्टेशन से शिविर क्षेत्र में ला रहे हैं। सैनिक, असैनिक सभी युद्धबन्दी, पाकिस्तानी सेना, वायुसेना और नौसेना के, रजाकर, मुजाहिद, पुलिस, ईस्ट पाकिस्तान सिविल आर्म्ड फोर्स, रेंजर्स, स्काउट्स, एम० ई० एस० सेवाओ से सम्बद्ध सरकारी नौकर, व्यापारी प्रायवेट फर्मों मे काम करने वाले, औरतें, बच्चों, पंजाबी, पठान, बलूची, सिंधी तथा कथित बिहारी, बंगाली, ईरानी प्रतिदिन हजारों की सख्या में। सब व्यवस्थित हो रहे है। बीमार व घायलों को स्थानीय सैनिक अस्पताल एवं शिविर स्थित *एम० आई० रूम मे भरती कर लिया गया है।* पाकिस्तानी सैनिक चिकित्सकों को भी उनकी देखभाल के लिए लगा दिया गया है।

शिविरो मे आने के कई दिन बाद भारतीय सेना के व्यवहार को देख एव सभी आवश्यक सुविधाए सुलभ पाकर उनके चेहरों पर सुरक्षा के भाव आते हैं। प्रत्येक युद्धबन्दी को कैपचर कार्ड दिया गया है जिसे वे पाकिस्तान मे अपने निकटतम सम्बन्धी को लिखकर अपने नजरबन्द होने एवं सुरक्षित भारतीय शिविरो मे पहुंच जाने की सूचना दे सकें, साथ ही अपना वर्तमान पता भी लिख दे जिस पर पत्र व्यवहार किया जा सके। युद्धवन्दियो के अधिकतर पत्र उर्दू मे हैं और कुछ अग्रेजी मे भी—जैसे,

(i) I hope you will not let my mother feel my absence—we are at an unknown place. No doubt we are prisoners but their behaviour is admirable..." (मुझे आशा है तुम मेरी मां को मेरा अभाव महसूस नही होने दोगे। हम एक अनजान जगह पर हैं। निस्संदेह हम युद्धबन्दी है पर उनका व्यवहार प्रशसनीय है।)

(ii) "...the treatment of Indian forces is very good ...we have got every facility which is beyond our expectations. Hope to return amongst you". (भारतीय सेना का व्यवहार बहुत अच्छा है। हमें यहा सभी सुविधाएं उपलब्ध है जिनकी हमे आशा भी नही थी—आपसे मिलने की उम्मीद के साथ।)

(iii) "Respected father, as—Salam alekum, I have been Captured on 16th December and now I am a prisoner of war. Pay my salam to all the villagers and Pray-God. Allah for the safety of us, Pakistan and Islam" (आदरणीय अब्बाजान ! अस्स-सलाम-अलैकुम मैं 16 दिसम्बर को बन्दी बना लिया गया और अब मैं एक युद्धबन्दी हू। सभी गाव वालों को मेरा सलाम देना और अल्लाह से हमारी, पाकिस्तान और इस्लाम की सुरक्षा की प्रार्थना करना।)

शिविर के किनारे-किनारे मैं बाहर मेन रोड की ओर जा रहा हूं। अंदर युद्धबन्दी पी० टी० कर रहे है, नमाज पढ़ रहे हैं और कुछ वॉलीबाल खेल रहे है। दस महीने तक भारत ने बंगला देश के लगभग एक करोड़ शरणा-

थियों की रक्षा कर उनके लिए भोजन, आवास, वस्त्र एवं औषधि आदि सुविधाएं जुटाई है। वे अभी अपने देश लौटे भी नही। अब ये आ गए है 93,000 युद्धबदी। पता नहीं कब तक रहेंगे ? सामने तार पंक्ति के पास मुक्ति वाहिनी का एक सैनिक खडा है। युद्ध में घायल होने पर वह अपने कितने ही साथियो के साथ यहां स्थानीय सैनिक अस्पताल में इलाज के लिए आया हुआ है। शाम को ये लोग भी थोडी-बहुत चहलकदमी के लिए अस्पताल से बाहर आ जाते है। मैं उसके निकट पहुंच गया हूं। तार पर हाथ रखे वह अदर घूमते एक युद्धबंदी को एकटक देख रहा है। वह आवेश मे है। मुझे पास खडा देख वह फूट पडता है—"शाब, आमि चीनी ऐई स्शाला एकटा गर्भिणी भद्र महिला के पेट में संगीन भौका—" वह एक युद्धबन्दी की ओर सकेत कर बता रहा है। उसकी मुट्ठी तार पर कस जाती है। प्रतिशोध की भावना उसकी आखो मे अश्रु और रक्त बनकर छलक जाती है "इस स्शाला बदमाश को—" मैं धीरे से उसके कंधों पर हाथ रख उसे तार पंक्ति से अलग हटा देता हू। —"तुम बीमार हो और घायल भी।" पीछे हटते हुए उसकी कातर दृष्टि मे बंगला देश के पिछले नौ-दस महीने का इतिहास झलक रहा है। काले, बेवकूफ, उजड्ड, गरीब, क्षीणकाय, झूठे मुसलमान ! (पश्चिमी पाकिस्तानी स्वय को सच्चा मुसलमान बताते थे) जिन पर पश्चिमी देशों से लाया गया इस्लाम न जाने कब थोप दिया गया था—आखिर कब तक अपने अधिकारो को छिनता हुआ देख सकते थे ? कब तक अपनी भाषा और सस्कृति का अपमान सह सकते थे ? कब तक ये अपने खून-पसीने से कमाए टकों से पश्चिमी पाकिस्तान के चद व्यापारियों की तिजोरिया भरकर उनकी घृणा के पात्र बने रहते ? हर चीज की एक सीमा होती है। रूई भी दबते-दबते एक दिन पत्थर का रूप धारण कर लेती है और पत्थर जैसी ही चोट मार सकती है। मैं बाजार की ओर जा रहा हू बंगला देश की ललना रोशनआरा बेगम के विषय में सोचता हुआ। कैसी थी वह ढाका वीमेन्स कालिज के फर्स्ट-इयर की छात्रा जो सीने पर माईन्स बाधकर पाकिस्तान पेटन टैंक के सामने कूद पड़ी थी। —क्षणात मे ही पेटन की धज्जिया उड गई थी। मेरी आंखों में सैलाब सा आ गया है – 'नेई आर नेई—' मैं और नही सोच सकता।

भारतीय सेना के अपने से वरिष्ठ अधिकारी को सामने पड़ने पर या पास से गुजरने पर सभी युद्धवन्दी सैनिकोचित सेल्यूट देकर आदर करते हैं। उनके साथ वात करने में भी वे भिझकते नही। लेकिन किसी असैनिक से सामना होने पर वे भरसक प्रयास करते हैं कि उससे कोई वातचीत न हो। उन्हें यही शंका रहती थी कि पता नही किस यूनिट का आदमी है ? कौन हैं ! किस श्रेणी का है और शायद वे डरते भी थे कि असैनिक वेष में कही वे किसी भारतीय सैनिक गुप्तचर विभाग के सदस्य से तो वात नहीं कर रहे है ! आरम्भ मे मेरे साथ भी यही हुआ। निकट जाने पर युद्धवन्दी मुझे शक की निगाह से देखते थे और कोई बात करने पर केवल हा या ना में ही उत्तर देते थे। एक दिन शिविर से वाहर आते समय मैंने 12 से 16 वर्ष की आयु के छः सात युद्धवन्दी लडकों को शिविर द्वार पर सफाई करते और लकडी काटते देखा। मैं रुककर उनसे वातें करना चाहता था। ये सब अल्पायु होते हुए भी ईस्ट पाकिस्तान सिविल आर्म्ड फोर्स के सिपाही थे जिन्हें संघर्ष के दौरान जवरन भरती किया गया था। उनमें से अधिकांश अभी ट्रेनिंग पा रहे थे। कई ने वताया कि सात-आठ महीने नौकरी में होने पर भी उन्हें कोई वेतन नही दिया गया था। यह पूछने पर कि वे यहां से मुक्त होने पर कहां जाना पसन्द करेंगे, सवने एक स्वर मे कहा—पाकिस्तान। यद्यपि उनमें से कई एक के संवंधी शायद वगला देश में रह गए थे। ऐसा शायद उन्होने वंगला देश के नागरिकों द्वारा बदला लिए जाने की सम्भावना के भय वश ही कहा हो। मेरे प्रश्नों का उत्तर देते समय वे सहमे और भयातुर लग रहे थे। उनमें से कई एक वंगाली भी थे जिन्हें अपने परिवार और सगे-सम्वन्धियों के नवीन समाचारों का, उनकी कुशल क्षेम का भी कुछ पता नही था। वलात् भरती किए गए इन अनिश्चित भविष्य वाले किशोरो पर किसे दया न आ जाएगी ?

शिविर कार्यालय एक टेन्ट मे है। मैं बाहर धूप में बैठा हूं। पास ही एक मेज पर एक टाइपिंग मशीन रखी है। थोड़ी देर में एक युद्धवन्दी मेरे निकट आ सावधान हो "गुड मार्निंग सर" कहकर अभिवादन करता है। थोड़ी दूर पर ही सगीन से लैस एक सन्तरी खड़ा है, जो शिविर से उसके साथ आया है। "मैं टाइप करने आया हूँ सर," युद्धवन्दी मुझसे कहता है।

मैंने युद्धबन्दियों सम्बन्धी रिकार्ड टाइप कराने के लिए एक टाईपिस्ट मांगा था। मैं उसे बैठने का संकेत करता हूं। "थैंक्यू सर" कह वह बैठ जाता है। मैं उसे टाईप होने वाला कार्य समझाता हूं। वह टाईप मशीन पर कागज और कार्बन लगाकर, टाईप करने लगता है। बीच-बीच में वह मेरी ओर देख लेता है। लगा वह मुझसे बात करने के लिए उत्सुक है। यह भांपकर मैंने उससे उसका नाम पूछा—

—मौहम्मद शरीफ अलवी।

—रैंक !

—सूबेदार क्लर्क—उसके चेहरे पर कुछ खुशी और विस्मय के भाव से आ गए हैं। लगभग 40 वर्षीय लम्बा छरहरा बदन। बड़ी तेजी से टाईप पर हाथ चला रहा है।

—यू आर ए गुड टाइपिस्ट,

— हाँ सर, अब तो बहुत दिन से प्रेक्टिस नहीं, पहले मेरी स्पीड 60 के लगभग थी।

—कैसा लगता है यहां ?

—आप लोग लाख सहूलियतें दें लेकिन कैदी आखिर एक कैदी होता है। यह ठीक है कि कैम्पों में हमारे साथ कुछ ज्यादती नहीं हो रही और आप लोगों का बर्ताव भी हमारी उम्मीद से परे है। फिर भी अफसोस की बात यह है कि हम अपने वतन से, मां-बाप से, बीवी-बच्चों से बहुत दूर हैं। हर वक्त वे याद आते रहते हैं। आप यकीन नहीं करेंगे सर, नींद तक नहीं आती। इबादत करते रात गुजर जाती है। पता नहीं हम कब जाएंगे।" कहता हुआ वह बड़ा मायूस-सा हो जाता है। मैं उसे फिर टोकता हूं—

—घर से कोई खत आया ?

—नहीं सर ! हमने यहां से लैटर लिखे थे पता नहीं वे पहुंचे भी या नहीं।

—बच्चे कितने हैं ?

—छः ! चार लड़के और दो लड़कियां।

—बड़े हैं सब, पढ रहे हैं ?

—नहीं सर। चार बड़े स्कूल जाते हैं, दो अभी छोटे हैं।

—अच्छा आपके विचार से इस मास सरेन्डर (सामूहिक आत्मसमर्पण) की क्या वजह हो सकती है? "बस साब! जब वक्त खराब आता है तो सब तरह की अनहोनी हो जाती है। हम सरेन्डर के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। जब हमें हुक्म मिला तो हकीकत में हम रो पड़े थे। जिनका काम नहीं था हमारे नाई-धोबी तक फ्रन्ट पर जाकर लड़े थे। हमारे पास बहुत साजो-सामान था। सरेन्डर का हुक्म सुनकर हमें बहुत ताज्जुब हुआ था। हमारी समझ में कुछ नहीं आ रहा था, इस्लाम की तवारीख में इतना बड़ा सरेन्डर—"

—इस्लाम नहीं, दुनिया की तवारीख कहो, अलवी। दुनिया की तवारीख में इतना बड़ा सरेन्डर कभी नहीं हुआ था। खैर, छोड़ो अब तो दुआए मांगो कि इस सब-कान्टिनेन्ट (उप महाद्वीप) पर अमन रहे।

—अमन हो जाए तो अच्छा ही है लेकिन यह भी तो मुश्किल नज़र आता है।

मैं विभिन्न श्रेणी के कितने ही युद्धबन्दियों से मिला। उपमहाद्वीप में शान्ति बनाए रखने के विषय में अधिकांश युद्धबन्दियों के विचार अलवी के विचारों से मेल खाते थे।

युद्धबन्दियों से सम्बन्धित रिकार्डस ठीक करने के लिए मुझे कितनी ही बार शिविरों के विभिन्न प्रभागों में अन्दर जाना पड़ा है। आरम्भ के दिनों में सामने पड़ने पर वे सेल्यूट दे आगे निकल जाते, बैठे हुए उठ जाते, आस-पास वॉलीबाल या खो-खो, कबड्डी आदि खेलते हुए सहमकर मुझे देखते और आगे निकलने पर फिर अपने काम में मस्त हो जाते। शिविर की सफाई देखते ही बनती थी। उनके बिस्तर, बर्तन, लोटे, बाल्टियां सब बड़े करीने से पंक्तिबद्ध रखे रहते थे। विशेषतया! मस्जिद क्षेत्र बड़ा साफ रहता। काम समाप्त होते ही कई युद्धबन्दी पास आ बैठते और बातें करते रहते। कोई कहता—मुझे तो बस यही अफसोस रहेगा कि बिना एक भी गोली चलाए मैंने सरेन्डर कर दिया।"

—"फिर भी बड़े होकर इसके बच्चे बड़े फख्र के साथ अपने दोस्तों से कहा करेंगे कि उनके अब्बा हुजूर ने बिना एक भी गोली चलाए सरेन्डर कर दिया था।" दूसरा चुहलबाजी करता। पहला बस झल्लाकर रह जाता।

—"सर ! आज मेरे पास घर से एक खत आया है"— एक युद्धबन्दी बता रहा है— "मेरे ही गाव का एक और कैदी यहां पर है। उन्होंने लिखा है कि उस लड़के के वालिद अब इस दुनिया मे नही रहे। उसके पास तो अभी कोई खबर नही आई और शायद आएगी भी नही—"

—"तो क्या तुम उसे बताओगे ?"—मैं पूछता हूं। "नही सर। ऐसी खबर मै उसे नही सुनाऊगा।"

"हां सर ! ऐसा यहां पर हुआ"—दूसरा युद्धबन्दी बता रहा है—वैसे तो ये मरने जीने की खबरें आती ही रहती हैं। कई लोग होते हैं समझदार। हा, समझदार ही कहिए—जो सब्र से काम लेते हैं। कई जो बहुत इमोशनल (भावुक) होते है उन्हें थामना मुश्किल हो जाता है। सबके लिए बड़ी मुसीबत आ जाती है। एक बार एक कैदी के बड़े भाई के मरने की खबर आई। रो-रोकर उसने आसमान सिर पर उठा लिया। कई दिन तक यह सिलसिला चलता रहा। आखिर उसके ही गांव के एक कैदी ने खत में यह लिखा हुआ दिखाया कि खबर गलत थी। हालांकि खबर सच थी और खत झूठा जो यहीं पर लिखा गया था। ऐसे ही अन्दर एक और कैदी कुछ अलग ही तरह की हरकतें कर रहा है बिल्कुल पागलों की तरह। उसे एम० आई० रूम ले गए तो वह अपना सिर फोड़, कपड़े फाड़ नंग-धड़ग छूटकर भागने की कोशिश करता हुआ डॉक्टरों को गालियो पर गालियां देता रहा। हमें यहा सभी सहूलियतें है, कोई तकलीफ नही—फिर भी चैन नही आता। जिन्दगी की कितनी ही तमन्नाएं चोट खाकर रह जाती है। दिल रोज ही घर की याद करके कितना रोता है। हर बैरक मे रात-भर लोगों की सिसकियां सुनाई देती रहती है। किसी को बेसहारा बच्चों की याद आती है, किसी को बुड्ढे मा-बाप की, किसी को जवान बेटियों की, बहनो की फिक्र रहती है। बुरा न मानो तो एक बात कहूं सर—किसी वक्त आप हमारे साथ तीन-चार दिन गुजार कर देखें, तो आप महसूस करेंगे कि कैदी के क्या मायने है।

मैं दो पाकिस्तानी सैनिक डाक्टरों के पास बैठा हू। उनमें से कम आयु वाला खूबसूरत नौजवान गेहुएं रंग वाला कैप्टन सर्जन है। कैसे भी आप्रेशन को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने में उसने बड़ी ख्याति अर्जित की

है। कितने ही विगड़े केस उसने सुधारे है। आवश्यकता होने पर वह किसी भारतीय सैनिक अथवा नागरिक का इलाज करने में भी हिचकिचाता नही। हंसमुख चेहरे वाला यह डॉक्टर बड़ा होनहार है और दूसरा डॉक्टर कैप्टन फिजिशियन है। वे दोनो एक ही शिविर में युद्धबन्दियों के उपचार हेतु रह रहे हैं। मैं सर्जन को सम्बोधित कर पूछता हूं—

—अच्छा डाक्टर आप अगर भारत मे कैदी होकर न आते तो क्या करते होते ? मेरा डॉक्टर से मकसद – यह जानना है कि कैद की जिन्दगी का उस पर क्या असर हुआ।

—सच पूछो तो मैं—वह थोड़ा सोचकर वोलता है, मैं अगर कैदी न होता तो हायर एजूकेशन (उच्च शिक्षा) के लिए आज फॉरन (विदेश) में होता, मैंने सव प्लान बना ली थी।

—अब भी तो आप फॉरन में है। दूसरा डाक्टर संजीदगी से कहता है। देर तक दूसरे डॉक्टर की प्रत्युत्पन्नमति पर हम तीनो हंसते रहे। फिर कई विषयों पर बातें होती हुई भारत और पाकिस्तान में सविधान द्वारा प्रदत्त नागरिको के मौलिक अधिकार और नागरिक स्वतन्त्रता पर आ गईं। मैं उन्हें वता रहा हूं कि भारत मे स्त्रियों को भी समान अधिकार हैं। वे शिक्षा, प्रशासन, डॉक्टरी विज्ञान ही नही तकनीकी क्षेत्र मे भी पुरुषो से पीछे नही हैं। केरल प्रदेश मे चीफ इंजीनियर एक नारी है। जब कि पाकिस्तान में अभी भी नारी को तुच्छ समझा जाता है और वहां स्त्रियो की हालत बडी पिछड़ी है। वे मेरी बात गौर से सुन रहे हैं—फिजिशियन डॉक्टर वड़ी सावधानी से कहता है—

और सबसे बड़ी बात तो यह है कि भारत की वजीरे-आजम भी एक औरत ही है।

भारत द्वारा युद्धबन्दियों के लिए की गई स्वास्थ्य एवम् औषधि सम्बन्धी व्यवस्था से दोनों डॉक्टर संतुष्ट हैं और उनके अनुसार इससे ज्यादा और क्या हो सकता है ? उनके विचार से आत्मसमर्पण के कई कारण हैं—"इसका मतलब यह नही कि हमारी फौजें आपकी फौजों से कमजोर थी, हमारे पास आपकी फौज से अच्छे हथियार और साजो-मामान था—सरेन्डर करने की वजह है अच्छी प्लानिंग (योजना) और

तैयारी की कमी।" और मुझे जनरल शेरिदान की उक्ति याद आ जाती है—Battlesd are won on the drill field, not on the battle field."—निस्संदेह !

"इसके अलावा आपके प्रेस और आकाशवाणी ने भी किसी हद तक आप लोगों की फतह मे मदद की—" दूसरा डॉक्टर बता रहा है—"आप का प्रोपेगन्डा इतना कारगर था कि हमारी फौजों का मोराल डाउन (मनोबल हीन) हो गया था। मार्च 1971 से ही आपकी प्रेस और रेडियो ने खबरें देनी शुरू कर दी थी—इससे ही बहुत फर्क पड़ा।"

"और ईस्ट मे हमारे पास एयरफोर्स ज्यादा नही थी। जो थी वह आप की एयरफोर्स के सामने ज्यादा दिन नही ठहर सकी। हमारे कम्युनिकेशन्स (संचार व्यवस्था) ठप्प हो चुके थे—एक यूनिट से दूसरी यूनिट और एक शहर से दूसरे शहर के बीच ताल्लुक रखने का कोई जरिया नही था—हमें एक दूसरे की कोई खबर नहीं थी। हम चारो ओर से घिर गये थे—ईस्ट से भाग निकलने का कोई रास्ता नही था—हम सरेन्डर न करते तो क्या करते ? कितने दिन वहा बमबारी के नीचे रह सकते थे—" फिजिशियन डाक्टर धारा प्रवाह बोल रहा है—मैं बीच मे टोकता हूं।

—आपकी यूनिट ने कहा सरेन्डर (आत्म समर्पण) किया था ?

—रामगढ़ मे – बगला देश में भी एक रामगढ़ है।

—अब भी तो आप रामगढ़ मे ही हैं—सर्जन डॉक्टर तुरन्त बोला और एक बार फिर एम० आई० रूम हम तीनो के ठहाकों से गूंज गया। सर्जन ने फिजिशियन से थोड़ी देर पहले किए मज़ाक का बदला ले लिया था।

□ □

युद्धबन्दी—शिविर में

"I am a Jew : hath not a Jew eyes ? hath not a Jew hands, organs, dimensions, senses and affections and passions ? Fed with the same food, hurt with the same weapons, subject to same desease, healed by the same means, warmed and cooled by the same winter and summer as a Christian is ? If you prick us do we not bleed ? If you tickle us, do we not laugh ? If you poison us, do we not die ? And if you wrong us, shall we not revenge ?···
—Shakespeare.

"मैं एक यहूदी हूं। क्या एक यहूदी की आंखें नहीं होती ? क्या एक यहूदी के हाथ, अवयव, सीमाएं, चेतना, अनुराग, लालसा एवं भावनाएं नही होती ? क्या उसका पेट भोजन से नही भरता ? क्या शस्त्र उसे घायल नही करते ? क्या उसके भी वही रोग नही होते ? क्या उसका उपचार भी उन्ही साधनों से नही होता ? क्या उसे भी ग्रीष्म काल मे गर्मी और शीत-काल में सर्दी महसूस नही होती जैसे कि एक ईसाई को ? यदि तुम हमें बेधते हो तो क्या हमें रक्त नही बहता ? यदि तुम हमें गुदगुदाते हो तो क्या हम नही हंसते ? यदि तुम हमें विप देते हो तो क्या हम मरते नही ? और यदि तुम हमारे साथ दुर्व्यवहार करोगे तो क्या हम प्रतिशोध नहीं लेंगे ?"—मर्चेन्ट ऑफ वेनिस के तीसरे अंक के प्रथम दृश्य में शाईलॉक एक सार्वभौम सत्य का उद्‌घाटन कर जाता है। मानव-मानव होता है चाहे

वह किसी भी देश, धर्म, जाति और विचारधारा से संबंधित क्यों न हो ! चाहे वह किसी भी परिस्थिति में क्यों न हो ! उसकी संवेदनाएं, भावनाएं, इच्छाएं एक सी होती हैं, उसके सुख दुख एक से होते हैं, उसकी हंसी एक सी होती है और उसके आसू एक से होते हैं।

लगभग 93,000 युद्धबन्दियों को उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, और बिहार स्थित शिविरो में रखा गया है। इन स्थानों की जलवायु एवं वातावरण वैसा ही है जिसका प्रावधान जेनेवा सम्मेलन की शर्तों में है। सुविधानुसार प्रत्येक शिविर मे लगभग दो हजार युद्धबन्दी रखे गये हैं। असैनिकों, बच्चो एवं स्त्रियो को अलग-अलग शिविरों में रखा गया है। शिविर तीन —चार प्रभागो (ब्लाक्स) में विभाजित होता है। प्रत्येक प्रभाग में युद्धबन्दियों के लिए सोने, बैठने, उठने, खेलने एवं इबादत करने के लिए पर्याप्त स्थान है। एक ओर स्नानागार बने हैं, रसोइयां अलग और सडांस आदि थोड़ा हटाकर अलग बनाए गए हैं। पुस्तकालय, वाचनालय, क्लब्स एवं कैन्टीन आदि के लिए पर्याप्त स्थान है। गर्मियों में सभी बैरकों में आवश्यकतानुसार बिजली के पंखों की व्यवस्था भी कर दी जाती है। शिविर के प्रत्येक कोने में पानी व बिजली की समुचित व्यवस्था है। प्रति अफसर युद्धबन्दी के लिए 100 वर्ग फुट आवास के अतिरिक्त 36 वर्ग फुट का अलग स्नान गृह है। उसके लिए एक चारपाई, एक छोटी मेज, एक बेत वाली कुर्सी और किट बाक्स का प्रबंध है। प्रति 25 अफसरों का अलग से मैस होता है। जिसमे एक अलमारी, 25 बेंत वाली कुर्सियां, चार मेज और एक डिनर वैगन की व्यवस्था है। मैस के साथ ही एक एन्ट्री रूम होता है। जिसमे पांच आराम कुर्सी 10 बेंत वाली कुर्सी, दो मेज और एक तिपाई होती है। अन्य श्रेणी के युद्धबन्दियो के लिए भी आवास स्थान व फर्नीचर लगभग वैसा ही है जैसा उसकी श्रेणी वाले किसी भारतीय सैनिक के लिए होना है।

शिविर क्षेत्र की सफाई का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है। समय-समय पर भारतीय सैनिक चिकित्सक एवं अन्य शिविर अधिकारी शिविर का निरीक्षण करते रहते हैं। रसोई में जाकर डाक्टर उन्हें बताते हैं कि खाने-पीने की वस्तुओं को किस प्रकार रखा जाए। शिविर के प्रभागो एवं

रसोइयों में आपस में प्रतिस्पर्धा बनाए रखने के उद्देश्य से समय-समय पर सबसे अधिक साफ सुथरे प्रभाग एवं रसोई को पुरस्कृत किया जाता है। मच्छर मक्खी आदि के प्रजनन को रोकने के लिए डी० डी० टी० आदि का छिड़काव होता रहता है। फील्ड मार्शल मानेकशॉ ने अन्तर्राष्ट्रीय रेड्क्रास समिति के प्रतिनिधियों को बताया था कि किस प्रकार हम युद्धबन्दियों को वे सुविधाएं देते हैं जो हमारे अपने सैनिकों को भी उपलब्ध नही होती। गर्मी, सर्दी या बरसात कोई भी मौसम हो प्रत्येक युद्धबन्दी के सिर पर कम से कम छत तो होती है। जबकि सन्तरी की ड्यूटी करने वाले हमारे सैनिक तम्बुओं में रहकर अपने बिस्तर जमीन पर लगाते है। जब कभी भी जल-आपूर्ति या बिजली की व्यवस्था थोड़ी भंग होती है टेलिफोन पर टेलिफोन खड़कने लगते हैं और देखते-ही-देखते सब कुछ पहले जैसा हो जाता है। जबकि दूसरे देशों में युद्धबन्दियों के साथ इससे भिन्न व्यवहार किया जाता रहा है। अमेरिकी जॉन नोबुल ने बूचेन वाल्ड नामक नाजी कैम्प के विषय में लिखा है—

"कुख्यात नाजी कैम्प बुचेन वाल्ड मे प्रतिदिन भूख या अन्य कारणों से मरने वालों की संख्या 70 तक पहुंच ही जाती थी—जिस बैरक में मुझे रखा गया वह अष्टकोणीय थी। पक्के बरफ जैसी जमीन में नींवें बड़ी गहरी गाडी गई थी। तख्तों से जमीन को पाटकर फर्श तैयार किया गया था। तख्तों और जमीन के बीच में खाली स्थान को राख से भर दिया गया था, जिससे कि गर्मी बनी रहे। दीवारो पर भूसे और चिकनी मिट्टी को मिलाकर लेप कर दिया गया था और फिर ध्रुव वासियों की झोपड़ियो के समान ही उन्हें बर्फ से ढक दिया गया था। कमरों की लम्बाई के बराबर तथा दो-दो फीट चौड़ा सख्त लकड़ी का बना हुआ शैल्फ नुमा तख्ता जैसा रेलगाड़ियों मे यात्रियों के सोने के लिए होता है हमारे सोने के लिए था। उस तख्ते की लम्बाई का अनुमान केवल इसी से लगाया जा सकता है कि सोते हुए मेरे कन्धे अपने साथ के दूसरे कैदी के कन्धों से टकरा जाया करते थे यद्यपि वहां बिछाने के लिए कोई चटाई या सिरहाने रखने के लिए तकिया या ओढने के लिए चादर इत्यादि कुछ नहीं था किन्तु इसके बावजूद भी मैं खुशकिस्मत ही था कि मुझे सोने के लिए जगह तो मिल गई थी जब कि

दूसरे कई कैदियों को तो जमीन पर ही पसरना पड़ता था—।" नोबुल पुरस्कार विजेता सोल्जेनित्सिन भी कुछ दिन श्रम शिविर में रह चुके हैं। उन्होने लिखा है :

"शिविर न० 104 के कैदियों ने स्वयं इसका निर्माण किया था और वे जानते थे कि ये (शिविर) कैसे हैं—पत्थर की दीवारें, कंक्रीट का फर्श, और खिड़की कोई नही। इस तनहाई की कोठरी मे एक अंगीठी रखी रहती थी, लेकिन उसका ताप दिवार पर जमी हुई बर्फ को पिघलाकर फर्श पर पानी का तालाब बना देने के लिए ही पर्याप्त था। इसमें आप बिल्कुल नंगे तख्ते पर सोते और रात-भर आपके दात किटकिटाते रहते। दिन में सिर्फ छह औंस रोटी मिलती और तीसरे दिन गर्म खिचड़ी जैसी कोई चीज दी जाती।—जिन लोगों को इनमें 15 दिन रखा जाता वे मर जाते और दफना दिए जाते।" ऐसे ही एक ओर कोलिमा क्षेत्र स्थित शिविर का वर्णन राबर्ट कान्क्वेस्ट ने अपनी पुस्तक—'दे ग्रेट टेरर' मे किया है— "साल में आठ-नौ महीने इस क्षेत्र की नदिया बर्फ से जमी रहती थी। शिविर का एक गीत था—"कोलिमा अद्‌भुत ग्रह है। जहा बारह महीने सर्दी और शेष समय गर्मी रहती है।"

बन्दियों को दिए जाने वाले खाने के विषय में जॉन नोबुल लिखता है कि, "वोर्कुता मे हमें दो बार खाना दिया जाता था। प्रति सुबह हमें गिनी-गिनाई भद्दी और काली रोटी दी जाती थी जो हमारा पूरे दिन का राशन होता था। प्रातराश के लिए दो कड़छे सडी-गली सब्जी और एक प्याला पनियाला शोरबा मिलता था। फिर बारह घंटे बाद रात के खाने में वही एक प्याला पनियाला शोरबा तथा सूरजमुखी के तेल से तर दो कड़छे कोई निकम्मी सब्जी मछली या चमड़े से भी सख्त रेंडियर के मांस का एक टुकड़ा और मुडी-तुडी एक रोटी। पूरे दिन के लिए मुझे जो खाना मिलता था उसका कुल योग 1400 केलोरी होता था जो कि दफ्तर के कर्मचारी की पूरी खुराक का आधा होता है। निरन्तर भूखा रहने के कारण मेरे पेट मे गाठें पड गई थी। मेरा वजन 155 पाऊन्ड से अब केवल 95 पाउन्ड भर रह गया था और हड्डियों पर खाल लटकने लगी थी। बन्दियों मे से 90 फीसदी रक्तचाप या हृदय रोग के शिकार हो चुके थे। विटामिन की कमी के कारण बहुतों

के दांत गिर चुके थे मेरे भी कुछ दांत गिर गये और जो बाकी बचे रह सके वे भी बदरंग तो हो ही चुके थे।" किन्तु इस सबके विपरीत भारतीय कैम्पस में बन्धित युद्धबन्दियों के लिए भोजन की अद्भुत व्यवस्था थी। इनके लिए प्रत्येक युद्धबन्दी प्रतिदिन लगभग 3491 केलोरी के बराबर भोजन प्राप्त करता है। निम्न आंकड़ो से यह बात और भी स्पष्ट हो जाएगी—

आटा गेहूं	—570 ग्राम	) चिकित्सक की सलाह पर
या चावल आटा	—426/133 ग्राम	) अस्वस्थ युद्धबन्दियों को
दाल	—85. 5 ग्राम	) कुछ अतिरिक्त खाद्य पदार्थ
चीनी	—76 "	) या उपरोक्त पदार्थों की
मांस	—66. 5 "	) अतिरिक्त मात्रा भी दी
दूध	—190 मि०लि०	) जाती है—
सब्जी हरी	—190. ग्राम	) जैसे—कॉफी—28 ग्राम
आलू	—104. 5 "	) चीनी —30 "
प्यांज, लहसन	—47. 5 "	) दूध —80 "
फल	—105 "	) रम —60 मि०लि०
चाय (पत्ती)	—7. 6 "	) विटामिन गोली—एक
घी (डालडा)	—66. 5 "	
नमक	—10. "	
लकडी कोयला	—900. "	

असैनिक युद्धबन्दियों को मांस छोड़कर शेष सब राशन उतनी ही मात्रा में दिया जाता है जितनी मात्रा में सैनिक युद्धबन्दियों को। युद्धबन्दियों के परिवारों सहित आने के कारण उनके बच्चे भी साथ-साथ आये थे और कुछ भारत में आने के बाद ही पैदा हुए। आयु के अनुसार युद्धबन्दी बच्चों को प्रतिदिन मिलने वाली खुराक निम्न तालिका के अनुसार है जो उन्हें पूर्णतया स्वस्थ रखने से कुछ अधिक ही प्रतीत होगी।

पदार्थ	1 वर्ष से छोटे बच्चे।	1 से 4 वर्ष तक के बच्चे।	4 से 6 वर्ष तक के बच्चे।
ताजा दूध	500 मि०लि०	300 मि०लि०	240 मि०ली०
अन्डे (एक)	40 ग्राम	40 ग्राम	—

चीनी	30 ग्राम	30 ग्राम	28 ग्राम
अन्न	—	150 "	283 "
दाल	—	30 "	55 "
सब्जी	—	30 "	110 "
फल	—	30 "	—
घी	—	30 "	28 "
मसाला	—	—	9 "
नमक	—	—	2.8 "
लकड़ी	--	—	900 "

ईद आदि पर्वों एवं विशेष अवसरों पर युद्धबन्दियों के लिए 'बड़े खाने', (सह भोज के लिए भारतीय सेना में प्रचलित शब्द ग्रेन्ड फीस्ट का अनुवाद) का प्रबन्ध किया जाता है। जिसके निमित अतिरिक्त खाद्य-सामग्री भी जुटायी जाती है। प्रत्येक प्रभाग मे युद्धबन्दियों की एक समिति बनी हुई है जो भोजन सामग्री में आवश्यकतानुसार रद्दोबदल के लिए शिविर अधिकारियों को सलाह देती है। यदा कदा मैस मीटिंग भी होती रहती हैं। कई भले लोग सप्ताह भर में आवश्यकता से अधिक राशन को बचाकर वापस कर देते हैं। लेकिन कई ऐसे भी है जो समस्त राशन को पका डालते हैं और खाने से बचे भोजन को शत्रु का माल समझकर कूड़े-कचरे पर फेंक देते हैं या पानी के साथ नाली में बहा देते हैं। ऐसा करने पर उन्हें साथी युद्धबन्दियो की झाड़ भी खानी पड़ती है। "कर लो जितनी ऐश करनी है इतना लजीज खाना तो पाकिस्तान में तुम्हें मिलने से रहा।" कई इस बर्बादी को देख राशन में कटौती करने की सलाह भी देते हैं। सभी युद्धबन्दी भोजन के प्रबन्ध मे सन्तुष्ट हैं और आपस में इस प्रबन्ध के लिए भारत की सराहना भी करते हैं। इन्हीं मे से कई लोगो ने बताया कि यहा पर चीनी और बकरे का गोश्त जितनी अधिकता मे मिलता है उतना पाकिस्तान मे भी नहीं मिलता। वहां ये दोनो वस्तुएं किन्ही विशेष अवसरों पर ही खाने को मिलती है अन्यथा इनके स्थान पर गुड़ और किसी बड़े पशु का गोश्त ही खाने को दिया जाता है। यहा उनके रीति-रिवाज के अनुसार बकरे को हलाल करके ही उन्हें गोश्त देने की व्यवस्था है। ईस्ट पाकिस्तान

सिविल आर्मड फोर्स का बूढ़ा हवलदार इसके पहले द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जापानियों की कैद मे रह चुका हूं।

"सर" वह बोल रहा है—"दूसरे जंग के दौरान बर्मा बार्डर पर लड़ते हुए जापान ने कैद कर लिया था। जंगी कैदी बनाकर वे हमें जापान ले गए थे। वे दिन मुझे याद आते है। महीनो तक भरपेट खाना नही मिलता था जिस्म में ताकत के बजाय कई नई-नई बीमारियों ने घर कर लिया था। तरह-तरह की जिस्मानी तकलीफें दे, टार्चर कर दिन-रात हमारा ब्रेनवाश किया जाता था। भेड़-बकरियो की तरह छोटी-छोटी अंधेरी और गन्दी कोठरियो में हम रहते थे। छोटी सी बात पर नाजायज मारपीट होती। जापानी हर वक्त गैर मुनासिब बर्ताव करते। कैदी आपस में भी खुलकर बातें नही कर सकते थे। कैम्प की सफाई या कोई और काम करने के लिए पहले हमे कैम्प से बाहर निकाला जाता था। घास छीलते हुए बेहद भूख से तड़पकर, नजरें बचाते हुए हम घास की गोलिया सी बनाकर मुह में रख लेते। मुंह चलाते हुए अगर किसी जापानी की नजर पड़ जाते तो मार पड़ती, बेइज्जती होती, कपड़े निकलवाकर नंगे बदन वो सजा दी जाती, तौबा-तौबा याद करके ही दिल दहल जाता है।—और अब दूसरी बार तकदीर ने जंगी कैदी बनाकर यहां आपके हिन्दुस्तान भेज दिया है। हकीकत तो यह है सर कि हथियार डाल देने के बाद जब हमें हिन्दुस्तान की तरफ लाया जा रहा था तो दिल और दिमाग मे कितने ही डर और वहम डंक मारते से लगते थे। याद आ रही थी हमें जापान में अपने जंगी कैदी होने की बात और हमें तो पूरा यकीन था कि अब हिन्दुस्तान में भी उसी तरह की तकलीफों से गुजरना पड़ेगा। पर यहां आने पर ही राज खुला। वाह! अल्लाह! तेरी कुदरत। अपनी-सी आब-ओ-हवा, अपनी जुबान, अपना रहन-सहन अपना खाना, सभी तरह की सहूलियतें और-और अपने भाई जैसे लोग—" कहते-कहते उसकी आवाज भारी हो जाती है। मैं चुपचाप उसे देख रहा हूं। उसने फिर भरे गले से कहा—"असलियत तो यह है सर! कि सैंतालिस के बटवारे की बात अब तक मेरी समझ में नही आई—आखिर क्या जरूरत थी—एक ही घर मे दीवारें खींचकर टुकड़े-टुकड़े करने की?—" वह मुझसे पूछ रहा था। लेकिन मैं इसके प्रश्न का उत्तर

नहीं दे सकता। और क्या पता यही प्रश्न मैं उससे पूछना चाहूं—मैं आगे बढ़ जाता हूं। मन करता है वापस लौटकर जाऊं और हवलदार को बशीर-बद्र का शेर सुना आऊं—"दुश्मनी जमकर करो लेकिन ये गुन्जायश रहे, जब कभी हम दोस्त बन जाए तो शर्मिन्दा न हों।" मैं वापस लौटता हूं—हवलदार खड़ा हुआ मुझे ही देख रहा था—'सुनो', मैं कहता हूं—शेर सुनोगे और उसके उत्तर देने से पूर्व ही मैं उसे 'जौहर अदीब' के शेर सुनाना शुरू कर देता हूं। सुनो...

> "अश्क बारी पर हमारी, आप शर्मिंदा न हों,
> फायदा क्या उन चिरागो, से जो ताबिन्दा न हो",

कई लोग जुड़ आए हैं। मैं सोत्साह सुनाता जा रहा हूं...

> "रंग कुछ ऐसे भरें, ख्वाबो की तावीरों में हम,
> वक्त जब परखे तो अपने ख्वाब शर्मिन्दा न हो,
> पेश-बन्दी है जरूरी, कीजिए कुछ सद्बेबाब,
> लग्जिशें जो हो गईं हमसे, वो आईन्दा न हों"

हम दोनों की दूरी कुछ घट गई, शायद!—मैं कब वापिस लौट आया पता नहीं।

कभी-कभी आपस मे झगड़ा होने पर विशिष्ट युद्धबन्दी तिलमिलाकर झगड़ने वालों को डाटते हुए कहते हैं—"हिन्दुस्तान का खाना खा खाकर तुम्हें दिन लग गए हैं। मस्ता गए हो। बेवकूफ लोगों, चैन से रहो और ख़ुदा का शुक्र अदा करो कि तुम हिन्दुस्तान की कैद मे हो।"

मैं जानता हू प्रत्यावर्तन पर वापस अपने देश लौटते युद्धबन्दियो की रेल गाडियां दूरी के अनुसार कई स्थानो पर रूकेंगी। जहां उनके लिए स्नानादि एवं ताजे भोजन का प्रबन्ध होगा। गाड़ी से नीचे उतरकर वे एक सीमित क्षेत्र मे चहलकदमी भी कर सकेंगे। वापस जाते समय वाघा चौकी से पहले अटारी रेलवे स्टेशन तक भोजन आदि की जैसी सुविधा इन युद्धबन्दियों को दी जाएगी उसे क्या ये कभी भूल सकेंगे। युद्धबन्दियों की भोजन सामग्री पर भारत सरकार का पचास लाख रुपए प्रति माह से भी अधिक ही व्यय होता है।

दिसम्बर का महीना । कड़ाके की सर्दी पड़ रही है। दिन-भर आकाश में बादलों का जमघट लगा रहा । बूंदा-बांदी होती रही। तेज हवा—लगता है शरीर के कपड़े छीन लेगी । रात के आठ बजे खिड़की दरवाजे बन्द किए गर्म कपड़ों में भी ठिठुरते हुए हम क्लब में बैठे है । और बाहर खुले आकाश के तले हमारे सैनिक शिविर के चारों ओर सतर्क रह पहरा दे रहे हैं । उनके कपड़े भीगे हैं । कैसा कठिन जीवन है उनका ? कैसी लगन है उनमे, अपने कर्तव्य के प्रति कभी हिम्मत न हारने वाले ये मेरे देश के सैनिक ! मैं उनके त्याग के विषय मे सोच रहा हूं । तभी नर्सिंग असिस्टेंट यादव दरवाजा खोल अन्दर आ सैल्यूट दे रिपोर्ट देता है—"सर । एक पी० ओ० डब्लू बहुत बीमार है उसे अस्पताल ले जाना है।" संबद्ध अधिकारी तुरंत तैयार हो चल पड़ते है । फोन कर अस्पताल से एम्बूलैंस मंगवायी जाती है। स्ट्रेचर पर डालकर बीमार को अन्य युद्धबन्दियो की सहायता से बाहर गेट तक लाया जाता है । एम्बूलैन्स उसे लेकर सर्राटे से अस्पताल की ओर दौड़ पड़ती है । अगले दिन प्रातः ही पता लगा कि रात वाले युद्धबन्दी को टिटनस था । अस्पताल में काम करने वाले सैनिक चिकित्सक ने बताया कि बीस. मिनट देर से आने पर कैदी को बचाना कठिन हो जाता । उसका इलाज चला और उसे बचा लिया गया उस समय वह शत्रु नहीं एक बीमार मनुष्य था । भारतीय चिकिस्सको की सदयता की कहानी क्या वह अपने मुल्क लौटने पर सगे संबंधी और बीबी बच्चों को नहीं बताएगा ! एक दिन कैप्टन 'ममूद' को दिल का दौरा पड़ने पर अस्पताल मे भरती करवाया गया । उपचार के बाद अब वे भले चंगे हो मस्ती से दिन काट रहे हैं। इस प्रकार की असंख्य घटनाएं प्रति दिन ही घटती रहती हैं। भयंकर रोगों से पीड़ित असंख्य युद्धबन्दियों का उपचार किया जाता है और वे स्वास्थ्य-लाभ पाते हैं ।

जब ये लोग भारत आए तो अलग-अलग स्थानो पर चार बड़े अस्पतालों की स्थापना की गई थी जिनकी बेड संख्या प्रति अस्पताल छः सौ थी । अनेक चिकित्सक, शल्य चिकित्सक विशेषज्ञ एवं स्टाफ इन अस्पतालों

में काम करते हैं। चिकित्सा के आधुनिकतम कितने ही उपकरण व औषधियां इन अस्पतालों में जुटाई गई हैं। दो वर्ष से भी अधिक समय की अवधि में हजारों युद्धबन्दियों का इन अस्पतालों में इलाज चला। एक-से-एक बढ़िया औषधि यहां उपलब्ध है। समय के साथ-साथ बीमार युद्धबन्दियों की संख्या भी कम होती गई और तदनुसार इन चार अस्पतालों की बेड संख्या भी कम होती गई जैसा कि नीचे दिए गए विवरण से पता लगता है :—

	1-1-72	1-5-72	1-8-72	1-4-73
(अ)	600	500	400	250
(ब)	600	300	250	150
(स)	600	100	100	100
(द)	600	400	300	200

अन्य स्थानों पर भी जहां-जहां युद्धबन्दी नज़रबन्द है वहां स्थायी सैनिक, अर्द्ध-सैनिक एवं असैनिक अस्पतालों में इनका इलाज बड़ी तत्परता के साथ किया जा रहा है। बिना किसी पक्षपात के पूरी लगन से कार्य कर भारतीय सैनिक, चिकित्सा कोर ने अपने उद्देश्य—'सर्वे संतु निरामयाः' (सब नीरोग हों) को सार्थक कर दिखाया है।

प्रत्येक शिविर में एक एम० आई० रूम की व्यवस्था भी है जहां प्राथमिक उपचार एवं छोटी बीमारियों का इलाज चलता है। प्रत्येक एम० आई० रूम में एक भारतीय सैनिक चिकित्सक एवं दो पाकिस्तानी सैनिक चिकित्सक एवं दोनों ही देशों के कई नर्सिंग असिस्टेन्ट कार्य करते हैं। यहां भी अनेक औषधियां, इंजेक्शन एवं अन्य उपकरणों की व्यवस्था है। किसी भी युद्धबन्दी के बीमार होने पर तीनों चिकित्सक मिल रोगी की जांच कर रोग के निदान हेतु औषधि आदि बताते हैं। यदि कोई गंभीर रूप से बीमार हो तो तीनों ही चिकित्सकों की सिफारिश पर उसे बड़े अस्पताल में भरती करवा दिया जाता है। युद्धबन्दी कोई शिकायत होने पर प्रतिदिन पंक्तिबद्ध हो एम० आई० रूम की ओर जाते नज़र आते हैं। उनके स्वास्थ्य का वैसे ही ध्यान रखा जाता है जैसे भारतीय सैनिकों का। समय-समय

पर डाक्टर शिविर के कोने-कोने मे जाकर वहां की सफाई देखते हैं और युद्धवन्दियों को एकत्र कर घंटों तक उन्हें सफाई एवं स्वास्थ्य सबधी हिदायतें देते रहते हैं। शिविरों के आस-पास के इलाके में यदि किसी छूत की बीमारी फैलने की संभावना होती है तो उसकी रोकथाम के लिए प्रत्येक युद्धवन्दी को समय-समय पर टीके दिए जाते है। दो महीने में कम से कम एक बार अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति की ओर से कई रोग विशेषज्ञ शिविरों में युद्धवन्दियों से मिलने आते हैं। यही नही उदार भारत सरकार ने पाकिस्तान से भी कई रोग विशेषज्ञों को निमन्त्रित कर उन्हें शिविरों में युद्धवन्दियो से मिलने की छूट दी है। भारत द्वारा की गई युद्धवन्दियों के लिए चिकित्सा व्यवस्था से रेडक्रास के प्रतिनिधि एवं पाकिस्तानी रोग विशेषज्ञ प्रभावित हुए हैं।

औषधि संबंधी उपचार के अतिरिक्त कई लोगों को जिनकी आंखें कमजोर थीं, परीक्षण कर उन्हें ऐनकें भी दी गई। और कई ऐसे थे यहां आते समय जिनके मुंह मे एक दांत भी नही था अब वे हंस-हंसकर कृत्रिम जबड़े की दंतपंक्ति दिखाते घूमते हैं। और भारत सरकार की प्रशंसा करते नही अघाते।

प्रत्यावर्तन के समय भी प्रत्येक रेलगाड़ी के साथ पर्याप्त मात्रा में औषधियां, अन्य उपकरण भेजे जाते हैं एवं सैनिक चिकित्सा कोर के कई व्यक्ति साथ रहते है जो वाघा सीमा चौकी तक उन्हें सकुशल पहुंचाते है।

भारत सरकार ने ऋतु विशेष का ध्यान रख और पुराने कपड़ो के फट जाने पर सभी श्रेणी एव वर्ग के बन्दियों के लिए पर्याप्त वस्त्रो का प्रबंध किया है। वस्त्रादि संबंधी वे सभी नियम युद्धबंदियों पर भी लागू हैं जो भारतीय सैनिकों पर। प्रत्येक शिविर मे दर्जियो, मोचियो एवं धोबियो की व्यवस्था है जो युद्धबन्दियों के कपड़े फिट करने, बूट मरम्मत करने एव कपडे धोने का कार्य करते रहते है। इसके अतिरिक्त नाईयों की भी उचित व्यवस्था है। ये सभी कर्मचारी सभव हो तो युद्धवन्दियों में से ही होते हैं जो उनकी यूनिट के साथ ही भारत आए थे। यदि किसी वर्ग के कर्मचारी इनमें उपलब्ध नहीं होते तो उनके स्थान पर भारतीय कर्मचारियों की नियुक्ति की व्यवस्था है। इन कर्मचारियों की सख्या उसी अनुपात मे

मासिक पेशगी वेतन की यही दरें उन युद्धबन्दियों के लिए भी है जो अर्द्ध-सैनिक (पैरा मिलिटरी) यूनिटों से संबंधित हैं। असैनिक नजरबन्द पाकिस्तानी नागरिकों को यह वेतन पहले दो महीने तक रु० 5-प्रति माह और बाद मे रु० 10-प्रति माह दिया जाता रहा। इसके अतिरिक्त जून और जुलाई 1972 में बीस रुपए प्रति माह की दर से उन्हें अतिरिक्त भत्ता भी मिला है। यह आशा की गई थी कि असैनिक नजरबन्द पाकिस्तानी नागरिको को दिए जाने वाले इस अतिरिक्त व्यय को पाकिस्तान सरकार वहन कर भारत सरकार को वापस कर देगी। लेकिन उधर से इस प्रकार का कोई संकेत नही मिला और अगस्त 1972 से पुन: इन असैनिक नजरबंदियों को दस रुपया प्रति माह की दर से वेतन दिया जाने लगा। असैनिक पाकिस्तानी नागरिक चाहे किसी भी आयु का हो उसके वेतन मान मे कोई अन्तर नही है। अव्यस्कों का वेतन उनके परिवार के वरिष्ठ सदस्यो को दिया जाता है। जिस माह में बच्चा (भारत में रहते हुए) पैदा हुआ उसी महीने से उसे वेतन मिलना शुरू हो जाता है। वास्तव मे इस प्रकार के पेशगी वेतन का उद्देश्य युद्धबन्दी एवं अन्य नजरबंद नागरिको को उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताएं पूरी करने के लिए दिया जाता है जिनका प्रबन्ध सामान्यतया किसी भी देश के लिए असभव है क्योकि अलग-अलग व्यक्तियो की उनकी प्रकृति, वातावरण, रुचि एवं रीति-रिवाजो के, अनुसार अलग-अलग आवश्यकताएं होती हैं।

यह मासिक पेशगी वेतन सभी सैनिक एवं असैनिक युद्धबन्दियों को उसी तिथि से दिया जा रहा है जिस दिन उन्होने बंगला देश मे हथियार डालकर आत्म-समर्पण कर दिया था। इस प्रकार के भुगतान का प्रत्येक युद्धबंदियो का अलग-अलग रेकार्ड रखा जाता है। जिस पर युद्धबन्दी के हस्ताक्षर लिए जाते हैं और उनका एक वरिष्ठ प्रतिनिधि भी साक्षी के रूप मे इस भुगतान को प्रमाणित करता है। क्योंकि इसी रिकार्ड के आधार पर प्रत्यावर्तन पूर्ण होने पर भारत सरकार विश्व बैंक के माध्यम से पाकिस्तान से यह रुपया वसूलेगी। औसतन प्रतिमाह रु० 14-17 लाख रुपया की दर से भुगतान किए गए इस मासिक पेशगी वेतन पर 31 जनवरी 1974 तक कुल रु० 3-59 करोड़ का व्यय हुआ।

सुरक्षा की दृष्टि से यह वेतन भारत की वर्तमान मुद्रा प्रणाली के प्रचलित नोट या सिक्कों के रूप में न देकर टोकन मनी (सांकेतिक धन) के कूपन के रूप में दिया जाता है। ये कूपन 3 इंच गुणा 4 इंच के आकार के कुछ मोटे कागज के बने होते हैं और इनका मूल्य पाच पैसा, दस पैसा, पच्चीस पैसा, पचास पैसा, एक रुपया व पांच रुपया है। महीने की पहली तारीख को प्रत्येक युद्धबन्दी को नियमानुसार वेतन दिया जाता है। जिससे वे आवश्यकतानुसार महीने-भर का जेब खर्च चला सकें। युद्धबन्दियों को छूट है कि यदि वे चाहे तो अपना पूरा वेतन न लेकर उससे कम भी ले सकते हैं।

नित्य उपयोग मे आने वाली अनेक वस्तुओं की आपूर्ति के लिए प्रत्येक शिविर में एक कैंटीन की व्यवस्था है। जहां गोल्ड स्पाट, कोका-कोला, फल, सिगरेट, बीड़ी माचिस, अगरबत्ती, तेल, साबुन, ब्लेड, कागज, पैंसिल, पैन, लेटर पेड, स्याही, नोट बुक, टाफी, आचार, मक्खन, हालिक्स, विक्स वेंपोरिब, टूथ पेस्ट, टूथ ब्रश, मंजन, खेनी, तम्बाकू (खाने का) बनियान, लुगी, रूमाल, अंडर वियर, चादर, तौलिए, चप्पल, बटन, धागे-सुई, पालिश, मेहदी, कंघा, शीशा, शृंगार प्रसाधन, तस्बीह, जूते के फीते, भारत तथा विदेशों में लिखे जाने वाले पत्र आदि उपलब्ध होते है। जब भी किसी युद्धबन्दी को किसी वस्तु की जरूरत होती है, कूपन ले वह कैंटीन में जाता है और वांछनीय वस्तु को खरीद सकता है। अन्त मे प्रत्यावर्तन से पहले कैंटीन मे कुछ बड़े-बडे मूल्य के सामानों जैसे बिस्तर बंद, अटैची, घड़ी, रेडियो, प्रेशर कुकर, टाइम पीश, शाल, बक्स और कपड़े आदि की भी व्यवस्था की गई जिन्हें लौटते समय खरीदकर ये लोग अपने साथ ले जा सकें। टोकन मनी के माध्यम से कई लोग खाने-पीने की वस्तुएं और अपनी-अपनी रुचि की पुस्तकें खरीदकर भी उपयोग मे ला सकते हैं।

कैंटीन के सचालन एवं प्रबंध मे युद्धबन्दियो का पूरा-पूरा हाथ रहता है। शिविर के भारतीय प्रतिनिधियो की एक समिति गठित होती है जिसका कार्य कैंटीन में आवश्यकतानुसार सामान की आपूर्ति, बिक्री एवं कैंटीन के हिसाब खाते को रखना होता है। इन्हीं मे से कुछ युद्धबन्दी कैंटीन में सैल्स

मैन भी होते हैं जिन्हें कार्यवेतन के रूप में कैंटीन द्वारा बिक्री से प्राप्त लाभ में से रु० 30 प्रति माह अतिरिक्त दिया जाता है। लाभ का शेष भाग युद्धबन्दियो की अन्य सुविधाओं जैसे खेल-कूद का सामान, क्रीड़ा प्रतियोगिता मे प्रथम आने वाली टीम को पारितोषिक और विशेष पर्वों के अवसर पर अतिरिक्त खाने पर व्यय किया जाता है। महीने मे एक बार कैंटीन समिति की बैठक होती है जिसमें व्यय, लाभ और अतिरिक्त सामान की आपूर्ति पर विचार-विमर्श होता है। कैंटीन से उसी दर पर माल की बिक्री होती है जिस दर पर भारतीय सैनिक खरीदते हैं। सभी युद्धबन्दी अपनी-अपनी मनचाही वस्तुए प्राप्त होने पर कैंटीन व्यवस्था से संतुष्ट रहते हैं और प्रबंध की सराहना करते हैं।

शिविरों में धार्मिक स्वतन्त्रता

आज ईदउलजुहा है।

शीतकालीन फीकी-फीकी धूप मन को अच्छी लगती है। मैं शिविर के बराबर-बराबर चल रहा हूं। अन्दर लाउडस्पीकर पर पहले टक-टक फिर हैलो-हैलो की आवाज आती है। सभी युद्धबन्दी लाउडस्पीकर के पास एकत्र हो जाते है। एक सधा संयत स्वर सुनाई पड़ता है "···सलाम वाले कुम। आज ईद के मौके पर मैं अपने स्टाफ की ओर से और अपनी ओर से आप सब लोगों को ईद मुबारक देता हूं। मुझे पूरा-पूरा यकीन है कि आप लोग एक अच्छे सिपाही, एक अच्छे फौजी के नाते कैंप के कानून को मानते हुए आला दर्जे का डिसप्लिन (अनुशासन) कायम करेंगे और हमें कोई भी ऐसा मौका नहीं देंगे जिससे आप लोगों पर किसी किस्म की सख्ती की जाए। आज आप लोगों का ईद का त्यौहार है—खुशी से मनाएं, नमाज पढ़ें, कुरान पाक पढ़ें और इबादत करते हुए खुदा से दुआएं मांगें कि आप लोग जल्द-से-जल्द अपने वतन को लौट जाएं, अपने घरों को, अपने बीवी-बच्चों के बीच अपने दोस्तों और रिश्तेदारो के बीच। आज ईद के मौके पर आप लोगो के लिए बडे खाने का इन्तजाम किया गया है। एक बार फिर तहे-दिल से आप लोगों को ईद-मुबारक।" दक्षिण भारतीय शिविर कमान्डेन्ट पब्लिक एड्रेसिंग सिस्टम पर युद्धबन्दियों को ईद की बधाई और अनुशासन संबंधी निर्देश दे रहे है। उन्हें इतनी अच्छी उर्दू बोलते देख मुझे आश्चर्य होता है। उधर उनका भाषण समाप्त होते ही अंदर पट पट, पट पट, तालियों की आवाज से युद्धबन्दियों ने शिविर क्षेत्र गुंजा दिया है।

तितर-बितर हंस-हसकर वे ईद मिल रहे हैं, एक-दूसरे के गले लग रहे हैं। और वह युद्धबन्दी बिल्कुल अलग-अलग सबसे कटा-सा जमीन की ओर देखते हुए मायूस-सा चहलकदमी कर रहा है—शायद कल्पना मे ही पाकिस्तान स्थित अपने किसी प्रियजन के साथ गले लग ईद मिल रहा है। दूसरा युद्धबन्दी हसता हुआ आकर उसका हाथ पकड़कर एक ओर ले जाता है।

इनकी नजरबदी की अवधि मे जब-जब भी इनके पर्व आए, भारतीय आर्मी कमान्डर, एरिया कमान्डर, सब एरिया कमान्डर और सैक्टर कमान्डर की ओर से इन्हें बधाई सदेश आते रहे, शुभकामनाएं आती रहीं।

शिविरो मे युद्धबन्दियो को पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता है। यहा भी वे अपने विभिन्न धार्मिक कृत्यों को उतनी ही स्वतन्त्रता के साथ निभाते हैं जितनी स्वतन्त्रता से अपने देश, अपने घरों में निभा सकते थे। प्रत्येक युद्धबन्दी के लिए कुरान शरीफ की प्रति एव अन्य धार्मिक पुस्तको का प्रबन्ध कर दिया गया है। शिविर के प्रत्येक प्रभाग मे मौलवियो और धार्मिक शिक्षको की समुचित व्यवस्था है जो समय-समय पर युद्धबन्दियों को धार्मिक शिक्षा देते रहते हैं। मजहब पर तकरीर होती है, मजलिस और जमातें चलती है जहां युद्धबन्दियो की अनेक शंकाओ का समाधान होता है। यदि किसी शिविर मे धार्मिक शिक्षक का अभाव है तो दूसरे शिविरों से उसकी व्यवस्था कर दी जाती है। कभी-कभी इस्लाम धर्म के कई भारतीय वेत्ता भी शिविरो मे युद्धबन्दियों से मिलते रहते है और इन्हें भारत के मुसलमानों, उनकी इस्लामी तालीम, इस्लामी इबादतगाहों, मस्जिदो, मकबरो और ओकाफ के विषय में विस्तारपूर्वक बताते हैं। उन्हे बताते हैं कि भारत में उर्दू, फारसी और अरबी भाषाओं की कितनी अच्छी शिक्षा-व्यवस्था है, कि धर्मनिर्पेक्ष राज्य होने के कारण भारत में इस्लाम और इस्लामी सस्कृति का भविष्य कितना उज्जवल है। इन वक्ताओं मे सर्वश्री हसन नईम, प्रोफेसर रिजवी, प्रोफेसर मुनीश रजा, शाहबाज हुसैन, साज जेदी, अम-जुरसी गुलजार, मोहम्मद यूनुस आदि के नाम मुख्य हैं।

शिविर के बहुत निकट रहने के कारण रात्रि के पिछले प्रहर में अंदर से आती एक ऊंची और लम्बी सी आवाज के कारण कई बार आखें खुल

जाती है। "अल्लाह ss हो ss sss अकबर" की एक सदा शांत वातावरण मे गूंजती रहती है। दिन में भी कई बार यह आवाज सुनाई पड़ती है। प्रभाग मे रहने वाले प्रत्येक युद्धबन्दी को इस हाक के द्वारा सूचित किया जाता है कि नमाज का समय हो गया है।

देखते-ही-देखते चारों ओर से अधिकतर युद्धबन्दी कुल्ला वुजु कर सिर पर टोपी, गमछे, रूमाल बांधे, हाथ में जा नमाज (बिछाने का एक छोटा सा कपड़ा) लिए मस्जिद की ओर भागते दीख पड़ते हैं।

शिविर के प्रत्येक प्रभाग मे शिया और सुन्नी मत के अनुचरो की मस्जिदें अलग-अलग हैं जो या तो किसी लम्बे बैरक मे होती है जहा दरियां आदि बिछी रहती है, दिवारों पर गत्ते की तख्तियां लटकती रहती हैं जिन पर सुन्दर सुसज्जित अक्षरों में कुरान की आयते लिखी रहती हैं। कहीं-कही मस्जिद क्षेत्र खुले मैदान मे भी हैं जहा कच्ची मिट्टी की मीनारें बनाकर उस पर सफेदी कर दी गई है। मस्जिद क्षेत्र के आस पास की सफाई देखते ही बनती है। युद्धबन्दियो की सुविधानुसार मस्जिदों में प्रकाश व छाया आदि की समुचित व्यवस्था है। दिनचर्या में नमाज का निश्चित समय भी निर्धारित होता है। मस्जिद के पास ही किसी तख्ती पर नमाज के समय लिखे रहते है :

(1) फजर —0430 से 0500
(2) ज़ोहर —1400 से 1430
(3) असर —1600 से 1630
(4) मगरिब—1830 से 1900
(5) इशा —2000 से 2030

एक काले रग के टिन के टुकड़े पर अलग-अलग पांच घड़ियो की आकृति भी मैंने देखी है जिससे घड़ी के काटे नमाज के उपरोक्त समय निर्देशित करते है। सीमेंट के एक छोटे से खम्बे के चारों और जमीन पर बने कुछ निशान भी मैंने देखे है जिन पर खम्बे की छाया आकर दिन में होने वाली किसी नमाज विशेष का समय निर्देशित करती है।

इस्लाम धर्म के सिद्धांतों के अनुसार इबादत की जगह पर कोई पाबंदी नहीं है। इन युद्धबन्दियों में से भी कई बार एक-दो जने अलग-अलग निष्ठा

आदि से निवृत्त हो तारों के पीछे मैदान में युद्धबन्दी चहलकदमी कर रहे है। तीन-तीन या चार-चार के समूहों में वे तेजी से बराबर-बराबर कदम मिलाकर चल रहे हैं। मैदान का दूसरा सिरा आते ही फुर्ती से वापस आ जाते हैं। कुछ लाउडस्पीकर के पास खड़े रेडियो पाकिस्तान से समाचार सुन रहे हैं। उधर —खुले में मस्जिद के पास इशा की नमाज की तैयारियां हो रही हैं। अन्दर पता नहीं किस कोने से हांफनी सी निरन्तर हाय-हाय की आवाज सुनाई आ रही है। ऐसा कई दिन से हो रहा है। जब गाहे-बगाहे यह आवाज सुनाई पड़ती है। मुझे बताया गया "यह आवाज हाय-हाय की नहीं या अल्ला है, या-अल्लाह की है जो जल्दी-जल्दी बोले जाने से हाय-हाय सुनाई पड़ती है। ये लोग इस तरह मालिक को याद करते हुए अपने जिस्मों को खूब तकलीफ देकर कुश्ता बना रहे हैं।" "कुश्ता ? कैसे?" "जैसे सोने-चांदी या किसी मेटल को आग में फूंक-फूंककर कुश्ता बनाया जाता है वैसे ही इन्सान का भी कुश्ता बनता है।" 'वन्डर फुल'। मुझे तुरन्त स्वामी रामतीर्थ की उक्ति याद आ जाती है—"यह जानते हुए भी कि दूध में मक्खन है हम उसे देख नही पाते। इसी तरह खुदा भी जर्रे-जर्रे में मौजूद है। मक्खन पाने के लिए दूध को मथना पड़ता है, खुदा को पाने के लिए इन्सान को अपना हृदय मथना पड़ता है।"

शिविर मे किसी भी स्थान पर छोटे-छोटे समूहो में बैठे युद्धबन्दियों को कुरान शरीफ या अन्य किसी इस्लाम धर्म सम्बन्धी पुस्तक का अध्ययन करते देखा जा सकता है। वे धार्मिक तर्क मे उलझे रहते है। एक-दूसरे की शकाओ का समाधान करते रहते हैं। कितने ही व्यक्ति इनमें ऐसे भी मिलेंगे जो यहा आने के समय एकदम निरक्षर थे या किसी तरह से अपने हस्ताक्षर भर कर लिया करते थे। अब वे ही लोग कुरान का पाठ बड़े फर्राटे से करते हुए देखे जा सकते है। अन्य बंदी पढने-पढ़ाने मे उनकी सहायता करते हैं। उसके पास घंटों तक बैठकर हिज्जे कर इन्हे सही उच्चारण करना सिखाते हैं। पाकिस्तान के भिन्न-भिन्न प्रान्तो के रहने वालों और विभिन्न भाषा बोलने वालों को अरबी भाषा मे लिखा कुरान पढने में कुछ कठिनाई तो होती ही होगी। यद्यपि कुरान की आयतो का सही-सही अनुवाद उनके बराबर में उर्दू में भी दिया रहता है। उर्दू अनुवाद

को पढ़कर भी कुरान के अर्थ समझने का उद्देश्य पूरा किया जा सकता है। पर इन लोगों की धारणा है कि अरबी में कुरान पढ़ने की अलग महत्ता है उसका पुण्य भी अलग है। कई बार तो कितने ही युद्धबन्दियों को पंक्तिबद्ध बैठकर उच्च स्वर मे कुरान का पाठ करते देखा जा सकता है। जो अपनी अलग-अलग आयतो को अलग-अलग लय में पढ़ते हुए आगे-पीछे हिलते रहते है। एक आयत को सभी लोगों द्वारा एक साथ एक ही लय मे पढने की कोई मजबूरी नही है। मुझे यह सब ऐसा ही लगता है जैसे छोटे बच्चों की कोई कक्षा हो जिन्हे पाठ याद करने के लिए कहकर अध्यापक कही चला गया हो और विद्यार्थियो मे पाठ याद करने की होड़ लगी हो। इन्ही मे से कई ऊब जाने पर आंख बचाकर चुपचाप सड़क से गुजरने वालो को देखते रहते हैं। कुरान सामने खुली रखी रहती है।

कई युद्धबन्दियो की मुहजबानी कितनी ही बार मैं यह सुन चुका हूं कि अब तक का जीवन पाकिस्तान में व्यतीत करने के बाद भी उन्होंने धर्म का अध्ययन कर इतना ज्ञान अर्जित नही किया था जितना इन दिनों भारत मे रहकर कर लिया है। पाकिस्तानी नेवी का चालीस वर्षीय पेटी अफसर कहता है—"We are living the golden days of our life in India." (अपने जीवन के स्वर्णिम दिन हम भारत में जी रहे है) वह बहुत भावुक हो गया था। कई बार आवाज ही बता देती है कि बयान सच्चा है या झूठा। और 48 फील्ड रेजीमेंट के उस नौजवान के अनुसार—"असलियत मे पचानवे फीसदी लोगो को तो कैदी होने के बाद ही इस्लाम की सच्चाई जानने का मौका मिला है। अब तक तो मुल्ला और मौलवियो के बताए, मकतबों में पढ़ाए और तकरीरों में सुने इस्लाम पर ही यकीन करते थे। यहा आकर कई लोगों को कुरान जबानी याद हो गई है। मजहब के जितना नजदीक हम यहा रहे उतना पहले नहीं। अब हर आदमी अपने आप में एक मुल्ला है, एक मौलवी है जो घटों तक मजहब पर तकरीर कर दूसरों को अपने ख्यालों से मायल कर सकता है।" उसका मुंहफट साथी भी पीछे रहने वाला नही था—"हा सर। जिन्होंने कभी कुरान देखी भी नही थी अब वे कुरान पर अथार्टी बन गए हैं। देख लेना पाकिस्तान जाकर कई तो मस्जिदो के मौलवियों को रिप्लेस करेंगे।"

इस्लाम के विभिन्न मतों और संप्रदायों के मानने वालों को अपने-अपने मतानुसार धर्माचरण की सभी सुविधाएं उपलब्ध है। अनेको युद्धवन्दियों ने अपने एवं अपने प्रियजनों के लिए हजरत निजामुद्दीन की दरगाह शरीफ एव अन्य अनेक इबादतगाहों पर दुआएं मानने की मंशा से सिक्के, कपड़ों के टुकड़े या पुरजे आदि बंधे हुए धागो की माला शिविरों में निरीक्षणार्थ आएं इस्लाम के भारतीय धर्मवेत्ताओं के हाथो में सौपकर राहत अनुभव की है।

मैंने एक युद्धबन्दी का प्रार्थना पत्र देखा। वह बचपन से ही ख्वाजा मोहिनुदीन चिश्ती का अनुचर रहा है और अधिकतर समय, कुरान पढने, इबादत करने और ख्वाजा की याद में गुजार देता है। वैसे भी इस समार में उसका कोई सगा संबंधी नही है—ख्वाजा ने एक उसे दिन सपने मे दर्शन दिये और अजमेर शरीफ आने का हुक्म दिया है। अतः उसकी प्रार्थना है कि अब जब वह भारत में है तो किसी भी तरह से उसके अजमेर शरीफ तक जाने और आने का प्रबंध किया जाए ताकि जीवन में उसकी बस एक ही और अन्तिम तमन्ना पूरी हो सके। मानव स्वभाव है कि किसी विपद के सामने आने पर वह धर्म की ओर प्रवृत्त हो ईश्वर, अल्लाह, गॉड या किसी अन्य महानतम शक्ति का स्मरण कर प्रार्थना करने लगता है कि समय की कठिन परीक्षा में वह सफल हो। ऐसा ही इन युद्धवन्दियों के साथ भी हुआ जो समूह रूप मे या अलग-अलग हर समय इबादत कर खुदा से दुआएं मांगते रहते है। लगभग सभी युद्धवन्दियों के पास तस्वीह है। एकान्त में बैठ सौ या हजार बार अल्लाह का नाम लेकर ये तस्वीह का एक दाना आगे सरका देते हैं और इस बात का पूरा-पूरा रिकार्ड रखते है कि किस दिन उन्होने कितनी बार खुदा का नाम लिया।

वर्ष भर में मुसलमानों के कई पर्व आते है जैसे ईद-ऊल जुहा, ईद-उल-फितर, मोहर्रम आदि। शिविरो में पर्वों को मनाने की पूरी-पूरी छूट है और अपने रस्मो-रिवाज के अनुसार ये सभी पर्वों को मनाते रहते है। ईद आदि के अवसर पर भारत-सरकार युद्धबन्दियो को अतिरिक्त अनुदान भी देती है। जिस शान के साथ नाना प्रकार के भोजन, पकवान और मिठाईयां बनाकर ये लोग ईद मनाते है उस प्रकार उस शान के साथ कई

लोगों ने अपने घरों में भी ईद नहीं मनाई होगी। ऐसे अवसरों पर उन्हें एक प्रभाग से दूसरे प्रभाग और एक शिविर से दूसरे शिविरों में अपनी संगी-साथियों से ईद मिलने के लिए भेजने की समुचित व्यवस्था होती है। रमजान के दिनों में इन्हीं के सुझावों पर आवश्यकतानुसार इनकी दिनचर्या में परिवर्तन कर दिया जाता है, जिससे रोजे रखने में इन्हें कोई दिक्कत न हो। दैनिक सैनिकोचित अभ्यास पी० टी० आदि से भी छूट दे दी जाती है। सुबह सवेरे चार बजे बिजली, पानी का पूरा प्रबंध कर दिया जाता है। रेडिओं पर संगीत आदि सुनवाने के कार्यक्रम रद्द कर दिए जाते हैं। किसी प्रकार की सख्ती नहीं बरती जाती। इन दिनों ये पाकदामन रहकर अधिक से अधिक समय इबादत में लगाते हैं। इशा की नमाज का समय बढ़ जाता है। लगभग सभी लोग निष्ठापूर्वक रोजे रखते हैं। यह बात दूसरी है कि इनमें से कई लोग तो न चाहते हुए भी देखा-देखी मजबूरन रोजे रखते हैं इस भय से कि अन्य युद्धबन्दी उनसे घृणा न करने लगें। रोजा खुलने के समय अंदर एक घंटी बजती है जिसे सुन अन्दर भाग-दौड़ मच जाती है। ये लोग अपने-अपने मग-प्लेट लेकर तीव्रता से कुक हाउस की ओर भागते नजर आते हैं। ईद की पूर्व संध्या को चांद दिखाई देने पर इन लोगों के उल्लास की कोई सीमा नहीं होती। और अगले दिन बड़ी शान के साथ ईद मनाते हैं।

रमजान के दिनों में नवम्बर 1973 में कुछ लोग प्रत्यावर्तित हो पाकिस्तान गए हैं उन लोगों के लिए चलती गाड़ी में रोजा रखने और समय पर रोजा खुलने की समुचित व्यवस्था थी।

युद्धबन्दियों में शिया मतावलम्बियों की संख्या सुन्नियों की अपेक्षा कम है। एक शिविर के लगभग एक हजार आठ सौ युद्धबन्दियों में केवल साठ-सत्तर ही शिया मत के मानने वाले हैं। जब मुहर्रम के दिन आते हैं तो समयानुसार विभिन्न प्रभागों के सब शिया लोगों को एक प्रभाग में एकत्र कर दिया जाता है। मातम मनाने के दस दिनों में सुन्नियों को सख्त आदेश दिया जाता है कि वे मातम मनाने वालों के पास जाकर उनके कार्य में किसी प्रकार का व्यवधान न डालें।

"क्या झगड़ा हो सकता है?"

"क्यों नहीं हो सकता ?" प्रश्न पर प्रश्न। कई रात तक शिविर से उनके मातम मनाने और गम के नगमों की आवाजें आती रहती हैं। सुबह सकारे जब आंखें खुलती हैं फिर वही आवाज सुनाई देती रहती है। कई युद्धबन्दियों को मैंने शोक के प्रतीक काले वस्त्र पहने देखा है जो या तो पहले से ही उनके पास थे या उन्होंने दूसरे कपड़ों को काले रंग में रंग लिया था। इन दिनों रेडियों से संगीत के कार्यक्रम बंद रहते हैं और शिया लोग किसी खेल-कूद मनोरंजन के कार्यों में भाग नहीं लेते—रात में भोजन के पश्चात् मैं बाहर आया हूं। मातम मनाने की आवाज मेरे कानों आ रही है।

"इस माह में हम बेकसों का वारिसो आका दुनिया से सिधारा,
इस माह में क्यों रंज न हर दिल पै हो तारी आया है मुहर्रम।
गम रहता है 'सहबा' जो हुसैन इब्ने अली का हम शीयों के दिल में,
किस तरह कहो फिर न करें ताजियादारी आया है मुहर्रम।…"

मैं आगे ही आगे बढ़ता चला जाता हूं। सड़क से ही देखता हूं एक बड़े से टिन शेड के नीचे मजलिस जमी है उनमें से कुछ अर्द्धनग्न और अन्य बनियान आदि पहने हैं। सबसे आगे वाला व्यक्ति 'नोहा' पढ़ता है जिसे दर्द भरी आवाज मे पीछे खड़े सभी लोग दोहराते हैं। नोहे की एक-एक पंक्ति दर्द में डूबी हुई है। मैंने भारतीय शिया मुसलमानों को नोहा पढते देखा है—वे टीप के बन्द के साथ हाय हुसैन, हाय हुसैन कहते हुए एक गति से दाएं-बाएं हिलते हैं। छाती पीटते हैं। चाबुक, छुरे और कई अन्य घातक चीजों से अपने शरीर पर प्रहार कर अपने आपको यंत्रणा पहुंचाते हैं। सुना है इस क्रिया के फलस्वरूप शरीर पर हुए छोटे-छोटे घाव ताजिया की मिट्टी लगाने से ही ठीक हो जाते हैं। यद्यपि सुरक्षा हेतु इस प्रकार की वस्तुओं का प्रयोग युद्धबन्दियों के लिए वर्जित है फिर भी भावुकता के अतिरेक में उनके कुछ न कुछ कर सकने की संभावना रहती है। देर तक मंत्र-मुग्ध खड़ा मैं इन लोगों को देखता रहा। मैं सड़क पर इधर से उधर घूमना शुरू कर देता हूं मेरा मकसद फकत इतना है कि मैं यह जान सकूं कि भारतीय शिया और पाकिस्तानी शिया का एक ही ऐतिहासिक घटना को देखने का कौन-सा पहलू एक-दूसरे से कहां तक एक है और कहा तक

मुख्तलिफ। मैं उनके इतना निकट पहुंच चुका हूं कि अब सड़क पर खड़ा रहकर मैं साफ-साफ सुनने में समर्थ हूं। अन्दर से आवाज़ आ रही हैं—

अठारह चांद जलती जमी पर सुलाए हैं
जैनव विदा होने को हम तुमसे आए हैं
कहते थे ये हुसैन फलक के सताए है
लाशो पै लाशें दस्ते मुसीबत से लाए है
आदाएं दीं को सब्र के जौहर दिखाए है
सर को झुकाके जख्मे सिनां तन पें खाए हैं
हम जिन्दा रहके क्या करें अकबर नही रहे
शशमाहे बे-जुबा अली असगर नहीं रहे
इक शब के व्याहे कासिमे मुश्तर नहीं रहे
अब्बास बावफा से बिरादर नही रहे…'

संतरी मुझे नमस्कार कर मेरे पास से गुजर जाता है। मैं उसे जाते हुए देख रहा हूं। अब वह दूर पहुंच चुका है। मैं फिर अपना सारा ध्यान अन्दर से आती हुई आवाज की ओर लगा देता हूं। कोई बड़ी दर्द भरी आवाज मे पढ़ रहा है—

करबों बला से फिरके-जो जाना कभी वतन
सुगरा को मेरी दिल से लगा लेना ए बहन
कहना कि सब्र दे तुम्हें अब रब्बे जुल्मनन
ताराज़ कर्बला मे पिदर का हुआ चमन
सुगरा से कहना इब्ने हसन खू मे भर गये
अट्ठारह साल के अली अकबर गुजर गये
अब्बास भी वफा मे बडा नाम कर गये
असगर तडप के बाप के हाथों में मर गये

मैं अपनी कल्पना में अपने जन्म प्रदेश उत्तर-प्रदेश मे पहुंच गया। एक मजलिस चल रही है।…अपने मित्र मौ० सज्जाद रिजवी के साथ में भी गया हू। मेरठ के शाह अब्बास के पिताश्री का लिखा हुआ नोहा पढा जा रहा है।…

सुनती हूं जालिमों से सहने तुम्हें दिखाकर
पानी तलक पिया था मैदान में लिटाकर
ए जालिमों छुड़ाकर बच्चे को खुद ही आकर
खाया न रहम तुम पर मकतल से तुम न आए
हाथों पै फिर उठाकर हालत तेरी दिखाई
सूखे लबों पे तुमने सूखी जुबां फिराई
हलचल मची कुछ ऐसी रोने लगी खुदाई
कुरबा हो तुम पे मादर मकतल से तुम न आए
इकबाल कर्बला में ये जुल्म भी हुआ था
वेसीर का गला था और तीरे हुरमला था
खेमे में शह के खाली झूला पड़ा हुआ था
सब रो रहे थे कहकर मकतल से तुम न आए !...

ह्विसल जाने कब की बज चुकी थी। रोलकाल का समय है। सब लोग रोल काल ग्राऊन्ड में जाकर खड़े हो चुके हैं। मैं, "सुखन में सोज इलाही कहां से आता है, यह चीज़ वो है कि पत्थर को भी गुदाज करे," सोचता हुआ वापस लौट रहा हूं। यह नही कि कर्बला की कहानी केवल मुसलमान शायरों ने ही कही है, राष्ट्रीय धारा के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने भी 'काबा और कर्बला' नामक खण्ड काव्य लिखा है। एक दूसरे शायर—तो कर्बला में शहीद हुए हुसैन के लिए यहा तक लिख गये—

भारत मे अगर आ जाता हृदय में उतारा जाता
यूं चाद बनी हाशिम का धोके से न मारा जाता
यू नहर न रोकी जाती यू हाथ न काटे जाते
हाथो के सहारे मिलते कांधों पै उतारा जाता
चौखट से न उठते माथे हर ओर से पूजा जाता
इस देश की भाषाओं मे भगवान पुकारा जाता
सेना मे उसी की होते और मरके अमर हो जाते
दो प्रेम भरे शब्दों पर तन मन धन वारा जाता
तलवार जो पुन्य की खिचती क्या टिकते अरब के पापी
एक पाप का धारा आता एक खून का धारा जाता

पानी के लिए आने पर होता न लहू यूं पानी
प्यासे का सुवागत करने गंगा का किनारा जाता
इच्छा है ये सबकी खावर अब्बास सिराहने आते
दम तोड़ते हम भी रण में परणाम हमारा जाता

वस्तुत. होता भी वही। हमारे देश में सदा से ही धार्मिक सहिष्णुता रही है। "अल्लोपनिषद्" की रचना इसका ज्वलंत उदाहरण है। इमामहुसैन साहब खुद भी भारत आना चाहते थे। मैं अपने देश भारत पर गर्व करता हूं।···

वहदत की लै सुनी थी दुनियां ने जिस मका से
मीरे अरब को आई ठंडी हवा जहां से।
मेरा वतन वही है···

युद्धवन्दियो मे 2 या 3 प्रतिशत दूसरे धर्म, ईसाई, बौद्ध आदि के मानने वाले भी हैं। इनमें भी अधिकतर ईसाई हैं। इन लोगों के लिए भी अपने धर्म का पालन करने के लिए एवं अपने धर्म के रीति-रिवाजों के अनुसार रहने एवं उपासना की पूरी-पूरी छूट है। प्रत्येक ईसाई के लिए बाईबिल की एक प्रति का प्रबंध किया गया है जिसे पढकर वे अपने धार्मिक ज्ञान में वृद्धि कर सकें और धर्मानुसार आचरण कर सकें। उस प्रत्येक प्रभाग मे जहां ईसाई युद्धवन्दी नजरबंद हैं गिरजाघर के लिए सुरक्षित स्थान है जहा एकत्र हो वे प्रार्थना आदि करते है। क्रिसमस, ईस्टर एव गुड फ्राइडे आदि पर्वों के अवसर पर स्थानीय चर्च के पादरी को निमंत्रित कर उनके लिए धर्म प्रवचन का प्रबंध किया जाता है। इन्हें भी इन अवसरों पर भारत सरकार की ओर से विशेष अनुदान दिया जाता है ताकि अपने पर्वों को वे पूर्ण उत्साह एवं प्रसन्नता के साथ मना सकें। क्रिसमस के अवसर पर लकड़ी के ऊचे खंभों पर रग विरंगे क्रिसमस स्टार मैंने जलते देखे हैं जो एक कंदील मे अधिक पावर वाला बल्ब फिट कर बनाए हुए थे। आस-पास का क्षेत्र कागज की रंग-विरंगी झंडियों से सजाया गया था। केक और मोमबत्ती, धर्म-कीर्तन आदि की समुचित व्यवस्था होती है। ईसाई युद्धवन्दियों की सख्या कम होने के कारण विशेष

पर्वों पर इन्हें कई शिविरों में से निकालकर एक शिविर में एकत्र कर दिया जाता है जहां वे आपस में मिल त्योहार मनाते हैं, धर्म चर्चा करते हैं। परम्परानुगत पूजापाठ कर बाईबिल का अध्ययन करते हैं। वास्तव मे निर्धन, अल्प-संख्यक और एक मुस्लिम राष्ट्र के नागरिक होने के कारण इस प्रकार की धार्मिक स्वतंत्रता उन्हे पहले कभी नही मिली थी। यह वे स्वयं स्वीकारते हैं। धर्म-निर्पेक्ष राज्य होने के कारण भारत ने इन युद्ध-बन्दियों को भी धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान कर विश्व के समक्ष एक अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। रूसी कैम्प में कैद रहे अमेरिकी नस्ल के जान नोबुल, जिसे जर्मनी के पतन के समय गिरफ्तार किया गया था, ने लिखा है, "वोर्कुता में धर्म चर्चा यद्यपि एक गंभीर अपराध था परन्तु फिर भी प्रतिबंध तो टूटते ही थे। मेरे साथ के श्रमिक दासो मे लिथुआनिया के पादरी कैथोलिक उपदेशक और जर्मनी या लाटीबिया के रहने वाले कुछ प्रोटेस्टेन्ट और कुछ कट्टर किस्म के रूसी पादरी भी थे। कभी-कभी जब इतवार की छुट्टी होती डरते-डरते मैं लाटीविया के एक प्रोटेस्टैट पुरोहित का व्याख्यान सुनने चला जाया करता था, यद्यपि गार्ड हमें देखकर भी अनदेखा कर जाते थे फिर भी डर तो रहता ही था।"

अंधविश्वास और रूढिवादिता धर्म के दाएं बाएं—चलते हैं। इस्लाम भी इससे अछूता नहीं है। कितने ही युद्धबन्दी रोगों का इलाज आधुनिक औषधि विज्ञान के द्वारा न करके, कई धार्मिक अनुष्ठान और तागेतावीज बाधकर करने मे विश्वास करते है। कई लोग भूत-प्रेत मे अटूट विश्वास रखते हैं जो इन्हें यहां शिविरों मे भी सताते रहते है और कई तो रूबरू होकर बातें करते है। मैंने एक ऐसे युद्धबन्दी मौलवी के साथ बात की है जो निःसन्तान पति पत्नी की गोद केवल अपने तागे ताबीजो के बल पर भरने का दम रखता है। 1972-73 की सर्दियों में कैदियो को गर्म कमीजें (शर्ट, अंगोला ड्रेब) दी गई थी एक दूसरे की देखा देखी अधिकतर लोगों ने कलमा पढ़कर पहनने से पहले कमीजो को धोया। पता लगा कि उन्हें पाक किया गया है। प्रत्येक प्रभाग मे, हारमोनियम, ढोलक बैजो आदि दिए गए थे ताकि युद्धबन्दी अवकाश के क्षणो में अपना मनोरंजन कर सकें। अगले दिन ही मज़हब के कई ठेकेदारो ने कैम्प व्यवस्थापकों से अर्ज की थी कि

उनसे ये सब वस्तुएं वापस ले ली जाएं। कारण, वही कि इस्लाम में इसकी मुमानियत है अब इन्हें कौन समझाए कि तुगलक वश जिसके राज्य काल में दाढ़ियों को दरबार से बैठकर गाने का अवसर मिला, औरंगजेब या मुगलों के मुकाबले अधिक मौलिक मुसलमान थे। कहने को शेखचिश्ती, निजामुद्दीन औलिया, अमीर खुशरो, जिसने खिलजी काल में मौसीकी को उच्चस्थान दिलाया सभी मुस्लिम थे। लेकिन युद्धबन्दियों की काफी बड़ी संख्या इस संकीर्णता के विपक्ष मे है किन्तु वे समय समय पर संगीत के साथ धार्मिक कव्वालियों, फकीराना गजलो और लोक गीतों का आनन्द लेते रहते है।

वास्तव में सभी धर्मोंके आधारभूत सिद्धात एक से है, धर्म एक है जिसके रूप अनेक हैं। विश्व के विभिन्न भागों के निवासियों ने इन सिद्धांतों को अलग अलग रूप मे अपनाकर अपना-अपना अलग धर्म बना लिया है जिसका पालन कर मानव जाति आत्मिक शांति प्राप्त कर ईश्वर से अपना सम्बन्ध जोड़ने का प्रयास करती है। प्रत्येक धर्म में दूसरे धर्मों के प्रति आदर, उनके विकास और उपस्थिति को स्वीकारा गया है। कुरान शरीफ मे भी सर्व धर्म समव की भावना को लेकर धर्म की निर्पेक्षता पर कई आयतो मे भरपूर जोर दिया गया है। लेकिन कारण कुछ भी रहे हो। डा० रफीक जाकरिया के शब्दों में—"न तो मुसलमानों के साम्राज्यवादी विगत और न ही उनके उत्तेजनापूर्ण वर्तमान को इस्लाम के आधारभूत सिद्धान्तों से कुछ लेना देना शेष रह गया है। पैगम्बर के उपदेशों एवं अनुसरण से उनका दूर का भी कोई सम्बन्ध नही है।" इसका कारण बताया है डा० इकबाल ने—

> "शजर है फिर्का आराई तअस्सुब है समर इसका
> ये वो फल हैं जो जन्नत से निकलवाता है आदम को।"

अल्लाह के बताए रास्तो के विरुद्ध एक हाथ मे कुरान और दूसरे हाथ में आतंक की प्रतीक तलवार लेकर पनपे इस्लाम के अनुयायी अधिसंख्य युद्ध बन्दी अपनी धार्मिक कट्टरता दूसरे धर्मों के प्रति अनुदारता और संकीर्ण विचारो से भयंकर रूप मे ग्रसित हैं। इसके अनुसार हर गैर मुस्लिम

की वातो में रुचि नहीं ली और उनके भाषण को महज एक प्रोपेगन्डा बताया। उनसे उल्टे सीधे प्रश्न किए। उनसे पूछा गया कि अगर वे सच्चे मुसलमान है तो इनके नमाज इबादत के वक्त क्यू आते हैं, और कि बटवारे के समय पाकिस्तान न जाकर काफिरों के मुल्क हिन्दुस्तान मे क्यूं रह गए ? ये लोग सोच भी नही सकते थे कि भारतीय सेना में भी कितने ही मुसलमान अधिकारी एवं अन्य श्रेणी के सैनिक हैं। शिविरों मे सुरक्षा प्रवध एव प्रशासन में निहित भारतीय मुसलमान सैनिक अधिकारियों व सैनिकों की वास्तविकता पर ये कितने ही दिन तक अविश्वास करते रहे।

कट्टर धर्मांध युद्धवन्दियों में कई लोग ऐसे भी मिल जायेंगे जो उदार प्रवृत्ति और प्रगतिशील विचारों वाले हैं। रांची के एक पुस्तक विक्रेता, जो शिविरों मे पुस्तकें समाचार पत्र एव अन्य सभी प्रकार की पत्रिकाएं भेजता रहा है, के अनुसार विशेषतया अफसर युद्धवन्दियों में कई ऐसे ऐसे भी रहे जिन्होने गीता का अंग्रेजी अनुवाद खरीदकर बड़ी रुचि से पढ़ा। गीता की असंख्य प्रतिया उसके यहां से शिविरों में गई। अन्दर एक युद्धवन्दी ऐसा है जिसे धर्म कर्म मे कम ही रुचि है। मौलवियो से उसकी कभी नही बनती। ढकोसलों पर उसकी आस्था नहीं। कहता है—"वड़े वड़े मुजरिम टिक्का खा और याह्या खा को जब तक इतने जुल्मो सितम करके भी कुछ गम नही तो मुझ अदना से सिपाही को किस बात का डर है जिसने जिन्दगी में कोई गुनाह नही किया। यकीनन खुदा के यहा मेरी जगह इन लोगों से अलग होगी। विल्कुल अलग।" कितने ही लोग ऐसे हैं। जिन्हें मजवूरन सब लोगों के साथ खड़े होकर नमाज पढ़नी पड़ती है, मजलिस और जमातों मे शरीक होना पडता है। उन्हें भय है कि यदि वे ऐसा नही करेंगे तो ये लोग उनका तिरस्कार कर देंगे, उनसे नफरत करेंगे और पाकिस्तान लौटने पर उच्चाधिकारियो से उनकी शिकायत कर उल्टे सीधे इलजाम लगाकर उनके व्यक्तित्व को ही सदेहास्पद वना देंगे। केवल प्रदर्शन के लिए दूसरों की देखा देखी, पाकिस्तान लौटने पर सदेहास्पद वनने के भय से विभिन्न धार्मिक कृत्यों को निभाने के कई प्रमाण मिले हैं। वापस पाकिस्तान लौटते समय इनमें से अधिकतर ने रास्ते मे ही अपनी लम्बी लम्बी दाढ़िया साफ कर ली थीं। एक दिन शिविर से एक युद्धवदी वापस पाकिस्तान लौट रहा

था। उसका साजोसामान बाहर वाले द्वार के पास रखा था और कपड़े के थैले में कुरान तार पर टंगी थी। जब जीप उसे स्टेशन तक ले जाने के लिए आई तो उसने कुरान शरीफ को छोड़कर शेष सब सामान उठा लिया और कुरान वहीं टंगी रह गई। यह थी उनकी आस्था—

हर कोई मस्ते मए जोके तन आसानी है
तुम मुसल्मा हो यह अन्दाजे मुसलमानी है ?

इस विषय पर मैं कुछ और भी कहना चाहता हूं लेकिन एक मजबूरी है—

नमी गर्दीद कोतह रिश्तये मानी रिहा कर्दम
हिकायत बूद बे पायां ब खामोशी अदा कर्दम

(अर्थ का धागा छोटा नहीं हो सकता था अतः मैंने उसे छोड़ दिया। कथा असीम थी इसलिए मैंने अब मौनता के ही रूप में उसे कहना उचित समझा।) .

☐ ☐

युद्धबन्दियों का मनोरंजन

(क्रीड़ा, मनोरंजन एवं शिक्षा आदि)

"तीक्ष्ण काले भवे तीक्ष्णो मृदु काले मृदु भवतः"—मानव के जहा गरम होने की आवश्यकता हो वहा गरम होना चाहिए और जहा नरम होने की अपेक्षा हो वहां नरम। युद्धबन्दियों के प्रति भारतीय सेना और भारत सरकार के व्यवहार पर यह उक्ति अक्षरशः सत्य उतरती है। युद्ध में पाकिस्तानी सेना के साथ यदि शत्रुवत व्यवहार किया गया है तो हमारे सुरक्षा उत्तरदायित्व मे आने के पश्चात् उसके साथ मानवतापूर्ण व्यवहार भी किया गया है। यह कहने मे भी कतई अतिश्योक्ति न होगी कि जेनेवा सम्मेलन की शर्तों का पालन जैसा भारत मे युद्धबन्दियो के साथ हुआ है वैसा शायद ही ससार के किसी देश ने किया हो। जहा जिस प्रकार का प्रावधान है उस की वैसी ही व्यवस्था हमने यहा करके दिखाई।

कोई भी मौसम हो अलस्सुबह शिविरों मे नजरबद पाक युद्धबन्दियो को आप बाहर खुले मे पाएगे। ये अपनी अपनी टुकड़ी के अनुसार नियम बद्ध रहकर अपने वरिष्ठ साथी के आदेश पर विभिन्न प्रकार के सैनिक अभ्यास एव व्यायाम करते मिलेंगे। उसके बाद खेल-कूद का कार्यक्रम चलता है। इनके लिए क्रीड़ा सम्बन्धी विविध उपकरण जुटाए गए हैं। कही वॉली वॉल का खेल हो रहा है तो कही कोई फुटवाल की गेंद के पीछे दौड रहा है। कुछ वास्केट वॉल मे मस्त हैं तो कुछ लोग वैडमिटन के मैदान मे हैं और कुछ टेनिकोट के। कुछ लोग टेविल टेनिस खेल रहे होते हैं

तो कुछ वाड्डी (सिंध में खेला जाने वाला कबड्डी की तरह का एक खेल) में खो गए हैं और कुछ लोग दौड़ लगा रहे हैं। इसके अतिरिक्त इन-डोर खेलों—केरम, शतरंज साप-सीडी, लिडो एव ताश—की भी व्यवस्था है। अधिकारी युद्धवन्दियों के लिए क्रिकेट खेलने की सुविधा भी है। खेल कूद सम्बन्धी सामग्री एवं उपकरण पुराने पड़ने पर तुरन्त बदल दिए जाते है।

उस दिन छुट्टी थी। मैं बाहर बैठा समाचार पत्र पढ़ रहा था। अचानक अन्दर शिविर मे भगदड मच गई। सभी एक ओर भाग रहे थे। सदेह--निवारण के लिए मैं शिविर के निकट गया। उधर बैरक के पीछे दो युद्धवन्दियों में कुश्ती हो रही थी। देर तक दाव पेंच चलाते रहे। एक धोबी पाट मारता तो दूसरा कैंची लगाने की कोशिश करता। ताल ठोंकी जाती रही। दर्शक मजा लेते रहे।

खेलों के प्रति रुचि एव उत्साह बढ़ाने एवं प्रोत्साहन देने के लिए क्रीड़ा प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जाता है। एक ही शिविर के विभिन्न प्रभागो में वॉली वॉल वास्केट वाल और वाड्डी आदि के मैच होते रहते हैं। विजेता टीम पुरस्कृत होती रहती है। प्रत्येक शिविर मे एक स्पोर्टस आफिसर, जे० सी० ओ० या एन० सी० ओ० होता है जिसकी नियुक्ति शिविर क्रीडा समिति करती है। खेल कूद मे सुधार उपकरणो की आपूर्ति एव क्रीडा प्रतियोगिताओं का आयोजन भी क्रीडा समिति ही करती है। मैच देखने के लिए शिविर कमान्डेन्ट एव अन्य अधिकारियों को निमन्त्रित किया जाता है। जो खेल समाप्ति पर पुरस्कार वितरण करते है। समस्त खिलाड़ियों मे से सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी को अलग से पुरस्कार दिया जाता है। विजयी टीमों में प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाली टीमों को भी पुरस्कृत किया जाता है। पुरस्कार मे बनियान, मोजे, सिगरेट, साबुन व अन्य खाने पीने की चीजें होती हैं। मुझे वॉलीवॉल और बास्केट बाल के कई मैच देखने का अवसर मिला है। बाल के साथ दोनों टीमों का उत्साह बढ़ता जाता है। दोनो टीमो के समर्थक तालियां बजाकर एवं हूटिंग करके खिलाड़ियों को प्रोत्साहन देते रहते हैं। कभी कभी यही हूटिंग मुसीबत का कारण भी बन जाती है। गया में वॉली वॉल के मैच मे दोनों टीमो के खिलाड़ियों एव समर्थकों में तू-तू मैं मैं शुरू होकर झगड़ा इस हद

तक बढ़ा कि आपस मे मारपीट हो गई और एक युद्धबन्दी को अपनी जान से हाथ धोना पडा। एक दिन बास्केट बॉल के मैच में एक युद्धबन्दी बैठा हुआ 'रनिग कमेन्ट्री' (आखों देखे हाल का वणन) दे रहा था जिससे खेल का मजा दुगुना बढ़ गया। कैसे होते है वे लोग जो प्रत्येक क्षण से खुशिया छीनने का प्रयास करते रहते हैं। दूसरो को भी हंसाते है और अपने आप भी हसते है। पाला बदलने के साथ साथ वह भी अपना स्थान बदलते हैं। और कुछ देर के लिए ही सही, घर गाव सगे सम्बन्धियों से दूर दराज, कैद मे असख्य बिखरने वाले आसुओं को खुशी में बदलने का प्रयास कर रहा है अन्त मे (शायद मेरे ही कहने पर) उसे भी एक कन्सोलेशन प्राइज मिल गया था। इन्हीं मे से कई पाकिस्तान के राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी भी मिल जाएगे जो पाकिस्तान की ओर से कई कई बार विदेशी टीमो के साथ खेल चुके है। सावले, छरहरे बदन के उस खिलाडी से मेरी बात हुई है जो निरंतर कई मिनट तक बॉली बॉल के मैदान मे केवल सिर मे बॉल को हिट करता रह सकता है। उस दिन मैंने शिविर मे एक मील लम्बी दौड़ की प्रतियोगिता देखी। सात आठ युद्धबन्दी मुंह में रुमाल दबाए एक पक्ति में खड़े है। ह्विसिल बजी और प्रतियोगियो ने दौडना शुरू कर दिया। उत्साह बढ़ाने के लिए दर्शक आवाजे लगाते रहे, सीटियां बजाते रहे, एक चक्कर, दूसरा, तीसरा और चौथा चक्कर पूरा हुआ। अब विजयी को कधे पर उठा बे नाच रहे हैं झूम रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय खेलो के समय बड़ी रूचि से रेडियो पर ये आखों देखा हाल सुना करते हैं। औलपिक मे जिस दिन पाकिस्तान ने भारत को हराया था उस दिन ये लोग फूले नही समा रहे थे। इनकी खुशी का कोई ठिकाना नही था। जिसे भी देखो भारत-पाक हाकी मैच की बात कर रहा था। कई ने तो पाकिस्तान के मुख्य खिलाड़ियो से अपने सबध और अन्तरग परिचय की बात भी कही थी। हालैन्ड में आयोजित हाकी विश्व कप प्रतियोगिता मे जब भारत ने पाकिस्तान को हराया तो इनकी प्रतिक्रिया बस— इन्डिया का मुल्क है—थी। उनके चेहरों पर तभी रौनक आई जब हालैन्ड ने भारत को हराकर उच्चतम स्थान प्राप्त किया। जब भी भारत और पाकिस्तान की टीमो ने विदेशो मे अलग-अलग क्रिकेट मैच खेले तो ये लोग

बड़े चाव से आखों देखा हाल सुनते थे।

युद्धवन्दियो के मनोरजन हेतु शिविरों मे अनेक भारतीय फिल्मे दिखाई गई। कई धर्मांध शायद इन फिल्मों की ओर न जाते होंगे अन्यथा 90 से 95 प्रतिशत युद्धवन्दी बड़ी रुचि से भारतीय फिल्मे देखते है। हा, एक बात देखने में आई कि मुस्लिम परिवेश अथवा सामाजिक पृष्ठभूमि पर बनी फिल्मों मे जैसी रुचि इन लोगों ने ली वैसी अन्य फिल्मों मे नहीं। साहब बीबी और गुलाम, चौदवी का चाद, मुगले आज़म, बेनजीर, पालकी, मेरे महबूब, मेरे हुज़ूर और पाकीज़ा आदि फिल्मों की बार बार मांग होती है। अवसर मिलते ही भारतीय उच्च अधिकारियो से अपनी पसद की फिल्मे दुबारा देखने की प्रार्थना की गई और यथासंभव उनकी मांग की पूर्ति भी की जाती है। कुछ ऐसे भी प्रबुद्ध दर्शक हैं जिन्हे न्यू-वेव फिल्में सबसे अच्छी लगी। आनन्द, सत्यकाम, सफ़र, खामोशी, दस्तक, बावर्ची और गुड्डी तथा उपहार की कथावस्तु, निर्देशन, छायाकन, अभिनय, सवाद एव टेक्नीक आदि को पसन्द कर इन्होने भारतीय फिल्म उद्योग मे हो रही प्रगति की सराहना की। भारतीय फिल्मी गीत तो ये लोग पाकिस्तान में भी सुनते होंगे और यहां भी ये ही गीत सुनने का अवसर मिला है। कई लता मगेशकर, मुकेश की आवाज और लहजे को पसन्द करते है तो कई मोहम्मद रफी, किशोर, आशा भौंसले की आवाज के दिवाने है। अपने प्रिय गायक द्वारा गाए गए गीतो को कठ कर ये गुन-गुनाते फिरते है। मैने एक युद्धवन्दी की नोटबुक देखी है जिसमे भारतीय फिल्मो के लगभग दो सौ गीत उर्दू में लिखे है। आकाशवाणी, विविध भारती, रेडियो श्रीलका और पाकिस्तान से भी दिन-भर सगीत के कार्यक्रम शिविरो मे सुनाए जाते है।

शिविर के प्रत्येक प्रभाग में वाचनालय एवं पुस्तकालय है जिसमें अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं में विविध विषयो पर असख्य पुस्तकें रखी हैं जिन्हे युद्धवन्दी पढ़कर ज्ञानार्जन करते रहते है। अधिकतर पुस्तकें, इस्लाम के इतिहास दर्शन, उर्दू की प्रगति, सामाजिक उपन्यास, कविता एव निबन्ध आदि पर है। अर्नेस्ट हेमिंग्वे, रवीन्द्रनाथ टैगोर, प्रेमचन्द, जोश मलीहाबादी, अनन्त गोपाल शेवड़े से लेकर गुलशन नंदा तक की पुस्तके इन

पुस्तकालयो मे है। उर्दू और अंग्रेजी के कई दैनिक समाचारपत्र एव कितनी ही साप्ताहिक, पाक्षिक, एव मासिक पत्र-पत्रिकाए भी इन पुस्तकालयों में मिलेगी, जैसे इलस्ट्रेटेड वीकली आव इन्डिया, द स्टेटस्मैन, टाईम्स आव इन्डिया, मिलाप, आजकल, जम्हूरियत, नया दौर आदि। इसके अतिरिक्त कुछ लोग अपने खर्चे पर भी फिल्मी पत्रिकाए एव विविध विषयों पर पुस्तकें मगवा कर पढते हैं। अफसर युद्धवन्दियों के लिए रीडर्स डाईजेस्ट, टाइम, (पत्रिका) और न्यूजवीक जैसी पत्रिकाओ का भी प्रवन्ध है।

समय समय पर शिविरो मे, मुशायरे, नाटक आदि सांस्कृतिक कार्य-क्रमों का आयोजन भी किया जाता है। नमकुम (राची) स्थित एक शिविर मे ऐसा ही एक कार्य क्रम देखने का अवसर मुझे मिला जो स्थानीय कव्वालो की सहायता से अफसर वन्दियो के प्रभाग में आयोजित किया गया था। उस रात हवा कुछ तेज और ठन्डी थी। आकाश मे बादल चियडे-चियडे से फैले थे जैसे दूध फट गया हो। थोडी देर पहले हल्की-सी वारिश भी हुई थी। एक खुले शेड के नीचे मंच बनाया गया था। प्रकाश और लाउड-स्पीकर का समुचित प्रबन्ध था। एक ओर मेजर रैंक तक के युद्धवन्दी बैंचो पर बैठे थे। बरावर मे थोडा हटकर अफसर के अर्दली एवं अन्य युद्धवन्दी दरिया बिछाए बैठे थे और उनके पीछे लेफ्टिनैन्ट कर्नल और अन्य सेनाओं के उच्च अधिकारी कुर्सियो पर बैठे थे। वरिष्ठ युद्धवन्दी कर्नल रज़ा खा शिविर अधिकारियों के साथ बैठे थे। साधारण कद, चायना कैप लम्बी दाढी एव मुह मे पनामा सिगरेट, यह था उनका वाह्य व्यक्तित्व, वे एक सैनिक अधिकारी कम और कलाकार ज्यादा लग रहे थे, जैसे पेन्टर मक-बूल फिदा हुसेन हो। उधर कार्यक्रम आरम्भ हुआ। आस-पास के प्रभागों मे युद्धवन्दी दूर तारो के पीछे ही खड़े इस कार्यक्रम का आनन्द लेते रहे। कव्वाली किसी धार्मिक दौर से गुजर रही थी जिसमें नीचे दरी पर बैठने वाले ही अधिक रुचि ले रहे थे। एक वार तो एक युद्धवन्दी कव्वाली सुनते-सुनते ऐसा भावुक हो गया कि रोते हुए अपने आप को ही मारना-पीटना शुरू कर दिया। आस-पास के साथी उसे पकड़कर बैठाते और शात करते और वह उठ-उठकर मंच की ओर जाने का प्रयास करता। अन्तत. एक मेजर युद्धवन्दी ने उठ कर उसे सख्त हिदायत दी कि उसे

बैठना है तो आराम से बैठे नही तो उठ कर चला जाए। कव्वाली रग पकड़ती जा रही थी—सुनने वाले रस ले रहे थे। बार-बार मरहबा-मरहबा और मुकर्रर-मुकर्रर की आवाजें आती। हर कतए के बाद अफसर एक साथ हाय कहते, तालियों से ताल लगाते। कोई साहिर लुधियानवी की फरमाईश करता तो कोई शकील बदायूनी की। जब इलैक्ट्रिक गिटार पर फिल्म पाकीजा के गाने, इन्ही लोगो ने'''की धुन बजी तो कई अफसर और अन्य श्रेणी के युद्धबन्दियों ने अपने-अपने स्थान छोड़ मच के सामने आकर नाचना शुरू कर दिया। शेष तालिया और चुटकियों से ताल लगाकर धुन के साथ-साथ गाने लगे। शायद यह उत्कर्ष था। दस मिनट तक यही धुन बजती रही। वे मस्त हो नाचते रहे। उसके बाद चायपान हुआ। युद्धबन्दी भाग-भाग कर कलाकारो को चाय और सिगरेट पिला-पिलाकर उनकी मेहमान नवाजी करते रहे। कर्नल रजा खा सिगरेट पर सिगरेट फूकते रहे। कव्वाली फिर आरम्भ हुई'''"साकी तेरे मयखाने का सबसे पहुंचा हुआ रिन्द हूं मैं।" पक्ति फिर-फिर नाज नखरो से दुहराहे गई—

'साकी तेरे मयखाने का सबसे पहुंचा हुआ रिंद हूं मैं'

इसके अतिरिक्त अपने आप भी ये लोग यदा कदा सांस्कृतिक कार्य क्रम करते रहते है। एक अन्य अवसर पर मैंने देखा, बेरक दर्शको से ठसा-ठस भरा हुआ है। एक बड़े बेरक के बीचो बीच मच है। हसी मैजाक, वाह-वाही हो रही है, एक हल्के बदन, साफ रग का युद्धबन्दी लड़की के मेकअप मे नाच-नाचकर पंजाबी गीत गा रहा है :—

"ढोल सिपाईया वे, कित्थे गया दिल ला,
मेरा माहिया वे, कित्थे'''"

दर्शको के बीच से उठकर एक युवक ने—

"नी तैनू पीणगे नमीवा वाले
नशे दी ए बन्द बोतले'

की आवाज बुलन्द की। एक दूसरे ने साथ ही साथ गाना शुरू कर दिया—

"गल कर साड्डे नाल खोलके
निम्मा निम्मा हंसके, ते मिट्ठा मिट्ठा बोलके
जावी न जवानी साड्डी रोल के
गल कर··· ··· ···"

दर्शकों के पेट में हंसते-हंसते बल पड़ गये। आंखें छलक आईं—सभी मस्त हो वाहवाही कर रहे हैं। दूसरा आईटम नागा नृत्य, पुरानी बोरियों को काटकर उन्होने कटिवस्त्र बनाए। मेकअप कर अपने चेहरों को विभिन्न रंगों से रंगा। गत्तो को काट-काटकर सिर पर ताज पहने—गत्तों या पतली लकडियो पर सिगरेट के पैकट से निकली पन्नी चिपका कर, तीर भाला और तलवार बनाए—वे नृत्य करते हैं—चारों ओर घूमते हुए। युद्ध नृत्य लगता है—अनजानी भाषा बोल रहे हैं। सफल अभिनय। भुट्टो, याह्या खा और टिक्का खा को सबोधित कर गजलें, कव्वालिया लोक गीत कहीं-कही होते रहते है। कुछ देर के लिए सब अपने दुःख दर्द को भूल गए हैं। वे भूल गए हैं कि अपने घरो से दूर वे दूसरे देश मे क़ैदी है जिन पर चारों ओर सशस्त्र पहरा है।

आषाढस्य प्रथम दिवस—तो नही था, हा, कई महीने की दम घोट गर्मी और धूल भरी लूओं के पश्चात् एक सांझ देखा कि दो काले बादल पहाड़ी के पीछे से सहमे से चुपचाप झाक रहे थे। थोड़ी देर मे पता नही कहा से तेज हवा आकर उन्हें शिविरो की ओर हाक लाई। देखते ही देखते धरती आकाश और चारो ओर का वातावरण मटमैले पीले पन से ओत-प्रोत हो गया। हम मैस के सामने बरामदे मे बैठे ताजा समाचारो पर बहस कर रहे थे। सभी की दृष्टि बार-बार आकाश मे घिरे बादलों की ओर चली जाती थी। अब तक पसीने से तर रहने वाले बदन को ठंडी हवा दुलार रही थी। सामने कटीले तारों की पंक्तियो के पीछे लगभग सौ गज की दूरी पर क़ैदी भी ठडी हवा का आनन्द ले रहे थे। और लो! मटमैला पीला वाता-रण सुरमई हो गया। पानी की मोटी-मोटी बूदे पडने लगी उधर अनेक बन्दी बेरको से केवल कच्छा पहने भाग-भागकर मैदान में आने लगे। जैसे-जैसे बारिश तेज होती गई युद्धबन्दियों की खुशी मे भी ज्वार आता गया। वे "हो, हो" कर चिल्लाते हुए बारिश में भीगते इधर-इधर भागने लगे। कुछ ने

कबड्डी खेलना शुरू कर दिया, कई कुश्ती में उलझ गए। कुछ एक दूसरे के पीछे भाग कर उसे पकड़ने का प्रयास कर रहे थे। कोई बैठक लगा रहा था तो कोई दंड पेल रहा था। कई लोग कमर से कमर भिड़ाकर एक दूसरे की बगलों में हाथ डाल कैंची सी लगाते और दूसरे को अपनी कमर पर लादकर हंसते हुए दूर तक ले जाते। फिर दूसरे भी वैसा ही करते। घेरा बनाकर वे नाच रहे हैं, कलाबाजियां खा रहे हैं। गर्मी से शायद पीछा छूट जाएगा। अब गर्म और धूल भरी हवाएं नहीं चलेंगी। यह मौसम की पहली वर्षा थी ओले पड़ने लगे और वे बिलकुल बच्चों की मानिंद उन्हें उठा-उठाकर खाने लगे। जो लोग ओले उठा नहीं पा रहे थे उन्हें दूसरे लोग उठा-उठा कर देने लगे। कुछ बोतलें उठा लाए और उनमें ओले भरने लगे। पूर्ण उल्लास ! लगा जैसे वे कैदी नहीं हैं, कैद में नहीं है। मौसम खराब होने पर यदि वे, क्रुद्ध दृष्टि से आकाश की ओर देखते हुए बड़बड़ा सकते हैं तो मौसम अच्छा होने पर उनका मन हिल्लोरें लेने लगता है। मुझे गाव का अपना बचपन याद आ गया। हम भी ऐसा ही करते थे। मुहल्ले भर के बच्चे पहली वर्षा में बाहर गलियों में निकल आते थे। बड़े-बूढ़ों की धमकियों और नाराजी के बावजूद बारिश में इधर-उधर भाग कर नहाते, कागज की नावें बनाकर छोटी-छोटी प्रवाहिकाओं में डालते, छोटे-छोटे पुल बनाते और मस्ती मे खेलते रहते थे।

मानव देश-काल की परिधि से उन्मुक्त होता है। युद्धबन्दी डेविड शिविर के पुस्तकालय मे उपलब्ध कृषि संबंधी सभी पुस्तकें कई-कई बार पढ़ चुका था। कृषि उसका प्रिय विषय था और स्वतन्त्र होने पर एक कृषक बनने का इरादा बना चुका था। कल्पना ही मे वह अपने कृषि फार्म (शिविर क्षेत्र) पर घूमता हुआ फसलों की बुआई और कटाई करता था। उसे ठीक-ठीक याद रहता था कि कितने दिन मे कौन फसल कितनी बड़ी हो जाती है। बुआई-कटाई के समय यदि बारिश हो जाए तो वह दिन भर मौसम को कोसता रहता था। अधिक बारिश हो जाने पर वह अपनी भेड़ों के रेवड़ को नीचे स्थान से ऊचे स्थान की ओर ले जाने का उपक्रम किया करता था। जबकि वास्तविकता यह थी कि शिविर में उसके पास न तो कोई भेड़ होती थी और न ही कृषि फार्म। आशा-निराशा और भावी जीवन की मधुर

कल्पित योजनाओं से हमारा पीछा कहाँ छूटता है चाहे हम किसी भी परिस्थिति में क्यूं न हों।

शिविरों में नजरबन्द पाकिस्तानी युद्धबन्दियों के विविध कार्य कलाप देखने का मुझे मौका मिला है। सभी लोग अपनी-अपनी रुचि के अनुसार ऐसे कार्य करते रहते हैं जिसमें उन्हें आत्मिक शांति और थोड़ा सुख मिले और कैद का समय भी गुजर जाए। मैंने कई युद्धबन्दी देखे हैं जो कूची और रंगों के इतने माहिर हैं कि कैसे भी प्राकृतिक दृश्य को छोटे से बोर्ड पर सजीव कर डालते हैं। कई ऐसे भी हैं जो प्रकृति की ओर रूझान न रख कर व्यक्ति चित्रों में रुचि रखते हैं। एक ऐसे ही युद्धबन्दी ए० एफ० मलिक द्वारा बनाई भारतीय एक्ट्रेस हेमामालिनी की तस्वीर मैंने देखी जिसमें रंगों की छटा और रूप की अनुकृति देखते ही बनती है। कुछ लोगों ने श्वेत व काले रंग से जानमाज पर मस्जिद को बड़ी सुन्दरता से हूबहू उतारा। मेरे सामने दरी को खोलकर उन्होंने बड़ी प्रसन्नता एवं उत्साह के साथ बताया—"यहाँ पर नमाजी के पैर होने चाहिए और झुकने पर यहाँ आकर उसकी पेशानी टिकनी चाहिए।"

—कल क्रिसमस है। मैं 'ए' प्रभाग में बैठा हूं और सामने ही तार-बीथी के पार 'बी' प्रभाग के ईसाई युद्धबन्दी एक नीले रंग के दो गज कपड़े पर गिरजाघर बना रहे हैं। विभिन्न रंगों का प्रयोग कर उन्होंने कपड़े पर गिरजाघर को सजीव कर दिया है। बड़ी ही तन्मयता और कौशल से वे रंग और कूची का प्रयोग कर रहे हैं और मैं एकटक तारों के पीछे बनते गिरजाघर को देख रहा हूं कई लोग रूमालों पर अपने प्रियजन और मित्रों के रंगीन चित्र बनाकर भेजते हैं और कई केवल पेन, स्याहियां पेंसिल से दो हाथ आपस में मिलते हुए दिखाते हैं। विशेषतया ईद की बधाई आदि से सम्बन्धित इनके द्वारा लिखित असंख्य पत्र मैंने देखे, जिन पर विभिन्न प्रकार के रंगों और बेल-बूटों की सजावट कर उर्दू में कलात्मक ढंग से—"ईद मुबारक" लिखा रहता है।

—"तुम्हारी टोपी बड़ी अच्छी दीख रही है। मैं रउफ को कह रहा हूं। काले और सफेद रंग के ऊनी धागों से बनी बलूचिस्तान में पहनी जाने

वाली टोपी उसने पहन रखी है। पता नहीं टोपी की बनावट या उसका पहनने का ढग मुझे भाया था।

—यह मैंने अभी-अभी बनाई है सर।

—क्या मतलब ? यानि तुम बुनना भी जानते हो।

—हा सर। यहा तो मुश्किल यह है कि मनपसन्द ऊन और सलाईया नही मिलती वरना इससे भी बढ़िया टोपिया बुनकर मे दिखा सकता हू।

एक दिन मैंने उससे भी बढ़िया टोपी देखी। सिंध-बलूचिस्तान में पहनी जाने वाली टोपी। नेवी के एक युद्धबन्दी ने अपनी पुरानी नीली पैंट के टुकड़े से बनाई थी। इसकी सिलाई हाथ से ही कर उस पर रंग-बिरंगे धागों से कशीदाकारी की गई और टूटे हुए थर्मस के शीशे के छोटे-छोटे चमकीले टुकड़े भी उसमें लगाए गए थे। पहनने पर ऐसा लगता है जैसे तारों भरी रात को कोई सिर पर उठाए घूम रहा हो।

सर्दिया शुरू होने से बहुत पहले ही शिविरों में अनेकों युद्धबन्दी अपनी पुरानी जर्सी, जुराब, स्वेटर या दस्तानों को उधेड़ कर ऊन के गोले बनाते हुए दिखाई देंगे। फिर ये आपस में धागों का विनिमय करते हैं। एक के पास केवल नीले रग का धागा है तो वह दूसरे से खाकी रंग का धागा ले लेगा और उतनी ही मात्रा में उसे नीला धागा दे देगा। फिर तीसरे से इसी प्रकार सफेद रंग का धागा ले लेगा। तब ये लोग पक्तिबद्ध बैठ औरतों की तरह बातें करते हुए और बड़ी फुर्ती से सलाईया चलाते हुए दिखाई देते हैं। हाथ का काम पहले करने की एक होड़ सी उनमें रहती है। साथ ही डिजाइन और सफाई का भी ध्यान रखा जाता है। कोई स्वेटर बुन रहा है। कोई टोपी तैयार कर रहा है। कोई जुराबों पर लगा है तो कोई दास्तानों की बुनाई में कशीदाकारी का बेहतरीन नमूना पेश कर रहा है। जो लोग बुनना नही जानते थे वे लोग थोड़ी रुचि लेने पर सीख गए हैं और अब अपनी आवश्यकता की वस्तुए स्वय ही तैयार कर लेते है। कभी-कभी एक दूसरो के लिए भी ऊनी वस्त्रों की बुनाई कर ये दूसरे शिविरों मे भेजते रहते हैं।

मैं शिविर मे युद्धबन्दियो से घिरा बैठा हूं। खूब हसी-मजाक चल रहा है। ताजा समाचारो पर अपने-अपने विचार प्रकट किए जा रहे है। तास

से बचने के लिए मैंने कुर्सी और मेज बाहर पेड़ के नीचे लगवा रखी है। आस-पास बैंचो पर वे बैठे हैं, कुछ खड़े है और कुछ नीचे बैठे ही बातों का आनन्द ले रहे है। अब तक वे मुझे अच्छी तरह पहचानने लगे है। निडर होकर पास आ जाते हैं। खुलकर बातें कर लेते है। उनमें से एक कह रहा है—

हमे तो लगता ही नही कि हम कैद में है।

कौन मुल्क कैदियो के लिए इतना कर सकता है? दूसरे कैदी ने स्वयं से ही प्रश्न सा करते हुए कहा। तभी एक अन्य कैदी यहा हुक्का पीता हुआ आया। पीपल की दो पतली लकड़ियो को गर्म लोहे से बरमा कर नली बना ली है, और उन्हे सुलेखा स्याही की बड़ी दवात में फिट किया हुआ है। दवात मे पानी भरकर उसके मुह पर छोटा-सा गीला कपडा भी लपेट दिया है। छोटी वाली नली में सिगरेट रख और बड़ी नली से मुह सटाकर वह गुरड-गुरड कर रहा है। देखकर आश्चर्य हुआ था। मुहू से बेसाख्ता निकल गया--वाह। वैरी गुड। तभी पास बैठा शरीफ बोलता है—

सर! यह तो कुछ भी नही। इससे भी अच्छे-अच्छे नमूने मिलेंगे।

अच्छा! तो फिर दिखाओ। मेरे कहते ही पास खड़ा हुआ युद्धबन्दी एक ओर भाग गया। थोड़ी ही देर में एक हुक्का ताजा कर, चिलम भर मेरे सामने मेज पर रखते हुए बोला—

'पीजिए सर!' मैं अपने सामने रखे हुक्के को देखते हुए सोचता रहा कि आवश्यकता आविष्कार की जननी कैसे हुई होगी। पालसन मक्खन के डिब्बे का ऊपरी सिरा काट कर उसमे हार्लिक्स की बोतल नीचे से फिट की हुई है जिसके मुह पर पीपल की दो लकड़िया लगी है बिल्कुल हुक्के की शक्ल मे। छोटी और बडी नलियों पर रंग-बिरंगे ऊनी धागे और फुन्दे लिपटे है बडी नली के मुह पर पीतल की एक और छोटी-सी नली फिट है। गारे की चिलम आग में पका कर ऊपर रखी है। लपटदार हुक्का तैयार है।

क्या कैंटीन मे तैयार तम्बाकू भी मिलती है?

नही सर। सिगरेट का तम्बाकू निकालकर उसमे दो दाने चीनी और दो बूद पानी मिलाकर दो बार मसल दो तो तम्बाकू तैयार। मेरे पूछने पर

शरीफ बताता है।

कुछ कैदियों ने जमीन में हुक्का बनाया था जो बाद में बन्द कर दिया गया। गाव में चरवाहों को मैंने उस प्रकार का हुक्का पीते हुए देखा है। जमीन मे लगभग एक फुट लम्बी एक इच चौड़ी और उतनी ही गहरी एक नाली बना दोनों सिरे खुले छोड़ उसे ढाप दिया जाता है। एक सिरे पर मिट्टी का छोटा-सा कंकड रख उस पर तम्बाकू और आग रख देते हैं और तब दूसरे सिरे में एक नली फिट कर हुक्का पीने वाले औंधे लेट नली से मुह सटाकर बारी-बारी से हुक्का पीते हैं।

एक दिन मैने देखा कि उन्होने एक पाच-छः फुट लम्बी मजबूत लकडी के दोनों सिरो पर मिट्टी से भरी दो बोरिया बांध रखी है। पूछने पर पता लगा कि यह भारोत्तोलन का अभ्यास करने के लिए बनाया गया है। कुछ बन्दी अपने शौक के लिए ऐसा काम भी कर देते हैं जिससे उन्हे बाद मे सजा भुगतनी पड़ती है। एक युद्धबन्दी ने कम्बल को काट-छाटकर एक बहुत सुन्दर डिजायन का ओवरकोट बनाया था। ऐसा करने पर उसे सैनिक दड विधान के अन्तर्गत कुछ दिन की सजा मिली थी।

कई लोगों की रुचि पढ़ने-लिखने मे रहती है। मूड बन जाने पर शायरी भी करते है, नज्में, शेर और गजल कहते है। कई बाहर जाने वाले पत्र भी पद्य मे लिखते है। कई लोग अपनी-अपनी डायरिया भी लिख रहे है। जो अपने वतन लौटने पर वर्षों तक उन्हें यहां बिताए जीवन की याद दिलाती रहेगी। कुछ लोग कहानियो और उपन्यास तक लिखने मे लगे हैं। एक दिन एक कैदी ने शार्टहैंड (आशुलिपि) सीखने के लिए मुझसे पिट्मैन्स शार्टहैड गाइड का प्रबन्ध करने की विनय की थी। मैने उसकी प्रार्थना शिविर अधिकारियो तक पहुचा दी। एक महीने बाद ही पता लगा कि शार्टहैंड सीखने वालों की एक क्लास अलग से चलती है जहाँ एकत्र होकर वे लोग शार्टहैड का अध्ययन करते है, अध्ययन के तौर तरीकों पर विचार-विमर्श करते है। अपनी योग्यता एव उन्नति जाचने के लिए एक दूसरे की परीक्षा लेते हैं। इनके लिए कई पुस्तकों का प्रबंध कर दिया गया है। उधर पाकिस्तानी वायु सेना का एक युद्धबन्दी डबल ग्रेजुएट है। वर्षों तक विदेश में रहने के कारण वह अग्रेजी भाषा का अच्छा ज्ञान अर्जित कर

बजती है और अन्य साथियों को उसके इस नासिक-राग में कतई भी रुचि नही है। मजबूरन उसे सबसे अलग सोना पड़ता है। भारतीय चित्रपट के हास्य अभिनेता असित सेन जैसी आवाज़ और लहज़े में वह कहता रहता है—मेरे पीछे बदूकों से लैस ये गार्ड क्यूं लगा रखे हैं। मुझे तो संगीन से धकेल कर कोई कैंप से बाहर निकाले तो भी मैं जाने के लिए तैयार नही।' ये लोग आपस मे एक-दूसरे को जनरल नियाजी, याह्याखा और मिया भुट्टो कहकर पुकारते है और उनकी खिल्ली उडाते हैं।

हास्य, व्यंग्य, विनोद मे भी ये लोग किसी से कम नही। दिन मे कई बार 'रोल कॉल' होती है। सब युद्धवन्दियों को एकत्र कर उनकी गणना की जाती है। एक दिन रोल कॉल के तुरन्त बाद एक युद्धवन्दी ने बडी गभीरता और आश्चर्य के साथ दूसरे से पूछा—

...ये हिन्दुस्तानी हमे बार-बार क्यू गिनते है ?

...बेचारे गिनती सीख रहे हैं उनसे गिनना नही आता। दूसरे ने उतनी ही संजीदगी के साथ तुरन्त उत्तर दिया। एरिक विलियम्स ने भी रोल कॉल के समय दो युद्धवन्दियो की बातचीत का वर्णन इस प्रकार किया है—

...Why do we always stand in five ? "Peter complained—"it 'used to be threes in the last camp.

...These are army goons. "David said—"the other were Air Force goons. Army goons can only Count in fives.

अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के सदस्य जब शिविरों मे उनसे मिलने आए तो एक कैदी ने उनसे कहा था—"पाकिस्तान जाकर हमारा—रिलीफ (अन्य व्यक्ति) भिजवा दीजिए सिर्फ एक महीने के लिए। हम फिर वापस आ जाएगे। सुनकर बेचारा जरमन अवाक् रह गया था। जब भी रेडक्रास वाले आते है तो वे युद्धवन्दियों को आश्वासन देकर जाते है बार-बार ऐसा ही होता है। ऐसे ही एक अवसर पर भोले-भाले दीखने वाले एक युद्धवन्दी ने बड़ी अदा के साथ सिराज लखनवी का शेर—

"वही लहजा, वही तेवर कसम है तेरे वादो की
जरा भी शक नही होता कि यह झूठी तसल्ली है।"

चुका है। दिन-भर में वह अंग्रेजी की तीन-चार कक्षाएं चलाता है उसके छात्रों की सख्या दिन व दिन बढती जाती है। प्रत्येक विद्यार्थी कैन्टीन से नोट बुक, पैंसिल आदि खरीदकर कक्षा मे बताई गई बातें नोट करता रहता है। समय समय पर अध्यापक अपने विद्यार्थियो की परीक्षा लेता है। अक देता है। जहा ये गलती करते है वहाँ व्याकरण के विभिन्न नियमो से उन्हें भली भाति परिचित कराता है। कुछ युद्धबन्दी अधिकारी विदेशी भाषाए, जर्मन, फ्रेंच, रूसी, पश्तो, अरबी आदि सीखने मे लगे है और अब तक अपनी रुचि की भाषा का अच्छा ज्ञान अर्जित कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त युद्धबन्दी अपनी रुचि के विषयो इन्जीनियरिंग, मैडिकल साईंस, सर्जरी, मिलिटरी हिस्ट्री आदि पर भारतीय लेखको द्वारा लिखित पुस्तकें खरीदकर पढते रहते है। एक ऐसे युद्धबन्दी अफसर से मेरी बात हुई जो बी० एस० सी० मे पढाए जाने वाले कई विषयों की पुस्तकें कलकत्ता से मगा रहा था। कारण पूछने पर उसने बताया कि उसके लडके के पास भी वही विषय है जो बटवारे से पहले दिल्ली मे पढ़ते हुए उसके पास थे। और वे लेखक उस अफसर के गुरु रह चुके है। जब मैंने उससे पूछा कि क्या भारतीय पाठ्य-पुस्तको का स्तर पाकिस्तान मे उपलब्ध पुस्तकों से अच्छा है तो उसने बडे आत्म विश्वास से उत्तर दिया था—"अनडाउटेडली" (निस्सदेह) मैंने ऐसे युद्धबन्दियो को देखा है जो तमिल भाषा मे बड़ी अच्छी तरह बात कर लेते है। कई ऐसे भी है जो हिन्दी पढ़ लेते है। शायद यह बगला भाषा का प्रभाव रहा होगा।

जिन शिविरो मे असैनिक, परिवार व बच्चे नजरबद है वहा प्रत्येक शिविर मे पाठशालाए खोल दी गई है जिनमें प्रत्येक कक्षा के विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते है। भारत सरकार ने इन विद्यार्थियो के लिए सभी पाठ्य-पुस्तको व अन्य सामग्री की व्यवस्था कर दी है। अन्तर्राष्ट्रीय रेड-क्रास समिति की ओर से भी इन विद्यार्थियों के पास विविध विषयो की पुस्तके आती रहती हैं।

उधर एक खानसामा युनुस है, लम्बा-चौड़ा ऊचा कद और भारी तोंद वाला। मज़ाक मे सब लोग उसे कमजोरी खा कहते है। कोई भी उसे अपने कमरे या बैरक मे सुलाने के लिए तैयार नही होता क्योंकि उसकी नाक

बजती है और अन्य साथियों को उसके इस नासिक-राग मे कतई भी रुचि नही है। मजबूरन उसे सबसे अलग सोना पडता है। भारतीय चित्रपट के हास्य अभिनेता असित सेन जैसी आवाज़ और लहजे में वह कहता रहता है—मेरे पीछे बंदूकों से लैस ये गार्ड क्यू लगा रखे है। मुझे तो सगीन से धकेल कर कोई कैंप से बाहर निकाले तो भी मैं जाने के लिए तैयार नही।' ये लोग आपस मे एक-दूसरे को जनरल नियाजी, याह्याखा और मिया भुट्टो कहकर पुकारते है और उनकी खिल्ली उडाते है।

हास्य, व्यग्य, विनोद मे भी ये लोग किसी से कम नही। दिन मे कई बार 'रोल कॉल' होती है। सब युद्धबन्दियो को एकत्र कर उनकी गणना की जाती है। एक दिन रोल कॉल के तुरन्त बाद एकयुद्धबन्दी ने बड़ी गभीरता और आश्चर्य के साथ दूसरे से पूछा—

···ये हिन्दुस्तानी हमें बार-बार क्यू गिनते है ?

···बेचारे गिनती सीख रहे है उनसे गिनना नही आता। दूसरे ने उतनी ही सजीदगी के साथ तुरन्त उत्तर दिया। एरिक विलियम्स ने भी रोल कॉल के समय दो युद्धबन्दियों की बातचीत का वर्णन इस प्रकार किया है—

···Why do we always stand in five? "Peter complained—"it used to be threes in the last camp.

···These are army goons. "David said—"the other were Air Force goons. Army goons can only Count in fives.

अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के सदस्य जब शिविरों में उनसे मिलने आए तो एक कैदी ने उनसे कहा था—"पाकिस्तान जाकर हमारा—रिलीफ (अन्य व्यक्ति) भिजवा दीजिए सिर्फ एक महीने के लिए। हम फिर वापस आ जाएगे। सुनकर बेचारा जरमन अवाक् रह गया था। जब भी रेडक्रास वाले आते है तो वे युद्धबन्दियो को आश्वासन देकर जाते हैं बार-बार ऐसा ही होता है। ऐसे ही एक अवसर पर भोले-भाले दीखने वाले एक युद्धबन्दी ने बड़ी अदा के साथ सिराज लखनवी का शेर—

"वही लहजा, वही तेवर कसम है तेरे वादो की
जरा भी शक नही होता कि यह झूठी तसल्ली है।"

पढ़ दिया था। अंग्रेजी मे जब इसका अनुवाद करके उस रेडक्रास वाले को बताया गया तो वह एक खिसियानी हंसी हंसकर रह गया था।

एक दिन एक युद्धवन्दी अपने तेज धावक होने की कितनी ही देर से शेखी बघार रहा था। ऊबकर पास बैठे दूसरे युद्धवन्दी ने उससे प्रश्न किया'''तुम इतनी तेज दौडते हो तो इन हिन्दुस्तानियों ने कैसे पकड़ लिया तुम्हें। इतनी रफ्तार से तो तुम रावलपिन्डी पहुंच सकते थे। धावक युद्ध-बन्दी तिलमिलाकर रह गया।

अधेड आयु वाला युद्धवन्दी एक नटखट युवा युद्धवन्दी की गुस्ताखियो से क्षुब्ध होकर उसे उपदेश देने लगा।

—मिया भुट्टो जब तुम्हारी उम्र के थे तो वे विलायत मे पढ़ रहे थे।

—और मिया भुट्टो जब अब आपकी उम्र के हैं पाकिस्तान के सदर है (प्रधानमन्त्री बनने से पहले श्री भुट्टो पाकिस्तान के राष्ट्रपति थे) यह सुनकर उपदेशक युद्धवन्दी उठकर चला गया।

दो युद्धवन्दियो की आपसी वार्ता—

—इन हिन्दुस्तानियो की गैरहाजरी मे तुम उनकी खिलाफत करते हो और सामने पडने पर कुत्ते की तरह दुम हिलाकर तलवे चाटने को तैयार हो जाते हो क्या बात है ?

—मैं अपने आपको दोहराना पसन्द नही करता।

—देखो, वह हिन्दुस्तानी मेजर होते हुए भी दफ्तर पैदल आ रहा है।

—क्योकि उसे जिन्दगी मे सरन्डर (आत्मसमर्पण) नही करना है।

बहुधा ही अपने प्रभाग (भारतीय) अधिकारी से वे अर्ज करते रहते है—सर ! हमे अब एन्यूवल लीव (वार्षिक अवकाश) दे दीजिए। हम वायदा करते है छुट्टी काटकर वापस आ जाएगे। सर ! आज मेरा भी रेलवे वारन्ट (यात्रा करने के लिए) कटवा दीजिए। सर ! आपके यहा आए एक साल हो गया है अब एक इन्क्रीमेंट (वेतन मे वार्षिक वृद्धि) दिलवा दीजिए।

कितने ही असैनिक युद्धबन्दी अपने परिवारो सहित विभिन्न शिविरों मे नजरबन्द है। इन परिवारो में बच्चे जन्मते रहते है। इस स्थिति से चिंतित हो एक अबोध कैदी ने अपने विचार प्रकट किए—"जब हम

हिन्दुस्तान में आए तो सिर्फ 93,000 थे जिनकी कैफियत हिन्दुस्तान ने पाकिस्तान को दी थी। इन लोगों ने (असैनिकों) दो साल मे कितने ही बच्चे पैदा किए है। मुझे डर है कि कही पाकिस्तान सिर्फ 93,000 को ही वापस लेने पर अड़ जाए तो ऐसी हालत मे घर पहुचने के लिए मेरा नम्बर शायद न आए। एक और कैदी के विचार—"हिन्दुस्तान दो साल तक इतने लोगो को यहा रखकर पाकिस्तान की फैमिली प्लानिंग (परिवार नियोजन) मे वडी मदद कर रहा है। जबकि अपने मुल्क में इसे पूरा करने के लिए करोड़ों रुपए खर्च करता है।"

□ □

शिविर में युद्धबन्दियों का दैनिक जीवन

(अय्याशी, पारस्परिक अनैक्य एवं अनुशासन)

बलात्कार, लूट, आगजनी और नरसंहार के काले कारनामों के बीच बंगला देश का उद्‌भव हुआ, यह किसी से छिपा नहीं है। बंग-बन्धु शेख मुजीबुर्रहमान के मार्च 1972 के एक बयान के अनुसार पाकिस्तानी सिपाहियों ने बंगला देश की लगभग 2 लाख लड़कियों व स्त्रियों के साथ बलात्कार किया जिनमे से 79,000 लड़की और स्त्रिया गर्भवती पाई गई। गैर-सरकारी सूत्रों के अनुसार यह संख्या वास्तविक आंकड़ों से बहुत कम है। बहरहाल संख्या कुछ भी रही हो यह साफ जाहिर है कि बंगला देश में पाकिस्तानी सैनिकों ने बड़े पैमाने पर बलात्कार करके जनरल टिक्का खां की इस धमकी, कि वह—पूर्व बंगाल में अवैध संतानों की एक पूरी पीढ़ी छोड़ेगा—को सार्थक करने में कोई कसर नहीं छोडी। छात्राओं के होस्टलों पर दिन दहाड़े हमला, हत्या, लूट, बलात्कार और अमानवीय व्यवहार के कितने ही प्रमाण मिले हैं। यही नहीं अपनी कामुक प्रवृत्ति के लिए कुख्यात, विलासिता में आकंठ डूबे पाकिस्तान के वे सैनिक, छावनियों, मोर्चों और बकरों तक में लड़कियों को अपने साथ रखते रहे, उन्हें शराब पीने व नग्न नृत्य करने पर मजबूर करते रहे। गर्भवती होने पर उन्हें छोड़ दिया जाता या गोली मार दी जाती। स्थानीय रजाकार और मुजाहिदों के जत्थे आस-पास के गली गांवों से स्त्रियों को पकड़-पकड़कर छावनियों में 'सप्लाई' करते थे। ऐसा क्यों हुआ ? शायद इसका एक कारण यह भी रहा है कि पाकिस्तान में स्त्रियों को बराबर के अधिकार नहीं है। उन्हें ऐशो इशरत

का एक साधन, तुच्छ नापाक प्राणी समझा जाता है। और इसी से वहां के नागरिकों के लिए कामुकता और अय्याशी विवशता-सी बन गई है।

भारत के युद्धबन्दी शिविरों में एक लम्बे समय नजरबन्द रहकर इन लोगों की कामुकता पर एक जबरदस्त कुठाराघात हुआ। आरंभ में कुछ महीनों तक सब अनुशासित रहे। लेकिन आदत आदत होती है। एक साधन समाप्त होने पर विकल्प ढूंढ़ निकालना मानव का स्वभाव है। इस बार वासना-पूर्ति का निशाना बने इन्हीं के साथी (कमजोर, और अल्पायु) युद्धबन्दी। बलिष्ठ और वरिष्ठ युद्धबन्दियों ने जबरन समलिंगी संबंध स्थापित कर उनसे पुरुष वेश्या का काम लेना शुरू कर दिया। प्रत्येक शिविर में इस तरह के अनेकों उदाहरण सामने आए। परिणामस्वरूप युद्धबन्दियों में आए दिन के झगड़े, मारपीट, फिरका-परस्ती और गुटबाजी ने जन्म लिया। सरे-आम दिन दहाड़े एक युद्धबन्दी शिविर की बाहर वाली दो में से पहली कंटीले तारों की पंक्ति कूद गया। यह उनके लिए वर्जित क्षेत्र है। जिसमें प्रवेश करने पर उन्हें बन्दूक का निशाना बनाया जा सकता है। पास के संतरी ने राईफल साधी—युद्धबन्दी ने दोनों हाथ खड़े कर दिए। गोली नहीं चली। उसे पकड़कर बाहर लाया गया। पेशी हुई। उसने रो-रोकर बयान दिए कि दूसरे युद्धबन्दी अमानवीय व्यवहार करने के इरादे से उसे तंग करते रहते हैं और इस प्रकार के व्यवहार के बजाय उसने गोली का निशाना बनना बेहतर समझा। यही सोचकर वह वर्जित क्षेत्र में आ कूदा था। उसका प्रबाग बदल दिया गया। पर यह समाधान नहीं। कभी-कभी रात्रि में हमारे संतरियों के सामने ही एकांत में तारों के पीछे ये लोग इस तरह की हरकतों में सक्रिय पाए गए। कभी-कभी आपसी मतभेद के कारण भी ये तीन-चार जने इकट्ठे होकर किसी युद्धबन्दी को बेइज्जत करने में बाज नहीं आते। अय्याशी के कीटाणु तो जैसे इनके खून में मिले हुए हैं।

अमेरिका से एक युद्धबन्दी का पत्र आया था जिसमें केवल तीन लड़कियों के नग्न चित्र थे—एक नीग्रो और दो श्वेत अमेरिकन। ईरान से भी एक पत्र में एक कैबरे नर्तकी का छायाचित्र था जिसके शरीर पर कपड़ों का होना न होना बराबर था। कामोत्तेजक पुस्तकों और पत्रिकाओं की इनकी मांग भारत पूरी नहीं कर सका इसका कई युद्धबन्दियों को बड़ा अफसोस

रहा होगा। मजे की बात यह है कि ये लोग स्वय अपने पतन का कारण अपनी और अपने अफसरों की अय्याशी मानते हैं। एक कैदी की डायरी में लिखा था कि जब इनकी पल्टन सीमा पर मुक्ति वाहिनी और भारतीय सेना के साथ लड़ रही थी तो पल्टन के वरिष्ठ कमान्डर पीछे अपने ठिकानों पर शराब व शबाब के नशे में चूर रहते थे। आगे फ्रन्ट पर क्या चल रहा है इस सबसे बेखबर। किसी तरह यदि उनसे संबंध स्थापित किया भी जाता तो वे आवश्यक निर्देश दे उचित कार्यवाही करने मे पूर्णतया असमर्थ थे। उनसे यदि एम्युनिशन (गोला बारूद) मांगा जाता तो वे राशन भेज देते थे और राशन की जगह एम्युनिशन। एक दिन बातें करते हुए अपने उच्च सैनिक अधिकारियों की अय्याशी की भर्त्सना एवं भारतीय सैनिक अधिकारियों से उनकी तुलना करते हुए पाकिस्तानी नौ सेना के एक युद्धबन्दी ने बताया था—"यही वजह है कि इण्डिया अपनी डिफेंस मे इतना कामयाब है। हमारे यहां अफसर और जवान में धरती आसमान का फर्क है। आपके अफसरों मे सुपरियरिटी काम्प्लेक्स नही है और न ही फिजूलखर्ची। आपके यहा अफसर पीस (शान्ति काल) में भी जवान के कंधे से कंधा मिलाकर काम करते हैं और हमारे यहा सभी अय्याशी मे ही लगे रहते हैं। आपके यहां सभी रैंक के कई अफसर एक ही जीप में बैठकर अपनी ड्यूटी पर आते जाते है। हमारे यहा एक सैकिन्ड लेफिटनैन्ट को भी कही आने-जाने के लिए अलग से कार चाहिए। आपके यहा मैंने अपनी आखो से कैप्टन और मेजर तक को साईकिल से या पैदल ही अपनी ड्यूटी पर जाते देखा है। हमारे यहा अफसर और जवान के बीच की दूरी बढ़ती जाती है। इसी वजह से पाकिस्तान ने भारत से मात खाई है। और अब तबाही की राह पर चल रहा है। जो पैसा हमारे यहा अय्याशी पर खर्च होता है उसी पैसे को बचाकर हिन्दुस्तान अपने यहा डिफेन्स के लिए साज, सामान, गोला, बारूद टेंक और नेट तक बना रहा है यहा तक कि कितने ही सामान का तो एक्सपोर्ट भी हो रहा है जबकि पाकिस्तान इन चीजो के लिए दूसरों का मुंह ताकता रहता है। इसी से मिलते जुलते विचार लगभग सभी अन्य श्रेणियों के युद्धबन्दियों के है—उनके अनुसार भारी-आत्म समर्पण का कारण—"हमारे अफसर। आपके यहां अफसर बहुत अच्छे है सर! खुद

कितना काम करते है। हमारे यहा वे सिर्फ सिग्नेचर स्टैम्प है। काम क्लर्क करते है। वे सब अय्याश है। हमारे मुल्क में लोग बहुत अय्याश है। इसी वजह से हम हारे है।" सुना है पाकिस्तानी सैनिक अधिकारी हर बार की पदोन्नति पर एक और निकाह करने का अधिकारी हो जाता है। जैसे-जैसे उसके कन्धे पर पिप्स बढ़ते जाते हैं उसी अनुपात मे उसके हरम की बेगमो की सख्या में वृद्धि भी होती जाती है। इनकी अय्याशी के सबंध मे पाकिस्तानी शायर मुनीर की यह उक्ति कितनी सत्य है—

"कोई है शीशा व शराब में मस्त कोई है लज्जते शवाब में मस्त,
मुब्तला हैं सभी कही न कही मैं भी हूं अपने एक ख्वाब में मस्त।"

"—I have come to know and was badly shocked that you have been informed about our habits. I am sorry that you have been tortured by our back bitings. This much I should tell you that we will never be one in present and future life because of selfish and dishonest pathans and who can be bought with one sip of tea or one morsel of bread. I will never be with these conscience sellers and thieves. I hate them like a big."

(मुझे यह जानकर बहुत खेद है कि आपको हमारी आदतो के बारे मे पता लग गया है। मुझे दुःख है कि आप हमारी चुगल खोरी के कारण पीड़ित है। इतना तो मै आपसे कहूंगा ही कि इन बेईमान और स्वार्थी पठानों के कारण जिन्हें चाय के एक घूट या रोटी के एक टुकड़े पर खरीदा जा सकता है—हम वर्तमान व भावी जीवन में कभी भी एक जुट नही हो सकेंगे। इन आत्मा के बेचने वाले चोरो के साथ मैं कभी भी नही रहूगा। मैं उन्हे सूअर की तरह घृणा करता हू।)

उपरोक्त पक्तियां एक युद्धबन्दी द्वारा अपने वरिष्ठ अधिकारी युद्ध-बन्दी—जो दूसरे शिविर में नजरबन्द है—को लिखे एक पत्र मे से है। लिखने वाला कोई पंजाबी लगता है जो पठानों से बेहद नफरत करता है जैसाकि उसके पत्र से ही सिद्ध होता है।

इन लोगों के यहा आने के बाद जैसे-जैसे दिन व्यतीत होते गए इनके

आपसी वैमनस्य एवं अनैक्य बढ़ते गए। पंजाबी, पठान, बलूच, सिंधी और बटवारे के समय उत्तर-प्रदेश व बिहार आदि प्रदेशों से गए उर्दू भाषी शरणार्थियों के अलग-अलग गुट हैं, वर्ग विशेष हैं जिनमें कभी नहीं बनती। ये लोग एक दूसरे को हीन दृष्टि से देखते हुए अपने दंभ को पालते रहते हैं विशेषतया पजाबियों और पठानों की विचारधारा में बड़ा अन्तर है। पाकिस्तान की नेशनल आवामी पार्टी के नेता खान वली खां, सीमान्त गाधी, खान अब्दुल गफ्फार खां और पाकिस्तान की सरकार का संबंध इस आपसी वैमनस्य का ठोस प्रमाण है। बगला देश में व्यापक जन संहार एवं मुक्ति युद्ध के दमन के लिए किस तरह पठानों को पश्चिमी पाकिस्तान से धोखा देकर पूर्वी पाकिस्तान बुलाया गया था। इसका साक्षी है बगला देश की पत्रिका—रणभेरी—के सपादक अमीनुर्रशीद चौधरी का नीचे लिखा गया बयान जो उन्होने यातना दायी हिरासत से मुक्त होने पर दिया था—

"दिन के लगभग दस बजे शाह जमान नाम के एक जवान पठान सिपाही ने एक और व्यक्ति की सहायता से मेरी रस्सी खोलकर मुझे जमीन पर सुला दिया। उसने मुझसे कहा था—"साले कय्यूम (पाकिस्तानी मेजर) ने तुम्हें मारा है, हम उसे गोली से मार देगे।" उस दानव दल में शाह जमान ने मुझे ही नही, और भी बहुत से लोगो की सहायता की थी। इस हसमुख पठान को मैंने बडी मुश्किल से समझाया है, नही तो हो सकता था कि वह उसे मार ही डालता। वे लोग कहते ही थे, उनसे कहा गया है कि हिन्दुओं को मारने के लिए ही उन्हें इस देश मे लाया गया है। लेकिन वे लोग तो यहा एक भी हिन्दू नही ढूढ पा रहे हैं। और फिर वे हिन्दुओं को ही क्यू मारें? यह सब पंजाबियो की चालबाजी है।"

प्रान्तीय विषमता के अतिरिक्त इनकी आपसी फूट के कारणों में क्षेत्रीयता भी है। एक ही प्रदेश के रहने वालो मे आपस में जिला के आधार पर एक ही जिले के रहने वालो मे तहसील, थाना और गाव के आधार पर भारी पक्षपात देखने को मिला है। अन्दर शिविरो मे इनकी अलग अलग पार्टिया बनी हुई है जो छोटी-छोटी बातो पर ईधन की लकड़ी, ईट, पत्थर, बाल्टी लोटे और सब्जी काटने के चाकू, छुरे उठाकर क्षण भर मे एक स्थान पर एकत्र हो, लड़ना झगड़ना और मारपीट शुरू कर देते हैं। एक

शिविर में पंजाबियों और बलूचियों में आपस में झगड़ा हो गया जिससे एक मर गया। दूसरे शिविर में पंजाबियों और पठानों में जमकर लड़ाई हुई तो दो कैदी तुरत मर गए और सोलह सत्रह भयंकर रूप से घायल हो गए जिन्हें अस्पताल में भरती करवाया गया। एक दिन एक बिहारी का गला घोटकर हत्या करने के बाद लाश को शिविर के अन्दर ही नाली में फेंक दिया गया।

पाकिस्तान में घटने वाली छोटी-बड़ी घटनाओं की प्रतिच्छाया भारत के युद्धबन्दी शिविरों पर भी पड़ती है। वहां जिन वर्गों में झगड़े होते हैं— शिविरों में भी उन वर्गों के समर्थकों के बीच तनावपूर्ण वातावरण देखने को मिलेगा। पाकिस्तान के किसी गांव के दो खानदानों में कोई झगड़ा होता है और यदि उन परिवारों से संबन्धित दो युद्धबन्दी यहां एक ही शिविर में हैं तो देर-सवेर उनमें झगड़ा होना लाज़िम है। सब बातें पाकिस्तान से उनके पत्रों में लिखी आती हैं। सेना के विभिन्न अंगों [illegible], [illegible] और वायु सेना का हमेशा एक दूसरे को हीन समझना, तिरस्कार करना भी आपसी फूट को बढ़ावा देता है। किसी युद्धबन्दी का भारत की ओर [illegible] होना या किसी बात में भारत का पक्ष लेना [illegible] शिविर में उसके अनेक शत्रुओं को जन्म दे देता है। मारपीट होती है, सिर फटते हैं। फिर अस्पताल, जांच और सजा आदि की बातें हैं। एक बार शिविर के अन्दर स्थित टेन्ट के अन्दर [illegible] काटकर एक युद्धबन्दी

समय रसीद दिखाकर इन्हे माल वापस मिल जाये। एक युद्धबन्दी को जब दूसरे शिविर में बदला गया तो उसके सामान की तलाशी हुई। उसकी रजाई में से सात सौ रुपए की पाकिस्तानी मुद्रा मिली। उसे बड़ा अफसोस हुआ और कहते है सुख की सांस उसने तभी ली जब वह कितने ही अन्य युद्धवन्दियों का रहस्य खोल चुका। जैसा उसके साथ हुआ वैसा ही वह दूसरो के साथ होता हुआ भी देखना चाहता है। यह आपसी फूट और वैमनस्य तो इनके साथ ही पाकिस्तान तक जाएगा। कई लोग अपने अरमान सीमा पार करने के बाद ही पूरे कर पाएंगे। कुछ झगड़े समलिंगी मैथुन को लेकर भी होते है। आपसी वैमनस्य निकालने के इन लोगो के तरीके भी अलग-अलग है। एक दिन दो प्रभागों के बीच की तारोवाली गली से एक पत्र मिला। इसमें एक यद्धबन्दी ने दूसरे प्रभाग के यद्धबन्दी को शिविर से भाग निकलने की पूरी योजना लिखी थी। पत्र लिखने वाले का पता लगाने के लिए जाच हुई और पता लगा कि जिस कैदी के नाम से यह पत्र लिखा गया था उसके हस्तलेख से पत्र वाला हस्तलेख बिलकुल भिन्न है। यह महज शत्रुता निकालने के लिए एक यद्धबन्दी ने दूसरे यद्धबन्दी के नाम से पत्र लिखकर उसे किसी तरह फंसाने का प्रयास किया था। इनकी आपसी फूट कभी-कभी शिविर प्रशासन के लिए बड़ी सहायक सिद्ध होती है। ये अपने अन्य साथियो की शिविर से भाग निकलने की योजना का पर्दाफाश कर देते है और चोरी छिपे बनाई सुरग का सुराग भी देते रहते है।

प्रशासन की सुविधा के लिए प्रत्येक प्रभाग में वरिष्ठ-युद्धवन्दियो के कार्य क्षेत्र और उत्तरदायित्व बाटे हुए है। ये ही वरिष्ठ युद्धवन्दी शिविर संचालन सम्बन्धी सभी नियमों का पालन अन्य युद्धवन्दियों से कराते है और ये प्रशासन में किसी भी प्रकार की गड़बड़ होने पर शिविर अधिकारियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं। शिविर प्रशासन के सभी आदेश इन वरिष्ठ युद्धबन्दियों के माध्यम से सब युद्धवन्दियों को पहुचाए जाते है। अन्य युद्धवन्दियो की सभी प्रार्थनाए एव शिकायतें भी इन वरिष्ठ युद्धबन्दियो के द्वारा शिविर—प्रशासन तक आती हैं।

जेनेवा सम्मेलन की शर्तो के अनुसार अभिरक्षक देश की हिरासत मे

आने के पश्चात से अपने स्वदेश गमन तक युद्धवन्दी उस देश के अनुशासन सम्बन्धी सैनिक कानून और नियमों से प्रतिबद्ध रहते है। तदनुसार भारतीय सेना के *नियम, कानून और दड सहिता यहा रह रहे सभी युद्धबन्दियों* पर भी लागू हैं। किसी प्रकार का अवांछनीय, सैनिकों के लिए वर्जित और अशोभनीय कार्य या कोई अपराध करने पर जो सजा एक भारतीय सैनिक को दी जा सकती है। वैसी ही सजा उस प्रकार का कार्य करने पर एक युद्धवन्दी को भी दी जा सकती है। मुख्य दड विधा जिनका प्रावधान जेनेवा अभिसमय में है इस प्रकार हैं :—

(अ) मासिक पेशगी वेतन का पचास प्रतिशत तक जुर्माना।

(ब) *जेनेवा अभिसमय में अवर्णित सभी अतिरिक्त सुविधाओं को* बन्द कर देना।

(स) दो घंटे प्रतिदिन तक की फटीग।

(द) एकान्त वास।

भारतीय शिविर अधिकारी इनमे आपसी झगड़ो और मारपीट को रोकने के लिए समय-समय पर इनके धार्मिक शिक्षकों एव इनके वरिष्ठ युद्धवन्दी अधिकारियो से तकरीर करवाते रहते है। जिनमें वे अनुशासन सम्बन्धी नियमों का उल्लेख कर उनके पालन पर जोर देते हैं। एक ऐसी ही तकरीर सुनने का मौका मुझे भी मिला है। दाढी वाला एक वरिष्ठ अधिकारी युद्धवन्दी सभी युद्धबन्दियो को एकत्र कर संबोधित कर रहा था—

"समझ में नही आता कि आखिर किसलिए तुम लोग आपस मे बच्चों की तरह झगड़ते हो। सब्र से काम लो किसी भी वक्त वापस वतन लौटने के आसार बन सकते है। क्यो भूल जाते हो कि तुम्हारे घरो में तुम्हारी बीवी, बच्चे, रिश्तेदार वाल्देन, तुम्हारे भाई, बहने,,किस बेसब्री से तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं कि तुम कब लौटोगे ? और तुम लोग यहा आपस में लड़-लडकर मर रहे हो—।"

□ □

युद्धबन्दियों को पूर्ण स्वाधीनता

"कफस में हूं मुकद्दर में यही ठिकाना था
वो शाख ही न रही जिस पे आशियाना था"

उर्दू मे लिखा एक पत्र। मैं उर्दू नही जानता किसी से पढ़वाया था। पूरा पत्र भर जाने पर चौड़े रुख मे दोनों किनारों पर बने दो फूलों के बीच यह शेर लिखा था। एक कैदी बेटा पाकिस्तान मे अपनी मा को लिख रहा है। पत्र से ही पता लगा कि लिखने वाले का अब्बा अब इस दुनिया में नही रहा। परिवार में मां के अतिरिक्त एक छोटा भाई और दो बहनें हैं बस। पत्र मे मा को ढाढस बधाया गया। धैर्य रखने की विनय की गई है। शीघ्र ही घर लौटने की बातें लिखी है। थोडी देर के लिए मैं न जाने कहा खोया रहा।

जेनेवा अभिसमय की शर्तो के अनुसार प्रत्येक युद्धबन्दी को एक महीने में चार पोस्टकार्ड और दो बडे पत्र निःशुल्क दिए जाते हैं जिन्हें वे पाकिस्तान में रहने वाले अथवा दूसरे शिविरों मे नजरबन्द अपने सगे-सम्बन्धियों, मित्रों व साथियों को लिखते रहते हैं। प्रारम्भ में इन लोगों के शिविरों मे आते ही इन्हें एक-एक कैपचर कार्ड भी दिया गया था जिसे लिख इन्होंने अपने निकटतम सम्बन्धी को अपने युद्धबन्दी होने एवं शिविर का पता देने की सूचना दी थी। इन्ही युद्धबन्दियो में से हजारों लोगों के सगे-सम्बन्धी या मित्र भारतीय नागरिक भी है जिन्होने बटवारे के समय भारत में रहना पसंद किया था। इनसे भी पत्राचार करने की सुविधा युद्धबन्दियों को है। भारत मे प्रयोग होने वाले पोस्टकार्ड एवं अन्तर्देशीय

पत्र ये लोग अपने भारतीय सम्बन्धियों एवं मित्रों को लिखते रहते है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके सम्बन्ध बंगलादेश अथवा विश्व के अन्य देशों में हैं। ऐसे सम्बन्धियों को ये लोग हवाई डाक पत्र लिखते रहते है। भारत में प्रयुक्त होने वाले पोस्टकार्ड एवं अन्तर्देशीय पत्र और हवाई डाक पत्रों की प्राप्ति ये लोग शिविर स्थित कैंटीन के द्वारा अपने खर्चे पर करते हैं। ससार के विभिन्न देशों मे रहने वाले इन युद्धवन्दियों के सम्बन्धी एव मित्रगण भी इन्हें पत्र लिखकर इनसे संपर्क स्थापित किए हुए हैं। प्रतिदिन लाखों की संख्या मे युद्धवन्दियों की डाक आती-जाती रहती है यद्यपि सुरक्षा और देशहित की दृष्टि से युद्धवन्दियों की आने-जाने वाली डाक को सैंसर करना अत्यावश्यक है फिर भी कोशिश यह रहती है कि डाक शीघ्राति शीघ्र अपने निश्चित स्थान पर पहुंचे। विशेष पर्वो के अवसर पर बधाई-पत्रों को प्रमुखता देकर तुरन्त निश्चित स्थान पर पहुचा दिया जाता है। भारत और पाकिस्तान के बीच तार-व्यवस्था न होने के कारण ये युद्धवन्दी पाकिस्तान में कोई तार नहीं दे सकते और न ही पाकिस्तान से इनके पास तार आ सकते है। हां, दूसरे किसी भी देश—जिससे भारत के साथ तार-सम्पर्क हैं—में स्थित अपने सम्बन्धियों को ये तार देते रहते है जिनका खर्च इन्हें नही देना पड़ता। ऐसे ही बाहर से भी इनके पास तार आते रहते हैं। विशेष तात्कालिक और अनिवार्य सदेश ये भारत के युद्धवन्दी निदेशालय और पाकिस्तान के युद्धवन्दी निदेशालय के बीच टेलीफोन व्यवस्था द्वारा अपने सम्बन्धियो तक पहुचाते है।

युद्धवन्दियो की आने-जाने वाली डाक से लिखने वाले की मानसिक दशा, उसके परिवार और वातावरण आदि का जायजा लिया जा सकता है। अलग-अलग व्यक्तियों व उनके परिवार की अलग-अलग व्यथा-कथा और व्यक्तिगत जीवन की झांकी उनके अनेक पत्रों से मिलती है। एक बहन बरमिंघम से अपने भाई जंगी कैदी को पत्र लिखती है। एक-एक शब्द मे उसका भाई के प्रति प्यार, उसकी शीघ्र स्वदेशगमन की शुभकामनाएं और उसकी लम्बी आयु के लिए दुआएं भरी है। किसी वस्तु की आवश्यकता होने पर उसने तुरन्त पत्र लिखने को लिखा है। पाकिस्तान से एक आठवी कक्षा का विद्यार्थी अपने युद्धवन्दी अब्बा को ढाढस बंधाते

हुए घर के समाचार लिख रहा है और उन्हें बिल्कुल निश्चिन्त रहने की सलाह दे रहा है। जनाव भुट्टो की बडी तारीफ और शिमला समझौते का जिक्र तथा परिणामस्वरूप उनके शीघ्र ही लौटने की आशा। एक कैदी ने साथी कैदी को जो बीमार हो अस्पताल मे भरती है—पत्र लिखकर उसके स्वास्थ्य के लिए दुआएं मागी हैं और साथ ही विनय भी की है कि यदि बीमारी के कारण वह जल्दी ही वतन लौट जाए तो वहां जाकर उसके गाव, घर मे मिले और अपने सकुशल पहुचने का समाचार भी दे। पाकिस्तान से आने वाले एक पत्र में नित्य प्रयोग मे आने वाली वस्तुओं के भाव लिखे है— विलायती खाड (चीनी) बारह रुपया प्रति सेर, कपड़ा लट्ठा आठ-नौ रुपए गज़, गेहू बासठ रुपये प्रति मन आदि आदि। सिगरेटों के भाव हमारे यहा के भावो की अपेक्षा कम हैं। जिस स्तर की सिगरेट हमारे यहा पचपन पैसे प्रति पैकेट मिलती है उसका भाव पाकिस्तान मे बीस पैसे प्रति पैकेट होगा। मुख्य सिगरेटों मे केन्टु, मिल्लत, एम्बेसी, वुडबाईन आदि हैं। उच्च मूल्य की सिगरेट विदेशों से आयात होती हैं हां, पाकिस्तान मे माचिस अभी बाहर से बनकर आती है। पाकिस्तान से पार्सलो के साथ आई रूस, कोरिया और चीन की बनी माचिसें मैंने युद्धबन्दियों के पास देखी हैं। इसके अतिरिक्त कपडा, पैन, घड़ी आदि तो मुख्यतः विदेशों मे बनी होती हैं। इससे पाकिस्तान की औद्योगिक उन्नति के स्तर का पता लगता है। पान और चाय की पत्ती अब पाकिस्तान में श्रीलका से आयात होती है।

एक युद्धबन्दी बेटे की मां ने पाकिस्तान से पत्र में लिखा था— "हम सब खैरियत से हैं और दिन-रात अल्लाह से तुम्हारी खैरियत की दुआएं मागते रहते है। किसी किस्म का फिक्र नही करना। यहा सब काम ठीक चल रहा है। हर महीने तुम्हारी तनख्वाह घर पर पहुच जाती है। सिर पर जितना कर्ज था वह अब आधा रह गया है। और इशा अल्लाह बाकी भी खत्म हो जाएगा—" कैसा लगा होगा पढ़ने वाले को ? अवश्य ही उसने सोचा होगा कि बाकी का कर्ज उतारने के लिए उसकी मा अल्लाह से दुआएं मांगती है कि उसका बेटा अभी और इतने ही दिन हिन्द की कैद मे रह जाए तो अच्छा है। मारीपुर से किसी सलमा ने लिखा है

„—आप चाहो तो पाकिस्तान वाली लड़की से निकाह कर सकते हो। मैं बीच में रोड़ा नही बनूंगी। ऐसा इरादा हो तो मुझे पता देना। मैं आपके जवाब का इन्तजार करूंगी। और, सुनो। जिन्दगी मे कभी मेरी जरूरत हो तो इशारा कर देना मै आपके लिए फना भी हो सकती हूं। मैं मुहब्बत करती हूं आपसे और सिर्फ आपसे। साथ में फोटो भेज रही हूं पता नही आपको मिलेगा भी या नही।" कई अफसरों के पत्र अंग्रेजी में आते रहते हैं। एक मेजर की लड़की अपने अब्बाजान को देर से पत्र लिखने का कारण अपनी परीक्षाएं बताते हुए क्षमा मांग रही है। परीक्षा में उसने 700 मे से 619 अंक प्राप्त किए हैं। दो छोटी आयु के लड़को ने भी अपने अब्बा जान-कर्नल को पत्र लिखा है। छोटा लड़का दूसरी-तीसरी कक्षा का विद्यार्थी लगता है जैसा उसके हस्तलेख से लगा। अशुद्ध अंग्रेजी कही छोटे और कही बड़े अक्षरों में तिरछी पक्तिया। मम्मी उसे बहुत प्यार करती है। अंकल उसे खाने के लिए रोज मिठाईया और टाफी देते हैं। वह रोज स्कूल जाता है। एक कैप्टन ने अपने मित्र युद्धबन्दी कैप्टन को लिखा है— "मैं उनके घर गया था। पहले तो वह बहुत बेरुखी से पेश आई। कितने ही सवाल किए। आप कौन है? कहा से आए है? क्यों आए हैं? उससे क्यों मिलना चाहते हैं? बाद में तुम्हारा रेफ्रेंस (सदर्भ) देने पर मिजाज थोड़ा नरम हुआ। मैंने तुम्हारी बात उससे कह दी है और शिकायत भी। उसने वायदा किया है कि वह आइन्दा तुम्हें खत लिखा करेगी।

ईस्ट पाकिस्तान सिविल आर्म्ड फोर्स का बूढ़ा शरीफ बटवारे से पहले कागड़ा में रहता था। उसका भाई अभी भी अपने पुश्तैनी घर में रह रहा है। उसने भाई को कितने ही पत्र लिखे जिनके उत्तर उसके पास आते रहे। और भी ऐसे कितने ही लोग है जिनके भारतीय सम्बन्धियो के पत्र शिविरो में आते रहते है।

पाकिस्तान से एक पत्नी ने अपने युद्धबन्दी पति को लिखा है— "आप मुझे जगल मे भी छोड़कर चले जाते तो भी मैं आपकी यादो के सहारे हर मुश्किल का सामना करके दिन काट लेती। मालिक का शुक्र है अब तो मैं इंसानों के बीच रह रही हू। आप फिक्र न करें— दिन-रात हम खुदा से दुआए मागते रहते है कि खैर खुशी जल्द-से-जल्द आप मुल्क लौट

कर आएं—।" एक और महबूबा का खत। हर शब्द में विरह का रग। आखिर वह कब तक इंतजार करे। महबूब दुश्मन की कैद मे है। आगे क्या होगा कौन जाने ? मुकद्दर में विसाल है भी या नही। और बीच-बीच में कुछ शेरो शायरी का पुट—

"तकदीर ही वो क्या है जिसमे न हों ठोकरें
वो दिल ही क्या है दर्द से जो आशना न हो

जब भी उनका ख्याल आया है दिल का हर दाग मुस्कराया है,
मौत की खबर नही लेकिन जिन्दगी ने बहुत रूलाया है।
आज वे और भी परेशां है आज उनका पयाम आया है,
उम्र भर मैंने दिल जलाया है।

पाकिस्तान से आने वाले कितने ही पत्र ऐसे भी होते हैं जिन पर अत मे अगूठा निशानी लगाई हुई होती है। यकीनन ही ये उन लोगों के आए है जो कि अशिक्षित होने के कारण पढ़ना-लिखना नही जानते। वे पत्र तो किसी और से लिखवाते है और अपना अगूठा यह सिद्ध करने के लिए लगाते है कि पत्र वास्तव मे उन्ही के द्वारा लिखवाए गए है।

नीले रग के ढेर के ढेर युद्धबन्दियों के पत्र। हाथ फैलाकर मैं एक लिफाफा उठा लेता हूं। पत्र पैटी अफसर मुमताज अहमद मिन्हास को लिखा गया है अदर बस एक "5 गुणा 3" का एक बच्चे का फोटो और कुछ नही। पलटकर देखा—मुमताज का पता ऊपर अग्रेजी मे और नीचे उर्दू में लिखा है। और नीचे फोटो लेने की तिथि—16-1-73, बच्चे का नाम—अजीज नूरे नजर अय्याज अहमद, पैदाईश की तिथि 1-4-1972 (मुमताज भारत में था--नजरबन्द)। बच्चे का फोटो बड़ा सुन्दर है। बिना बाह की कुर्सी पर बैठा खूबसूरत, गोल-गोल आंखें, मुह कुछ खुला हुआ जिससे नीचे के दो छोटे-छोटे दातों के स्पष्ट निशान दीख पड़ते है। बाबा सूट मे, जूते पहने ढुलमुल पैरों पर हाथ रखे जैसे कह रहा हो—" आओ, उठा लो मुझे, प्यार करो, चूम लो मुझे, मैं तुम्हारा हूं। कितनी देर तक हाथ मे फोटो थामे मैं चुपचाप देखता रहा सोचता हुआ कि क्या हालत होगी मुमताज की जब वह यह फोटो देखेगा। मन-ही-मन मे अनुमान लगा रहा हूं। बाद में पता लगा—"बहुत खुश था, आखों मे

पानी भर आया था खुशी में खाना भी नही खाया गया। सारा दिन फोटो लिए अलग-अलग बैठा रहा। पांच लड़कियों के बाद यह पहला लड़का है, खुशी तो होगी ही।"

इनके पत्रों मे फोटो आते रहते है, बेटों के, बेटियों के, भाईयो के, चाचाओ के, वालिदों के एवं मित्रगणों के। कोई पेशावर से तो कोई टोक्यो न्यूयार्क, सिडनी, वाशिंगटन, लदन, ईरान तथा अन्य अरबी देशों से जहां-जहां इनके सम्बन्धी है। इग्लैंड से एक पत्र के साथ कुछ फोटो आए थे। एक पाकिस्तानी अपनी अग्रेज बीवी और सुनहरे बालों वाले दो बच्चो के साथ, घर, पार्क और कार के साथ लिए अलग-अलग रगीन फोटो। पाकिस्तान से आया दो पठानों (युद्धबन्दी का भाई और चाचा) का एक फोटो। उनकी पारंपरिक वेषभूषा, गले में कारतूसों की पेटिया और हाथों मे बन्दूक। एक बीवी ने खत के साथ शौहर को अपना फोटो भेजा है। पत्र का हर नया वाक्य "प्यारी जान" से शुरू। अपनी बेलाग मुहब्बत का वर्णन और प्रशंसा सौहर की दिलं जमई के लिए। इस बात पर भी जोर दिया गया है कि फोटो घर पर ही उसके देवर ने खींचा है क्योकि वह शौहर की गैरहाजिरी में घर से बाहर बिल्कुल नहीं जाती। और अत में एक शेर—

> "मिला है दर्दे जुदाई खुशी करीब नही,
> जहां में कोई भी हम जैसा बदनसीब नही।"

एक और फोटो में तीन बच्चे (युद्धबन्दी के बहन-भाई)। बाई ओर नौ-दस वर्षीया एक लड़की इबादत के वक्त की सी वेशभूषा मे दो-तीन वर्ष के बच्चे को थामे बैठी है। शान्त वेदनामय चेहरा, उत्सुक बादाम-सी आखों के नीचे सुतवां नाक, बारीक होठों पर प्रतीक्षा की गीत-लहरी-सी। लड़की ऐसी लगती है जैसे किसी पर्दे को देख रही हो। जिसके पीछे दो वर्ष से उसका भाई छिपा हुआ है जो न जाने कब पर्दा हटाकर बाहर निकल आएगा। बीच का बच्चा मुह में हाथ डाले बैठा है या कुछ खाने मे मशगूल है कमरे को अरुचि से देखते हुए। सबसे दायीं ओर चार-पाच वर्ष की एक बॉबी कट केशों वाली लड़की जिसने सितारों जड़ी फ्राक पहन रखी है और गर्दन को कुछ टेढी कर कुशल अभिनेत्री की-सी मुद्रा में खड़ी

है। युद्धबन्दी खत और फोटो पाकर फूला नही समाएगा।

पाकिस्तान के एक बी० कॉम के विद्यार्थी ने अपने युद्धबन्दी भाई को व्याकरण की गलतियो से भरपूर अंग्रेजी में ईद मुबारक भेजकर लिखा है कि जब तक वह सकुशल अपने घर लौटकर अपने सगे-सम्बन्धियों से न मिल ले वास्तव मे ईद का कुछ अर्थ नही। बूढे और बीमार मा-बाप अपने इकलौते लड़के युद्धबन्दी के लिए अपनी तीन जवान बेटियो के साथ नमाज पढ, इबादत कर रात-दिन खुदा से दुआए मागते रहते है कि उनका सहारा शीघ्रातिशीघ्र खैर खुशी घर लौट आए। एक लेफ्टिनेंट कर्नल की पत्नी का अंग्रेजी मे लिखा पत्र। संबोधन—"माय मोस्ट प्रेशियस वन"—घर के, बच्चों के, उनकी शिक्षा के, परिवार के समाचार। खुदा से उनके स्वदेश लौटने की दुआएं। एक दिन उन्होंने सपने में देखा कि उनके वे बहुत सख्त बीमार हैं, बोल भी नहीं पाते। कई दिन तक वह घबराई रही, खाना-पीना भूल गया, किसी तरह चैन नही मिलता था, हर समय उनकी याद। उनकी कुशलता का पत्र मिला तो जान मे जान आई। एक सेकिण्ड लेफ्टिनेंट को भाई की ओर से—जो किसी कालिज मे प्रोफेसर है—स्टाफ रूम के शोर के बीच बैठकर लिखा खत। धैर्य रखने की सलाह और पूछा है कि वह पश्तो भाषा कहा तक सीख पाया है और कुरान शरीफ कहां तक पढ़ चुका है? एक मेजर युद्धबन्दी को उसके वालिद की ओर से लिखा एक संक्षिप्त-सा पत्र जिसमे घर की, बच्चो की कुशलता के समाचार, धैर्य रखने की सलाह और—"एज ए फादर ह्वाट आय वुड लाइक टू एडवायज यू, टू आफर योअर प्रेवर्स कान्सटेन्टली एण्ड लव अल्लाह एण्ड हिज क्रीचर्स। (बाप होने के नाते मैं तुम्हें सलाह दूगा कि लगातार इबादत करते रहो और अल्लाह व उसके बन्दों से मुहब्बत करो)" ऐसे ही पाकिस्तान एअरफोर्स के एक आदमी ने अपने युद्धबन्दी भाई को एक पत्र लिखा जिसका हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जा रहा है—

"मेरे प्यारे सादिक।

मुझे आशा है कि एक महीना पहले लिखे मेरे पत्र तुम्हे मिल गए होंगे। लेकिन अभी तक एक का भी उत्तर मुझे नही मिला। जब तुम्हे यह पत्र मिलेगा 'ईद' का पर्व गुजर चुका होगा। फिर भी मैं तुम्हे हार्दिक

शुभकामनाएं भेजता हूं जो मै इन परिस्थितियों मे कर सकता हूं। यद्यपि तुम्हारी उपस्थिति के बिना ईद का उल्लास और प्रसन्नता हमारे लिए कुछ अर्थ नही रखती फिर भी हमें इसके द्वारा प्रेरित संदेश एवं इसके स्वाभाविक उत्साह को ग्रहण करने का प्रयास करना चाहिए। न्यायोचित प्रयोजन के प्रति निष्ठा एवं त्याग का संदेश। यह महान एवं उच्च परंपरा हमारे सामने पैगम्बर इब्राहिम ने प्रस्तुत की थी। आमीन। और उनके सच्चे अनुचर होने के नाते हमे इस परम्परा को कभी असफल नही बनाना चाहिए। प्रत्येक परिस्थिति में हमें इस परम्परा को बनाए रखना है क्योंकि यह हमारा परम धार्मिक व्रत है। हम मुसलमानों की आस्था है कि सब कठिनाईयां, दुर्भाग्य एवं रुकावटे हमारे विश्वास और अध्यव्यवसाय की परीक्षा लेने के लिए सामने आती है। इन्हे सहन करते हुए हमें धैर्य और साहस के साथ पार करना है। हमें क्षणिक कठिनाईयों के समक्ष धर्म-भ्रष्ट होने की आवश्यकता नही, उन्हे वहन करना है। क्योंकि हमारा दृढ़-विश्वास है 'हिम्मते मर्दा मददे खुदा।' इस्लाम के वीर सिपाही होने के नाते तुम्हारा कर्त्तव्य नीति भ्रष्ट न होकर समय के गर्भ से उत्पन्न प्रत्येक आमन्त्रण का सामना करना है। तुम्हारे साथ पाकिस्तान का नाम जुड़ा है और तुमसे आशा है कि हर कदम पर तुम इसे सिद्ध करोगे। यही है जिसकी हम लोग तुमसे अपेक्षा करते है, यही हम लोग देखना चाहते है।

हम, पूर्ण राष्ट्र तुम्हारा बड़ा आदर करते हैं और तुम्हारे कार्यों एवं सेवाओं का मूल्यांकन करते हैं। किन्तु यही सब-कुछ नही है। हम सब लोग चाहते हैं और आशा करते है कि तुम सब लोग और भी शानदार मिशाल पेश करोगे। हम एक वीर राष्ट्र रहना चाहते है। विगत मे आए तूफानों से भी और बड़े दैत्य स्वरूप तूफानों का सामना करने का साहस हममें है। सम्मानपूर्वक शान्ति की खोज हमारा सर्वोपरि उद्देश्य है। लेकिन हमारे विनाश को लक्ष्य बनाकर हम पर किए गए प्रत्येक आक्रमण की स्थिति मे यदि हमे बाध्य किया गया तो हम निर्भीकता से लड़ेंगे। कितनी ही विध्वंसक कठिनाईयो से गुजर कर हम जीवित रहे हैं और अभी भी अपने राष्ट्र को जीवित रखने और अपने आदर्शों की अमरता के लिए के लिए कोई भी त्याग करने का साहस हम में है। हम विश्व को अपने शौर्य,

साहसिकता एवं अटल विश्वास का एक ठोस अकाट्य प्रमाण देना चाहते है। हमारी अभिलाषा है कि तुम उन्हे इकबाल के 'मर्दो मोमिन' और 'शव्वीन' का एक ज्वलत प्रदर्शन दो।

'ईद-उल-जुहा' के पवित्र अवसर पर एक निरूपाय भाई अपने नजरबन्द भाई को और क्या सदेश भेज सकता है। तुम और तुम्हारे सभी साथियों को हार्दिक शुभकामनाए।

घर पर सब कुशल क्षम है किसी वात की चिंता नही करना—खुदा हाफिज।

भारतीय शिविर अधिकारियों एव पाकिस्तान स्थित अपने सैनिक अधिकारियो को आवेदन-पत्र लिखकर अपनी समस्याओ के समाधान हेतु युद्धवन्दी प्रार्थना करते रहते है। ऐसे कितने ही आवेदन-पत्र देखने का अवसर मुझे मिला है। साहीवाल के रहने वाले सिपाही निजामुद्दीन ने शिविर-कमान्डेन्ट को आवेदन-पत्र लिखा है। सघर्ष से पहले उसकी पत्नी नूरजहा आयु अठारह वर्ष श्वसुर के साथ सैदपुर (बंगलादेश) मे रह रही थी। भारत में नजरवन्द होने पर निजामुद्दीन विभिन्न स्थानो पर उनकी सूचना पाने हेतु पत्र लिखता रहा। आकाशवाणी से भी सन्देश प्रसारित कराया। शिविरो मे आने वाले अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के सदस्यो को विवरण दे पूछताछ की। अततः पन्द्रह महीने बाद उसे नूरजहा का खत मिला। वह भारत मे ही अपने श्वसुर के साथ किसी दूसरे शिविर मे नजरवन्द है। और वीमार चल रही है। निजामुद्दीन की प्रार्थना है कि उसे भी उसी शिविर में भेज दिया जाए जिसमे उसकी पत्नी और अब्बा-जान रह रहे हैं। वाद में भारत सरकार ने इस प्रकार की छूट दे यह व्यवस्था की कि विभिन्न शिविरो मे नजरवन्द एक ही परिवार के सदस्यों को एकत्र किया जा सके।

पाकिस्तानी नेवी के एक युद्धवन्दी ने कराची स्थित अपने कमाण्डर से प्रार्थना की है कि उसकी अनुपस्थिति मे उसके पत्नी और बच्चो को सरकारी मकान मे रहने की अनुमति दी जाए। क्योकि परिवार के अन्य सदस्यों के साथ उसकी पत्नी की बनती नही। एक और युद्धवन्दी ने अपनी यूनिट के कमान्डेन्ट को लिखा कि उसका मासिक वेतन (जो पाकिस्तानी

सरकार प्रत्येक युद्धबन्दी के निकटतम सम्बन्धी को उनके घर भेजती रही है) उसकी बीवी के नाम न भेजकर उसके भाई के नाम भेजा जाए।

एक ने आजाद कश्मीर के सदर को लिखकर अपने प्रार्थना-पत्र की प्रति पाकिस्तान के सी. एन. सी. को दी है। उसका दुःख है गांव में शत्रुओं द्वारा बाप की हत्या, जमीन-जायदाद पर जबरन अधिकार, बीवी को फुसलाकर अपहरण और मां की हत्या का डर। वह सुरक्षा की प्रार्थना कर रहा है। एक ने अपने रेजिमेंटल सेन्टर कमान्डर को लिखा है कि उसका वेतन बहन को न देकर उसकी मां को दिया जाए। दूसरा लिखता है कि उसके वेतन का भुगतान किसी को भी न किया जाए वह स्वयं पाकिस्तान लौटने पर लेगा। एक की पत्नी किसी स्कूल में अध्यापिका थी जिसे नौकरी से निकाल दिया गया वह उसकी बहाली की प्रार्थना कर रहा है। एक ने पुलिस अधिकारियों को लिखकर अपने परिवार की सुरक्षा का आश्वासन चाहा है।

इन लोगों के पत्रों से ही यह पता लगा कि आरम्भ में सब इनके आत्म समर्पण कर भारतीय शिविरों में पहुंचने की सूचना भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के द्वारा पाकिस्तान पहुंचाई थी पाकिस्तान सरकार ने इनके कितने ही निकटतम सम्बन्धियों तक यह सूचना नहीं पहुंचाई थी। क्योंकि उस समय के हालात को देखते हुए पाकिस्तान सरकार को अपने यहां की आंतरिक शान्ति भंग होने का भय था। यह जानकर कितने ही युद्धबन्दियों का अपने देश की सरकार पर से विश्वास उठ गया है।

सम्बन्धियों से, पाकिस्तान सरकार से और अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति की ओर से लाखों की संख्या में पार्सल आए। इन पार्सलों में कपड़े, जूते, बनियान, जुराब, टोपी, रूमाल, खाने की वस्तुएं जैसे मेवा, सिगरटें, माचिसें, दवाईयां एवं पुस्तकें आदि आती रहती हैं। व्यक्तिगत पार्सल क्योंकि विभिन्न स्थानों और विभिन्न घरों से आते हैं अतः स्वाभाविकतः उनमें आए सामान का स्तर, संख्या या मात्रा भी विभिन्न प्रकार की होती है। कई लोग घर से आए पार्सल को देखकर बड़े प्रसन्न होते हैं और अन्य युद्धबन्दियों को यह सामान दिखा-दिखाकर उन पर अपनी धाक जमाने का प्रयत्न करते है। दूसरी ओर कुछ ऐसे भी हैं जो पार्सल के सामान को बिल्कुल नापसन्द कर घरवालों को कड़ा विरोध पत्र लिखते हैं। आखिर उनकी प्रतिष्ठा का प्रश्न है। एक ने लिखा था—"आपके भेजे हुए कपड़ों को पहनकर मैं ऐसा ही लगता हूं जैसे पाकिस्तान सरकार की ओर से मिले कपड़ों को पहनकर कराची की जेल में एक कैदी लगता होगा।" दूसरे ने हिदायत दी है—"आपके भेजे हुए कपड़ों के पार्सल को देखकर मैं यह सोचने पर मजबूर हो गया हूं कि आप लोगों को मेरी नहीं मेरे पैसों की जरूरत है। खैर, आप इस बात को न भूलें कि देर-सवेर एक दिन मैं जरूर वतन लौटूंगा और उसी वक्त आप लोगों से अपनी तनख्वाह की पाई-पाई का हिसाब लूंगा।"

पाकिस्तान के साथ भारत का सीधा सम्पर्क न होने के कारण पत्र और पार्सलों का सारा व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के द्वारा होता है। पार्सल बिना किसी कस्टम शुल्क के आते हैं।

प्रारम्भ में आल इण्डिया रेडियो से प्रतिदिन एक कार्यक्रम प्रसारित किया जाता था—"हम खैरियत से हैं।" आकाशवाणी के प्रतिनिधि विभिन्न शिविरों में जाकर युद्धबन्दियों के सन्देश रिकार्ड करते थे। जिसमें वे अपनी और अपने साथियों की कुशलता का सन्देश पाकिस्तान स्थित अपने सगे-सम्बन्धियों को देते थे। इसी प्रकार रेडियो पाकिस्तान से भी एक कार्यक्रम प्रसारित किया जाता रहा है जिसमें इन युद्धबन्दियों के निकटतम सम्बन्धी रेडियो पर अपनी कुशलता का समाचार दिया करते थे। इस प्रकार की व्यवस्था अपने आप में एक उदाहरण है। उधर अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति को दी गई सूची के आधार पर भी भारत में

नजरबन्द युद्धबन्दियो की सूचना एवं विवरण रेडियो पाकिस्तान कई रातों में कितने ही दिनो तक प्रसारित करता रहा है।

कटीली तार पंक्तियों के बाहर बाह्य जगत मे क्या हो रहा है— इसका वैसा ही ज्ञान युद्धबन्दी को होता है जैसा किसी साधारणजन को हो सकता है। अंग्रेजी, उर्दू की अनेकों पत्रिकाएं एवं दैनिक समाचार प्रतिदिन शिविरो में आते है जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त संसार के देशों के समाचार जानने के लिए दिनभर में विभिन्न रेडियो केन्द्रो से हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी एवं पश्तो आदि भाषाओं में समाचार और अन्य कार्यक्रम सुनवाए जाते हैं। पहले अफसर युद्धबन्दियों को और बाद में सभी युद्धबन्दियो को रेडियो, ट्रांजिस्टर अपने साथ रखने की छूट है।

□ □

सभी युद्धवन्दियो का एक सैनिक सम्मेलन भी करवाते है।
को अधिकार होता है कि वह खड़ा होकर अपनी
नाईयों को, शिविर संचालन मे सुधार सम्बन्धी अपने
विशिष्ट और वांछनीय मांगों को कमान्डेन्ट के समक्ष
समाधान करने मे शिविर कमान्डेन्ट एवं अन्य अधिक
करते है। समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास
शिविर मे आकर युद्धवन्दियों से अलग एकांत में
अधिकारियों से उन्हे अनेक सुविधाएं देने की

शिविरो में नजरबन्द अनेक युद्धबन्दियो
एव वैयक्तिक स्वतंत्रता भी भारत सरकार ने दी
है एक शिविर मे नजरबन्द श्री अफजल हुसैन
दो असैनिक प्रेमी युद्धवन्दियों—का शिविर
रिजवी और अन्य कितने ही सैनिक
मत के रीति-रिवाजो के अनुसार निकाह।
विकल प्रेमी नही कर सके। भारतीय
युगल को निकाह संबंधी सभी सुविधाएं

जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद 49 व
यदि चाहे तो युद्धवन्दियों की आयु, लिंग,
रखते हुए उनसे श्रम कार्य जैसे कृषि,
उद्योग, निर्माण व, उत्पादन कार्य,
जनिक उपयोग की सेवाए जिनका कोई
सेवाए आदि करा सकता है। परन्तु
शिविरों की सफाई आदि को छोड़कर
ये लोग यह महसूस न करें कि उन
रहा है कि उनकी प्रतिष्ठा को कोई ठेस

बगला देश मे इन युद्धवन्दियों ने
सयुक्त कमान के समक्ष आत्म समर्पण किया
जेनेवा सम्मेलन की शर्तों को स्वीकार कर
है कि संघर्षरत एक पक्ष की दो शक्तियों में से

उत्तरदायित्व में युद्धबन्दियों को रखा जा सकता है। और अपनी सुविधानुसार ऐसी दो शक्तियां एक के पास से दूसरी शक्ति के पास युद्धबन्दियों का हस्तांतरण कर सकती है। तदनुसार भारत सरकार यदि चाहती तो दो वर्ष की लम्बी अवधि में इन युद्धबन्दियों को अपने पास न रखकर बंगला देश को भी सौंप सकती थी। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। क्योंकि इन युद्धबन्दियो के जघन्य पापों के फलस्वरूप बदले की भावना से प्रेरित बंगला देश के नागरिक इनके साथ दुर्व्यवहार कर सकते थे और ऐसी हालत में संभव था कि इनकी सुरक्षा ही खतरे में पड़ जाती। पिछले सत्तर वर्षों के अन्तराल में विश्व के विभिन्न देशों में कितने ही संघर्ष हुए है, कितने ही युद्ध हुए, कितने ही युद्धबन्दियों को अनेक देशों ने अपने पास नजरबन्द रखा है। इतिहास उठाकर देखने से पता लगता है कि भारत ने जिस प्रकार का मानवीय व्यवहार दो वर्ष से भी अधिक समय तक 93,000 युद्धबन्दियों के साथ किया है वह अपने आप में एक अपूर्व उदाहरण है। सच यह है जैसा कि प्रधानमंत्री श्रीमति इन्दिरा गाधी ने पिछले युद्ध के दौरान अपने एक भाषण मे कहा था कि हमारी लड़ाई पाकिस्तानी जनता के साथ नही है।

इन सभी युद्धबन्दियों ने लड़ते हुए युद्ध क्षेत्र मे आत्म समर्पण नहीं किया था। कितने ही लोग ऐसे है जो युद्ध क्षेत्र के बहुत पीछे अपनी रेजिमेन्ट व सैनिक यूनिटों में बैठे थे। इसी से जब ये लोग यहां पर आए तो कितना ही व्यक्तिगत साजो-सामान व सपत्ति और धन साथ लेकर आए थे। यह सब सामान उन्होने शिविर अधिकारियों को सौंपकर एक रसीद ले ली थी। शिविर अधिकारियों ने इनकी इस सपत्ति की सुरक्षा की और चलते समय रसीदों के आधार पर इनकी सब सम्पत्ति इन्हें थमा दी। सुरक्षा और राष्ट्रहित की चिन्ता किए बगैर भारत सरकार ने युद्धबन्दियों से ऐसी वस्तुए नही ली जिनका इनके लिए कोई भावनात्मक मूल्य था, जैसे विवाह की अगूठी, रैंक के पिप्स, मेडल तथा तगमें। युद्धबन्दी होते हुए भी ये लोग इस प्रकार की वस्तुओं को अपने पास रखे रहे।

कई कैदियो ने धार्मिक पर्वों के समय मिली सुविधाओं का विवरण दे पाकिस्तान में पत्र लिखे हैं। उनके अनुसार भारतीय शिविर अधिकारी

सभी युद्धवन्दियों का एक सैनिक सम्मेलन भी करवाते है। प्रत्येक युद्धवन्दी को अधिकार होता है कि वह खड़ा होकर अपनी समस्याओं को, कठिनाईयो को, शिविर संचालन मे सुधार सम्बन्धी अपने विचारो को, अपनी विशिष्ट और वाछनीय मागो को कमान्डेन्ट के समक्ष रखे जिसका समुचित समाधान करने मे शिविर कमान्डेन्ट एवं अन्य अधिकारी भरसक प्रयत्न करते हैं। समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के प्रतिनिधि शिविर मे आकर युद्धवन्दियों से अलग एकात में बातें करते है और शिविर अधिकारियो से उन्हे अनेक सुविधाएं देने की सिफारिशें करते है।

शिविरों मे नजरवन्द अनेक युद्धवन्दियो को अनेक प्रकार की सामाजिक एव वैयक्तिक स्वतंत्रता भी भारत सरकार ने दी। इसका ज्वलंत उदाहरण है एक शिविर मे नजरबन्द श्री अफजल हुसैन और कुमारी अनीस फातिमा-दो असैनिक प्रेमी युद्धवन्दियों—का शिविर मे ही मौलवी हसन इमाम रिजवी और अन्य कितने ही सैनिक-असैनिक युद्धवन्दियो की साक्षी में शिया मत के रीति-रिवाजो के अनुसार निकाह। स्वदेश गमन तक की प्रतीक्षा ये विकल प्रेमी नही कर सके। भारतीय अधिकारियों ने इस नवविवाहित युगल को निकाह संबंधी सभी सुविधाएं प्रदान की।

जेनेवा अभिसमय के अनुच्छेद 49 व 50 के अन्तर्गत अभिरक्षक देश यदि चाहे तो युद्धवन्दियों की आयु, लिग, पद तथा स्वास्थ्य को ध्यान मे रखते हुए उनसे श्रम कार्य जैसे कृषि, कच्चे माल की उत्पत्ति सम्बन्धी उद्योग, निर्माण व, उत्पादन कार्य, वाणिज्य, व्यापारिक, कला, क्राफ्ट, सार्वजनिक उपयोग की सेवाएं जिनका कोई सैनिक महत्त्व न हो, और घरेलू सेवाएं आदि करा सकता है। परन्तु भारत सरकार ने इन युद्धवन्दियों से शिविरों की सफाई आदि को छोड़कर कोई श्रम का कार्य नहीं लिया ताकि ये लोग यह महसूस न करें कि उन पर कोई अनावश्यक दबाव डाला जा रहा है कि उनकी प्रतिष्ठा को कोई ठेस पहुचाई जा रही है।

बगला देश मे इन युद्धवन्दियो ने भारतीय सेना और मुक्ति वाहिनी की सयुक्त कमान के समक्ष आत्म समर्पण किया था। बाद मे बंगला देश भी जेनेवा सम्मेलन की शर्तों को स्वीकार कर चुका है। इन्ही शर्तों मे प्रावधान है कि सघर्परत एक पक्ष की दो शक्तियो मे से किसी भी शक्ति के सुरक्षा

उत्तदायित्व में युद्धबन्दियों को रखा जा सकता है। और अपनी सुविधानुसार ऐसी दो शक्तियां एक के पास से दूसरी शक्ति के पास युद्धबन्दियों का हस्तांतरण कर सकती है। तदनुसार भारत सरकार यदि चाहती तो दो वर्ष की लम्बी अवधि मे इन युद्धबन्दियो को अपने पास न रखकर बंगला देश को भी सौप सकती थी। लेकिन ऐसा नही किया गया। क्योकि इन युद्धबन्दियों के जघन्य पापों के फलस्वरूप बदले की भावना से प्रेरित बगला देश के नागरिक इनके साथ दुर्व्यवहार कर सकते थे और ऐसी हालत में सभव था कि इनकी सुरक्षा ही खतरे मे पड़ जाती। पिछले सत्तर वर्षों के अन्तराल में विश्व के विभिन्न देशों में कितने ही संघर्ष हुए है, कितने ही युद्ध हुए, कितने ही युद्धबन्दियो को अनेक देशो ने अपने पास नजरबन्द रखा है। इतिहास उठाकर देखने से पता लगता है कि भारत ने जिस प्रकार का मानवीय व्यवहार दो वर्ष से भी अधिक समय तक 93,000 युद्धबन्दियों के साथ किया है वह अपने आप मे एक अपूर्व उदाहरण है। सच यह है जैसा कि प्रधानमत्री श्रीमति इन्दिरा गाधी ने पिछले युद्ध के दौरान अपने एक भाषण में कहा था कि हमारी लड़ाई पाकिस्तानी जनता के साथ नही है।

इन सभी युद्धबन्दियों ने लड़ते हुए युद्ध क्षेत्र में आत्म समर्पण नहीं किया था। कितने ही लोग ऐसे है जो युद्ध क्षेत्र के बहुत पीछे अपनी रेजिमेन्ट व सैनिक यूनिटो मे बैठे थे। इसी से जब ये लोग यहां पर आए तो कितना ही व्यक्तिगत साजो-सामान व संपत्ति और धन साथ लेकर आए थे। यह सब सामान उन्होने शिविर अधिकारियों को सौंपकर एक रसीद ले ली थी। शिविर अधिकारियो ने इनकी इस संपत्ति की सुरक्षा की और चलते समय रसीदों के आधार पर इनकी सब सम्पत्ति इन्हे थमा दी। सुरक्षा और राष्ट्रहित की चिन्ता किए बगैर भारत सरकार ने युद्धबन्दियों से ऐसी वस्तुएं नहीं ली जिनका इनके लिए कोई भावनात्मक मूल्य था, जैसे विवाह की अंगूठी, रैंक के पिप्स, मेडल तथा तगमें। युद्धबन्दी होते हुए भी ये लोग इस प्रकार की वस्तुओं को अपने पास रखे रहे।

कई कैदियो ने धार्मिक पर्वों के समय मिली सुविधाओ का विवरण दे पाकिस्तान मे पत्र लिखे हैं। उनके अनुसार भारतीय शिविर अधिकारी

और अन्य स्टाफ रमजान के दिनों में कैदियों की उपस्थिति में या उनके सामने कुछ खाना पीना तो अलग धूम्रपान भी नहीं करते और इस तरह उनकी धार्मिक भावना को किसी प्रकार की ठेस पहुंचाए बिना सहयोग पूर्ण वातावरण बनाकर रात के एक बजे खाना पकाने, दो से पाच बजे तक पानी व बिजली की समुचित व्यवस्था करने की सुविधाएं प्रदान करने में कोई कसर शेष नही छोडते। ईद का पर्व उनके साथ मिलकर प्रसन्नता-पूर्वक मनाते है। एक ने तो ईद की नमाज की तुलना करते हुए शिविर को मक्का तक की उपाधि देने की गुस्ताखी की है।

छब्बीस महीने की अवधि में इतनी बड़ी संख्या मे से कितने ही युद्ध-बन्दी, बीमारी के कारण, आपस मे लड़कर, या भागने के प्रयास मे गोली खाकर मर चुके है। ऐसी स्थिति में मरने वाले के अन्य साथी युद्धबन्दियो की उपस्थिति एवं साक्षी में लाश का पोस्टमार्टम कर, मृत्यु प्रमाण पत्र बनाए गए। उनके निकटतम संबंधियों को सूचना देने के लिए पाकिस्तानी सरकार से सम्बन्ध स्थापित किये गए। मृत्यु के कारणों की छानबीन और जाच रिपोर्ट की कितनी ही प्रतियां बनाई गई। मृतक के अपने धार्मिक रीति-रिवाजों के अनुसार सैनिकोचित आदर दे उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की गई। पाकिस्तानी राष्ट्रध्वज के कफन में उन्हें स्थानीय कब्रिस्तान में दफनाया गया है। कब्र के सिरहाने पर एक बोर्ड लगा रहता है जिसमें मृतक का विवरण और मरण-तिथि लिखी जाती है। कब्रिस्तान तक अनेक युद्ध-बन्दी और मौलवी साक्षी के रूप में शव के साथ जाते हैं। इन कब्रों की उसी प्रकार से देखभाल की जाती है जैसी किसी भी मुसलमान की कब्र की होनी चाहिए। देखभाल का उत्तरदायित्व शिविर अधिकारियों का होता है। एक महीने मे कम से कम एक बार कब्रिस्तान जाकर शिविर कमान्डेन्ट कब्र देखकर आते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय समिति के प्रतिनिधियों को भी इन युद्ध-बन्दियों की कब्रें दिखाई जाती हैं जो भारत की इस व्यवस्था से सतुष्ट हैं।

कितने ही युद्धबन्दी अपनी व्यक्तिगत समस्याओं, अस्वस्थ रहने के कारण मानवीय आधार पर स्वदेश गमन की प्रार्थना करते रहते हैं। अधिकतर लोगो की प्रार्थना सुन ली जाती है। ऐसे कितने ही उदाहरण है जब भारतीय सरकार ने मानवीय आधार पर इनके दुःख समझते हुए इन्हे

शीघ्रातिशीघ्र वापस पाकिस्तान भेजा है। पाकिस्तानी सेना के एक उच्च अधिकारी मेजर जनरल को इसलिए हवाई जहाज से पाकिस्तान भेजा था क्योंकि उसका पुत्र गंभीर रूप से बीमार था। एक असैनिक युद्धवन्दी को उसकी बेटी की कैंसर की बीमारी के कारण वापस भेजा गया। दो सैनिक अधिकारियों को उनकी मां के अस्वस्थ रहने के कारण वापस पाकिस्तान भेजा गया। समय-समय पर कितने ही बीमार, घायल व वृद्ध लोगों को उनकी प्रार्थना पर भारत सरकार बिना किसी पक्षपात या अड़चनों के उनके स्वदेश वापस भेजती रही है। मैंने इन लोगों के कितने ही आवेदन-पत्र देखे हैं जिनमें प्रत्यावर्तन के लिए प्रार्थनाएं की गई हैं। लगभग सभी में पारिवारिक एवं व्यक्तिगत कठिनाईयां—एक का छोटा भाई मर गया बूढ़े मा, बाप कोई सहारा नहीं, सबल नहीं, भाई और उसके बीवी बच्चे लावारिस। एक परिवार में स्वयं उत्तरदायी पुरुष, जवान बेटियो की शादी करनी है, एक बीमार जिन्दगी के आखिरी दिन अपनों के सामीप्य में काटना चाहता है। कितने लोग और कितने उनके दुःख। क्या भारत चाह-कर भी इन दुःखों को दूर कर सकता था? नहीं। जब तक पाकिस्तान ने उसका साथ नही दिया।

आत्म समर्पण कर भारत की हिरासत में आने के दिन से 93,000 युद्धवन्दियों के प्रत्यावर्तन हो स्वदेश-गमन के दिन तक भारत सरकार ने उनके साथ जाति, वर्ण, धर्म, जन्म, धन और राजनैतिक विचार आदि सिद्धान्तों पर आधारित भेद-भाव के बिना उससे भी बढ़कर मानवतापूर्ण व्यवहार किया। जैसे व्यवहार की आज के सभ्य युग मे अन्तर्राष्ट्रीय कानून अपेक्षा करता है। एक युद्धवन्दी ने अपने मित्रों को पत्र लिखा था कि शिविरों का जीवन एक वन्दी का जीवन नही बल्कि वैसा ही हैं जैसा एक सैनिक का अपनी रेजिमेन्ट में होता है।

□ □

मुक्ताकाश के नीचे

"हिन्द की कैद से भागकर आए कैप्टन ओ से परसों मिला था। उसी से पता लगा कि तुम्हारे साथ बेहतर बर्ताव किया जा रहा है। अपने भागने का किस्सा उसने खूब सुनाया और खूब सुनाया। तुम्हारी खैरियत के बारे में जानकर दिल को तसल्ली हुई। अल्लाह के करम से तुम जल्द ही घर लौटोगे।"

एक युद्धवन्दी के पास पाकिस्तान से आए एक पत्र का अंश है—ये पक्तियां। कोई भी यह सोचने पर बाध्य हो जाएगा कि शिविरों मे उपलब्ध इतनी सुविधाओं और बेहतर बर्ताव के बावजूद आखिर ये युद्ध-बन्दी शिविरों से भागते क्यों है? बन्दी जीवन की एक रसता से उपजी कुण्ठा और सत्रास के अतिरिक्त मुझे इनके शिविरों से भागने का एक कारण और लगता है। जब से ये लोग आत्म-समर्पण के पश्चात् भारत में नजरबन्द होकर रहे है—समय-समय पर बगला देश की सरकार यह घोषणा करती रही है कि बगला देश में विशाल स्तर पर होने वाले बलात्कार, हत्या, लूट आगजनी और अत्याचार के उत्तरदायी पाकिस्तानी सैनिकों को विधिवत रूप से दंडित किया जाएगा। पहले बगला देश ने ऐसे 1500 युद्धवन्दियों की माग की थी जिन पर अन्तर्राष्ट्रीय कानून के तहत मुकद्दमे चलाए जाने थे। बाद में यह सख्या घटकर 195 रह गई। कई युद्धवन्दी जो वास्तव मे नृशस और जघन्य कृत्यों के भागी हैं इस प्रकार की घोषणा से डर जाते हैं और मानसिक सघर्ष के फलस्वरूप जब ये अपने आपको उपरोक्त अपराधियों मे से ही एक पाते हैं तो जान बचाकर भागने

का प्रयास करते हैं। इस प्रयास के पीछे उनका यही उद्देश्य रहता होगा कि वचकर पाकिस्तान निकल गए तो ठीक और नही निकल पाए तो गोली खाकर मरने पर उस यातना से बच जाएंगे जो अपराधी करार दिए जाने पर उन्हें बंगला देश द्वारा दी जा सकती है। दूसरे यह भी हो सकता है कि कुछ लोग पाकिस्तानी सरकार की नीतियों एवं निरंकुशता से तंग आ गये है। और यह भी जानते हैं कि वैसे तो भारत की नागरिकता उन्हें नही मिल पाएगी, हा शिविरो से भाग कही छिप-छिपाकर वे भारत में बसने का स्वप्न देखते हों। ऐसे लोगों में भी अधिकतर संख्या उन लोगों की है जिन्हे 'बिहारी मुसलमान' कहकर न तो पाकिस्तान स्वीकार करना चाहता है और न ही वे अब बंगला देश में खप पाएगे। वे व्यक्ति भी इन भागने वालों मे हो सकते है जिनका पिछले संघर्ष मे सब कुछ समाप्त हो गया है अब कोई रिश्तेदार या नाती नही रहा है। भारत-पाक की मिलती-जुलती भाषा, रहन-सहन, वेशभूषा, जलवायु एक से दीखने वाले लोग आदि भी भागने वाले युद्धवन्दियों के लिए वरदान सिद्ध होते हैं। कोई भी युद्धवन्दी शिविर से बाहर आने पर अपने आपको भारतीय पंजाबी बताकर सीमा तक पहुंच सकता है। स्थानीय लोगो के साथ मिलने-जुलने, उनकी भाषा बोलने मे उसे कोई कठिनाई नही होगी। इसके अतिरिक्त निस्सदेह कुछ स्थानीय देशद्रोहियों की ओर से भागने वाले युद्धवन्दियों को पूर्ण सहयोग और सहायता मिलने की भी आशा होगी।

बाईस महीने के लम्बे अन्तराल (नवम्बर 1973 तक) 93,000 युद्धवन्दियों मे से समय-समय पर विभिन्न शिविरों से केवल 102 युद्धवन्दियो ने कंटीलेतारों से घिरे जीवन से बाहर मुक्ताकाश के नीचे आने के प्रयास किये है। इस संख्या में से केवल 22 ही ऐसे भाग्यशाली रहे जो सीमा पार कर पाकिस्तान पहुंचने में सफल हुए है।

पाकिस्तान मे भव्य स्वागत और ख्याति की लालसा में समय-समय पर विभिन्न शिविरों से कितने ही युद्धवन्दियों ने भाग निकलने के प्रयास किये है। 30 दिसम्बर, 1971 को आगरा और मथुरा के बीच आगरा जाती हुई गाड़ी से कूदकर कैप्टन रशीद लापता हो गया था जो फिर नही पकड़ा जा सका। आठ जनवरी 1972 को भी पाच युद्धवन्दियों ने चलती

गाड़ी से कूदकर पाकिस्तान भाग निकलने का प्रयास किया था। लेकिन दस दिन के बाद वे फिर पकड़े गए। फरवरी 1973 में कैप्टन महमूद इरशाद और कैप्टन अब्दुल रहमान एक शिविर से भाग निकले थे। सफलतापूर्वक नेपाल पहुच वहा से वे पाकिस्तान जाने मे सफल हो गये थे। 10 मार्च 1972 को रात के लगभग चार बजे एक युद्धबन्दी शिविर की बाह्य तार पंक्ति के अन्दर एक पेड़ पर चढकर बाहर छलाग लगाने की तैयारी कर रहा था कि धराशायी हो गया। जुलाई 1972 तक शिविरों से भाग निकलने के अधिकतर प्रयास अफसर युद्धबन्दियों ने ही किये। तत्पश्चात् जब शिमला समझौते मे भी इन लोगों के वापस लौटने की समस्या नहीं सुलझाई जा सकी तो अन्य श्रेणी के युद्धबन्दियो ने भी निराश हो भाग निकलने के प्रयास किये। 28 नवम्बर 1972 की अलस्सुबह कोहरा इतना घना था कि सामने दस गज की दूरी से आगे कुछ भी दिखाई नही पडता था। अवसर का लाभ उठाने के लिए कुछ अधिकारी एव अन्य श्रेणी के युद्धबन्दियों ने तारो से वधे जीवन के बाहर आ शिविर से भाग निकलने का प्रयास किया था। पूरी तैयारी के साथ एक-एक कर वे तार—पंक्ति के निकट आ रहे थे। लेकिन जब पहला युद्धबन्दी कैप्टन नियाजी तारपंक्ति पर चढ़ रहा था सतर्क सन्तरी ने उसे वही ढेर कर दिया। उस दिन भी दो युद्धबन्दी गोली का निशाना बने और कुछ जखमी हो गए थे। फरवरी 1973 मे एक युद्धबन्दी कैप्टन (डाक्टर) रियाज-उल-हक शिविर से भाग निकलने में सफल हुआ था। शायद उसकी योजना बहुत दिन से बन रही थी। आसपास के वातावरण परिस्थितियो एव सन्तरियों की मानसिक दशा का अच्छा अध्ययन करने के बाद ही उसने इस दिशा में कदम उठाया था। भागने से पहले उसने बड़ी दाढी रखी हुई थी जो भागने के दिन ही साफ की गई थी। उसके अपने रोग से सम्बन्धित एक्सरे प्लेट एक स्टेथिस्कोप डाक्टरों वाला श्वेत चोगा और नेम प्लेट जैसी सभी वस्तुओं का प्रबन्ध कर लिया था। उस दिन गोधूली के समय वह इस वेप-भूषा मे बड़े आत्मविश्वास के साथ शिविर अस्पताल (जहा वह बीमार पड़ने पर इलाज करा रहा था) के बाह्य द्वार की ओर आया। पहरे पर तैनात सन्तरी ने उसे भारतीय सैनिक डाक्टर समझकर सैल्यूट दिया और

बिना पास देखे एवं पूछताछ किए द्वार खोल दिया। बड़ी संजीदगी और अभिनय पटुता के साथ सैल्यूट का जवाब दे वह बाहर आ गया और फिर नही पकड़ा जा सका।"'सेवन ईयर्स इन तिब्बत"'के जरमन एव इतालवी युद्धबन्दी भी द्वितीय विश्व युद्ध के समय देहरादून युद्धबन्दी शिविर से भारतीय श्रमिकों और अंग्रेज अफसरों की वेशभूषा पहन ठीक इस प्रकार शिविर से भाग निकलने मे सफल हुए थे। पाकिस्तानी युद्धवन्दियो में से चार युद्धबन्दी उस दिन भागने मे सफल हुए थे जब शिविर क्षेत्र की बिजली व्यवस्था भंग हो गई थी और इसी बीच वे चारो जने तारो को काटकर निर्बाध बाहर निकल आये थे। शिविर से गन्दे पानी की बाहर वाली नाली से होकर भी कई युद्धबन्दियों ने भागने के प्रयास किये। इनमे से अधिकतर पकड़ लिए गए। कुछ बारबार की चेतावनी पर भी जब नही रुके तो सन्तरी उन्हे गोली मारने पर बाध्य हो गए। हा, इनमे से सरेआम दिन दहाड़े दो युद्धबन्दी अपने प्रयास में सफल हो गए थे। अन्दर शिविरो मे एम० ई० एस० के श्रमिक कार्य करने के लिए आते रहते है। वे दो युद्धबन्दी भी किसी तरह फावड़ा-तसला ले इन श्रमिकों मे मिल गए और काम करते रहे। बीच में बाहर वाले सन्तरी के सामने अन्दर पेड़ के नीचे बैठकर वे थोड़ी देर सुस्ताए भी और अवसर मिलते ही नाली मे पेट के बल रेंगकर शिविर से बाहर भाग निकलने मे सफल हुए। एक और घटना बड़ी रोचक है जब दो युद्धबन्दी दिन मे शिविर से भाग निकले थे। शिविर में कुछ निर्माण कार्य चल रहा था। बाहर से ईंट, मिट्टी और सीमेन्ट आदि गधो पर लादकर अन्दर पहुंचाई जा रही थी। पता नही कितने दिन तक यह काम होता रहा। एक दिन दो युद्धबन्दी अन्दर से गधे हाकते हुए शिविर के द्वार तक आए और बिना किसी रुकावट के बाहर निकलने में सफल हो गए।

नजरबन्दी की अवधि मे शिविर से भाग निकलने के, दुस्साहसी युद्धबन्दियों ने विभिन्न स्थानो पर विभिन्न शिविरो में भूमिगत सुरगे खोदकर इसके द्वारा भागने के प्रयास किये। लेकिन एक भी योजना साकार न हो सकी और इससे पहले कि सुरंग पूरी हो भारतीय सैनिकों ने सुरग का पता लगा लिया। ये सुरंगे अधिकतर स्नानगृह, सडास या स्टोर रूम से प्रारम्भ

होती थी। स्नानगृह और संडास आदि क्योंकि शिविरों की बाह्य तार पंक्ति के निकट होते है और बाहर निकलने में ज्यादा दूरी भी तय नही करनी पड़ती। अत ये लोग इन्ही स्थानो को सुरग खोदने के लिए उपयुक्त स्थान समझते थे। ये सुरग 5' से लेकर 10' की गहराई, दो-ढाई फीट की चौडाई और कही कही तो 130' की लम्बाई तक बनाई जा चुकी थी। सुरंग खोदने के लिए खाली कनस्तर के टुकड़े, लोहे की छड़ें या स्टेनलैस स्टील की डिनर प्लेटें नुकीले बांस के टुकड़े एवं स्वयं निर्मित छोटे छोटे औजारो का प्रयोग किया गया था। सुरग की मिट्टी को ये लोग पैंट, पाजामा की जेब मे भरकर शिविर क्षेत्र मे इधर-उधर घूमते हुए थोड़ी-थोडी करके गिराते चलते थे; पानी की नाली में बहा देते थे या सडास मे डाल देते थे। कई स्थानो पर तो 'वूडन हार्स' के नायक की सी विलक्षण बुद्धि से लम्बी सुरग से बाहर तक मिट्टी लाने के लिए इन्होंने 21 इंच गुणा 15 इंच के आकार की लकड़ी की ट्राली तक बना ली थी। जो एक लम्बी रस्सी (जिसके दोनों सिरे जुड़े हों) से बंधी रहती थी। रस्सी अन्दर खोदने वाले के पास से लेकर बाहर सुरंग के मुह पर बैठे युद्धबन्दी के पास तक फैली रहती। ट्राली मिट्टी से भर जाने पर अन्दर वाला युद्धबन्दी रस्सी हिलाकर सकेत देता और बाहर बैठा युद्धबन्दी रस्सी खीचकर ट्राली को बाहर ला उसे खाली कर देता। इसी बीच अन्दर वाला युद्धबन्दी सुरंग से और मिट्टी खोद लेता। बाहर वाला फिर रस्सी हिलाकर सकेत देता और ट्राली अन्दर सरकने लगती। इससे सुरग से बाहर मिट्टी लाने के लिए युद्धबन्दियो को बार-बार अन्दर सुरग मे जाने की जरूरत न पड़ती। सुरंग को प्रकाशयुक्त करने के लिए लालटेन अथवा तार और बल्ब आदि भी इन्होंने जुटा लिए थे। यही नही सुरंग मे टेबिल फंन ले जाकर अन्दर सुरंग में कार्य करने वालो को गर्मी से बचा उन्हें राहत दी जाती थी। अफसर युद्धबन्दियों ने ऐसी एक सुरग रसोईघर के बाहर पड़ी ईंधन के लिए जलाने वाली लकड़ियो के ढेर के नीचे बनाई थी। रात के दस बजे लकड़ियो को एक ओर हटा दिया जाता और फिर पारी-पारी से रात के चार-पाच बजे तक सुरंग बनाने का कार्य चलता। दिन निकलने से पहले ही सुरंग के मुह को फिर लकड़ियों से ढक दिया जाता। बड़े कमरो से

शुरू होने वाली सुरंग में छत के पंखे के डंडों को खोल, पथरीली जमीन होने के बावजूद भी रात-भर सुरंग बनाई जाती थी। सुरंग के मुंह को लकड़ी के छोटे तख्ते या बोरी और पुराने कपड़ों के गद्दों से ढक दिया जाता था जिसके ऊपर दिन में हर समय कोई न कोई बैठा बड़ी तन्मयता से कुरान-शरीफ का पाठ करता रहता था जिससे भारतीय सैनिकों को कतई भी शक न हो। स्नानगृह या रसोई में बनाई जाने वाली सुरंग के मुंह पर धरातल पर एक-डेढ़ फीट नीचे लकड़ी का तख्ता रखकर और उस पर मिट्टी डालकर प्रतिदिन लिपाई कर दी जाती थी। यह कार्य दिन निकलने से पहले ही पूरा कर दिया जाता था। रात की अन्तिम रोल कॉल के बाद फिर सुरंग पर कार्य शुरू हो जाता था। एक शिविर में यह कार्य एक बेकार पड़े बैरक में दिन में ही चला करता था। यह सुरंग शिविर की बाह्य तार पंक्ति से भी 2"-3" आगे निकल चुकी थी जिसका समय रहते सुराग लग गया।

धोने के लिए कपड़ों के गट्ठर बांधकर शिविर से बाहर निकाले गए। लेकिन कपड़े धोबी को न देकर स्टोर मे बन्द कर दिए गए। गर्मियों के दिन थे। एक दो घण्टे बाद जब स्टोर कीपर स्टोर मे गया तो उसने अन्दर से आती एक अजीब आवाज सुनी। ताला खोलकर वह अन्दर गया तो देखा कि आवाज कपड़ों से बंधे गट्ठर से आ रही है। गठरी खोली तो अन्दर से एक युद्धबन्दी निकला। गर्मी के कारण उसका दम घुट गया और उस समय वह बेहोशी की हालत मे था। शायद उसकी योजना रही होगी कि धोबी घाट पर ले जाकर जब धोबी गठरी खोलेगा तो वह अन्दर से निकलकर उस पर आक्रमण कर देगा और इस तरह उसे पराजित कर भाग निकलेगा। लेकिन उस बेचारे को स्वय ही जान के लाले पड़ गए।

शिविरों मे जिस दिन कोई फिल्म दिखाई जाती है तो सिनेमा सैक्सन का ट्रक भी प्रोजेक्टर और फिल्म आदि के साथ शिविर में जाता है। एक रात फिल्म समाप्त होने पर जब गाड़ी शिविर से बाहर आ रही थी तो शिविर के द्वार पर सन्तरी ने गाड़ी के नीचे टार्च जलाकर देखा। वहा एक्सल पर एक युद्धबन्दी आराम से चिपका था। उसे बाहर निकाल लिया गया। इस तरह शिविर से भाग निकलने की उसकी योजना भी ऐन वक्त पर आकर

नाकामयाब हो गई। शिविर को प्रभागों में बांटने के लिए अन्दर भी दो प्रभागों के बीच तारपक्तियों से बनी एक गली होती है जिसमें सशस्त्र सन्तरी घूमता हुआ पहरा देता रहता है। एक रात जब सन्तरियों की बदली हो रही थी तो एक युद्धबन्दी ने गली में कूदकर ड्यूटी से वापस जाते सन्तरी से राईफल छीनने की कोशिश की। सन्तरी को इस आकस्मिक छीना-झपटी की कतई आशा नही थी। ड्यूटी समाप्त कर बड़ी बेफिक्री से वह वापस आ रहा था। राईफल को लेकर युद्धबन्दी और सन्तरी में छीना झपटी होने लगी। तुरन्त दूसरे सन्तरी ने आकर युद्धबन्दी को राईफल छोड़ने के लिए कहा। लेकिन उसने चेतावनी को अनसुना कर दिया। बाध्य हो सन्तरी को गोली चलानी पड़ी और युद्धबन्दी वही प्राण छोड़ गया। दिन के लगभग दस बजे उस दिन तेज हवा के साथ-साथ
बारिश हो रही थी। तभी एक युद्धबन्दी शिविर के बाहर

कोई युद्धवन्दी भागने का प्रयास कर रहा था। बाद में पता लगा कि 'बी' जोन के एक शिविर में अचानक बिजली व्यवस्था भंग होने के कारण क्षणात में ही सैंकड़ों युद्धवन्दी शिविर की बाह्य तारपंक्ति के निकट एकत्र हो गए हैं और देखते ही देखते वे तार पक्तियों पर चढ़कर बाहर कूदने लगे। पीछे वाले चढ़ने में उनकी सहायता कर रहे थे। सन्तरियो ने चेतावनी दी कि वे सभी तार से पीछे हट जायें। लेकिन चेतावनी को उन्होने अनसुना कर दिया। जब दो युद्धवन्दी तार पंक्ति कूद बाहर कस्बे की ओर दौड़ने लगे तो मजबूरन सन्तरियो को गोली चलानी पड़ी। उस दिन भी तीन मरे और एक घायल हो गया। उधर युद्धवन्दी एकत्र हो हो-हल्ला करने लगे। बाद में उन्हें तितर-बितर करने के लिए हवाई फायरिंग करनी पड़ी। अन्यत्र भी रात मे बिजली व्यवस्था भंग होने पर कई युद्धवन्दी अकेले ही तारो के नीचे से पेट के बल रेंगकर शिविर से बाहर आने में सफल हुए। इनमे से कई तो पश्चिमी सीमा पार करने से पहले ही पकड़ लिए गए।

सैनिक अस्पताल से एक और बीमार असैनिक युद्धबन्दी भागा था। शिविर के किनारे बने स्नान गृह की खिड़की से कूद वह बाहर *आ गया* था। कई अफसरों के पास से तलाशी में हाथ से बने, भारतीय सैनिकों के कपड़े व रैंक पिप्स, बैज भी मिले। ये सब अवसर मिलते ही भाग निकलने की तैयारी थी।

सामूहिक रूप से भारतीय सन्तरियों से शस्त्र छीन और विद्रोह कर भी भागने के प्रयास किये हैं। कई बार तो वे शस्त्र छीनने में सफल हुए, सघर्ष चला और कितने ही युद्धवन्दी इस तरह से संघर्ष में मारे गए। उधर कुछ भारतीय अधिकारी एवं सन्तरी भी घायल हुए। इस प्रकार की कोई भी योजना सफल नही हो पाई।

नाकामयाब हो गई। शिविर को प्रभागों में बांटने के लिए अन्दर भी दो प्रभागों के बीच तारपंक्तियों से बनी एक गली होती है जिसमें सशस्त्र सन्तरी घूमता हुआ पहरा देता रहता है। एक रात जब सन्तरियों की बदली हो रही थी तो एक युद्धबन्दी ने गली में कूदकर ड्यूटी से वापस जाते सन्तरी से राईफल छीनने की कोशिश की। सन्तरी को इस आकस्मिक छीना-झपटी की कतई आशा नहीं थी। ड्यूटी समाप्त कर बड़ी बेफिक्री से वह वापस आ रहा था। राईफल को लेकर युद्धबन्दी और सन्तरी में छीना झपटी होने लगी। तुरन्त दूसरे सन्तरी ने आकर युद्धबन्दी को राईफल छोड़ने के लिए कहा। लेकिन उसने चेतावनी को अनसुना कर दिया। बाध्य हो सन्तरी को गोली चलानी पड़ी और युद्धबन्दी वहीं प्राण छोड़ गया। दिन के लगभग दस बजे उस दिन तेज हवा के साथ-साथ अन्धाधुंध बारिश हो रही थी। तभी एक युद्धबन्दी शिविर के बाहर वाली पहली तार पक्ति में कूद गया। सन्तरी की निगाह पड़ी और उसने युद्धबन्दी को हाथ ऊपर उठा आत्मसमपण के लिए कहा। पर वह नही माना। सन्तरी ने गोली चलाई और निशाना चूक गया। फिर दूसरी गोली, तीसरी, चौथी पाचवीं दनादन चली लेकिन युद्धबन्दी जमीन पर लेट 'रोलिंग' करता हुआ पास की नाली में जा छुपा बिलकुल सुरक्षित। उधर गोली चलने की आवाज सुनते ही सैकड़ों युद्धबन्दी तार पक्ति के अन्दर नाली में लेटे युद्ध-बन्दी के पास खड़े हो शोर मचाने लगे ताकि उस पर और गोली न चलायी जा सके। युद्धबन्दी नही भाग सका। उसे पकड़ लिया गया।

दो दिन लगातार वर्षा होकर शाम को रुक गई थी। क्लब के सामने बाहर बैठे थे। रात के आठ बजे होंगे। कहीं-कहीं से आकाश साफ था। चांद और बादलों का सदियो पुराना खेल चल रहा था। सामने सौ गज पर तारपंक्तियों के पीछे युद्धबन्दी खाना खा चहलकदमी कर रहे थे। कोई उच्च स्वर में 'हीर' गा रहा था बड़ी दर्दीली आवाज में। कई और युद्ध-बन्दी उसका साथ दे रहे थे। मेरा ध्यान उधर ही था। तभी दूर 'बी' जोन की ओर फायरिंग शुरू हो गई। पहले राईफल फिर स्टेनगन। वर्षा होकर रुकने के बाद दूर होते हुए भी रात में लगा कि फायरिंग निकट ही हो रही है। हम चौकन्ने हो गए। हीर गाने वाला भी शान्त हो गया। अवश्य ही

भारत के प्रति युद्धबन्दियों की सम्मान भावना

यह वो सहर तो नही जिसकी आरजू लेकर
चले थे यार कि मिल जाएगी कहीं-न-कही
निजाते दीदा ओ दिल की घड़ी नही आई
चलें चलो कि मंजिल अभी नही आई।

सन् 1947 के बटवारे के बाद, फैज अहमद फ़ैज ने जिस मजिल का उल्लेख अपनी उपरोक्त पक्तियों में किया था, छब्बीस वर्ष चलने के बाद भी, दो वर्ष से भी अधिक उन युद्धबन्दियो के आस-पास रहते हुए, मुझे लगा कि मजिल अभी भी दूर है। पाकिस्तान की पाठशालाओ मे बच्चो के अध्ययन के विषयो में भारत और भारतीयों के प्रति घृणा भी एक विषय रहा होगा। वहा उर्दू भाषा का अक्षर ज्ञान कराने वाले कायदे मे अभी भी जोम से जालिम लिखकर बराबर मे एक सिक्ख का चित्र बना हुआ मिलेगा। भारत-ज्वर नामक रोग से किस तरह पाकिस्तान की जनता पीड़ित रही इसका अनुभव मैंने प्रत्यक्ष किया है।

यहा आने के समय 93,000 युद्धबन्दियों की भी यही मनोदशा रही होगी। वे भी भारत और भारतीयों को घृणा करते थे। लेकिन दो वर्षों तक यहा रहकर और भारत सरकार के रुख एवं भारतीयों के उदार व्यवहार का साक्षात अनुभव कर इन लोगों की गलतफहमी किसी हद तक दूर हो गई है। वे भारत की वास्तविकता को स्वीकार कर चुके है। लेकिन इनमे से सकीर्ण विचारो वाले अभी भी कुछ ऐसे मिल जाएगे जिनकी मनोवृत्ति में विशेष परिवर्तन नही हुआ। वे अभी भी भारत को अपना सबसे

बड़ा शत्रु मानकर एक और जंग लड़ने के सपने देखते हैं। जिसमें वे अपने पराक्रम और शौर्य का प्रदर्शन कर 1971 की पराजय का बदला चुकाने की बात कहते हैं। एक युद्धबन्दी अधिकारी कुछ इसी तरह की बातें सोचता रहता है:

"जिन्दा रहे और फौज में रहे तो एक दिन फ्रन्ट पर जरूर मिलेंगे साब। जंग होगी। पाकिस्तान हिन्दुस्तान में एक और जंग होगी। कोई सूरत नहीं कि जग न हो। पाकिस्तान अपनी हार का बदला जरूर लेगा नतीजा कुछ भी हो। आपको तो पता ही है दुनिया की तारीख में कभी कभी इतनी बड़ी फौज ने सरेन्डर नहीं किया था। पाकिस्तान की मात को, आने वाली जनेरेशन्स (पीढ़ियां) भी कभी इस बात को नहीं भूलेंगी।

तक हम यहां है हिन्द की कैद में। वहा जाने पर क्या होगा मैं बताता हू। दो तीन महीने के बाद ही अगर घर में किसी बात पर गुस्सा आ गया और बीबी को कुछ उल्टा-सीधा कह दिया तो वह छुटते ही बोलेगी—"अरे जाओ इतने बहादुर थे तो बंगला देश में क्यूं हथियार डाल दिए थे। मर क्यू नहीं गए वही। मार क्यू नही दिया।" यह हकीकत है साब। अगरवक्त वे वक्त मुहल्ले के बच्चों से हमारे बच्चों का झगड़ा हो गया तो मुहल्ले के बच्चे भी हाथ उठा-उठाकर हमारे बच्चों को चिढ़ाएगे—"हा, हां मालूम है कैसे तीस मार खां खानदान के हो। बाप तो ईस्ट में सरेन्डर कर हिन्द की कैद में रहा और ये चले है हमसे बातें करने।" ये सब बाते हमे चैन से नही बैठने देंगी। यह एक ऐसा धब्बा लग गया है जो कभी मिट नहीं सकता, जिन्दगी भर भी। इसीलिए कहता हूं कि पाकिस्तान मे चाहे कोई भी सरकार हो—जग एक बार होगी जरूर, बदला लेने के लिए, धब्बा मिटाने के लिए।"

यदि एक युद्धबन्दी अपने गुना हो को कबूल करते हुए अपने पत्र में यह लिख सकता है कि अल्लाह उनकी इबादत का उत्तर जरूर देगा जब उनमे से नब्बे प्रतिशत लोगो ने ईस्ट (बंगला देश) में जघन्य पाप किये है। और सब अपराधी है। तो दूसरा अपने मित्रो को पत्र लिखकर पाकिस्तान

सरकार के पास यह भी सन्देश पहुंचा सकता है कि राष्ट्र हित को खतरे में डालकर असमानता के स्तर पर भारत के साथ कोई समझौता या सन्धि न की जाए। यदि जरूरत हुई तो जीवन भर वह भारत में कैद रहने के लिए तैयार है। सामान्यतया निम्न श्रेणी के अधिकांश एवं उच्च श्रेणी के शिक्षित, एवं उदार विकसित प्रवृत्ति वाले युद्धवन्दी उनके कल्याण हित किए गए भारत के प्रयासो की सराहना करते है और भारतीयो के मानवीय व्यवहार एवं उनके प्रति आदर से प्रभावित हैं। दूसरी ओर कुछ ऐसे भी धर्मांध एव सकुचित दृष्टिकोण वाले हैं जो अपने साथियों के कान भरते रहते है कि जो भी कुछ भारत एवं भारतीय कर रहे हैं वह सब उनके क्षय के लिए है। इसका एक ज्वलंत उदाहरण "इलस्ट्रेटड वीकली आफ इन्डिया" मे प्रकाशित एक लेख "मुस्लिम इन इण्डिया" को पढ़कर हुई प्रतिक्रिया। कुछ के विचार है—"देखो हिन्दुस्तान के अखबार और रिसाले हालाकि अधिसंख्य सम्प्रदाय के लोगों द्वारा संचालित हैं फिर भी वे इतने स्वतन्त्र हैं कि सरकार की प्रत्येक विषय पर आलोचना कर सकते है। कई युद्धवन्दियों को तो आश्चर्य हुआ था कि एक पत्रिका जिसका सम्पादक एक सिक्ख है कैसे मुसलमानों के कल्याण की निष्पक्ष एवं जोरदार वकालत करती है। और यह हिन्दुस्तान ही है जहा एक अदना-सा दस पैसे का अखबार मिसेज इन्दिरा गाधी के मुत्तालिक चाहे जो कुछ लिख सकता है, जहा के सदर (वी० वी० गिरी) घण्टो तक अदालत में खड़े होकर बयान दे सकते है, मगर पाकिस्तान में मियां भुट्टो के खिलाफ कुछ कहने वाला पहले अपने कफन का इन्तजाम करके ही मुह खोलता है। जहा ईद का चाद दिखाई देने की घोषणा करने के लिए नियुक्त उलेमाओं की समिति रोइत-ए-हिल्लाल को भी सरकारी आदेशों का पालन करना पड़ता है।

इनमें बहुत से लोग ऐसे भी हैं जिनमें लगभग दो वर्ष तक भारत मे रहकर और यहा के सविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारो और स्वतन्त्रता का अध्ययन कर और अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत अनेकों सुविधाओं का उपभोग कर एक प्रकार की जागरूकता आई है। अब उन्हे अपने अधिकारो का ज्ञान हो गया है। निडर हो अब वे अपनी समस्याओं एवं कठिनाइयों को उच्च से उच्च अधिकारी के समक्ष रखने मे नही हिचकिचाते।

एक युद्धबन्दी ने भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमति इन्दिरा गांधी को आवेदन पत्र लिखकर अपने मासिक वेतन (जो शिविरों मे मिलता है) को बढ़ाने की प्रार्थना कर अपनी जागरूकता का परिचय दिया था। अब ये भारत और पाकिस्तान की शासन प्रणाली में अन्तर खोजकर भले-बुरे की पहचान स्वयं कर सकते है। भारत के प्रति नए विचार, नई दृष्टि और नए सम्बन्धों की आशाएं लिए ये लोग वापस लौट रहे हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार 52 में से 35 युद्धबन्दी ऐसे है जिन्हे भारत की धर्मनिरपेक्षता में पूर्ण विश्वास है, 13 इसके विरुद्ध मत रखते हैं और शेष 4 तटस्थ।

युद्धबन्दियों की भारत मे नजरबन्दी की अवधि मे भारत-पाकिस्तान एवं बंगला देश की आपस में कई बार बातचीत हुई। समय-समय पर हुई इन वार्ताओं और समझौते की प्रतिक्रिया युद्धबन्दियों पर भी होती थी। शिमला समझौते मे अपनी रिहाई सम्बन्धी कोई घोषणा न पाकर, अधिकतर युद्धबन्दी इस समझौते के प्रति तटस्थ से थे जबकि कुछ प्रसन्न भी थे यह सोचकर कि दो देशों मे बिना किसी तीसरे देश की सहायता के कम से कम सम्वाद की स्थिति तो स्थापित हुई। 17 अप्रैल 1973 की भारत—बगला देश की संयुक्त घोषणा भर--जिसमे पाकिस्तान मे फसे बंगालियों और बंगलादेश में रुके पाकिस्तानियो की अदला-बदली का प्रस्ताव था, इन लोगों ने विरोध प्रकट किया था। उसके अनुसार पाकिस्तान को युद्धबन्दियो पर मुकदमा चलाया जाना कतई स्वीकार नही करना चाहिए या क्योकि यह पाकिस्तान के नाम पर एक धब्बा होता। दूसरा बंगलादेश मे रुके पाकिस्तानियों (विहारी मुसलमान) को भी पाक-सरकार को स्वीकार नही करना चाहिए क्योकि ऐसा होने पर एक बार फिर पाकिस्तान में पुनर्वास की समस्या खड़ी हो जाएगी। और पाकिस्तानियों के लिए अपने स्वयं के रोजगार के अवसर कम होकर वेकारी बढ़ जाएगी। पाकिस्तानियों के लिए अपने जुलाई 1973 में इसलामाबाद और अगस्त 1973 मे देहली में भारत—पाक के प्रतिनिधियों की पारस्परिक वातचीत के सफलतापूर्ण समापन पर ये बहुत खुश थे। ऐसे ही सितम्बर —अक्तूबर 1973 मे जब इन लोगों का स्वदेश लौटना प्रारम्भ हुआ तो इन लोगों ने खुशिया मनाई थी।

—"खुश"—मैं नूर मोहम्मद से पूछता हूं। कल वह छब्बीस महीने भारत में नजरबन्द रहकर वापस पाकिस्तान जा रहा है।

—हां! सर! अब तो खुश होना ही है। घर के लोगों ने जंगी कैदियों की खबर सुनने के लिए पांच सौ रुपये खर्च कर जो रेडियो लिया था आज वे उसका भरपूर फायदा उठाएंगे।" वह फ्रन्टियर के एक दूर-दराज के गांव का रहने वाला है। घर में कौन-कौन है पूछने पर वह बताता है—

—मां-बाप, एक छोटा भाई और मेरी एक चार साल की बच्ची जिसे मैंने अब तक नहीं देखा। उसके पैदा होने से पहले ही ईस्ट में चला गया था।

—फिर तो पहचान भी नहीं पाओगे।

—नहीं सर। फोटो आई थी—वह स्कूल जाने लगी है।

उसे छोड़ मैं आगे बढ़ता हूं हरेक के चेहरे आज चमक रहे हैं—शिविर में चारों ओर खुशी की हवा बह रही है, इबादत, नमाज़ भी जोर पकड़ गए हैं। कम से कम दस दिन पहले इन्हें जाने की सही तिथि बता दी जाती है। और तभी से ये तैयारी में लग जाते हैं। कपड़ों को उधेड़-बुन शुरू हो जाती है। कोई थैला बना रहा है, कोई बिस्तरबंद की पट्टियां ठीक कर रहा है। कुरान पाक को गले में लटकाने के लिए छोटी थैलियां बन रही हैं। आपस में छोटे-छोटे सामान की अदला-बदली चल रही है। भारत की यादगार के लिए कैंटीन से विभिन्न प्रकार के सामान और चाय की पत्ती एवं कॉफी खरीदी जा रही है। इनका कीमती सामान रुपए, घड़ियां, रेडियो, कपड़े आदि वापस दिए जा रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति का प्रतिनिधि एक दिन पहले आकर इन्हें रिपेट्रिएशन (प्रत्यावर्तन) कार्ड बांटता है जिसे बाधा चौकी तक ये अपने साथ रखेंगे। भारतीय अधिकारी इन्हें एकत्र कर रास्ते के लिए निर्देश दे रहे हैं। चिकित्सा कोर के व्यक्ति साथ जाने के लिए तैयार हैं। और आज वे मुर्ग कट जाएंगे जो युद्धबन्दियों ने अपने मासिक पेशगी वेतन से बचाकर खरीदे थे और आज के दिन के

लिए पाल रखे थे। कल जौहर से वाद की नमाजें ये कंटीले तारों से घिरे शिविरों में नहीं पढ़ेंगे, कल ये रोल कॉल के लिए ह्विसल बजने पर सामने के मैदान में एकत्र नही होंगे, कल की रात ये सशस्त्र पहरे में सांस नहीं लेंगे। कल, आने वाला कल कितना महत्वपूर्ण है जिसके सूरज की किरण वतन लौटने के उल्लास और अपनों से मिलने की उमंग लेकर आएगी— परतन्त्रता और स्वतन्त्रता के बीच की यह सपनों भरी रात— कितने वन्दी सो पाएंगे···

—सुवह सकारे ही वे अपना-अपना सामान बांध पंक्तिवद्ध मैदान में आ वैठे हैं—भारतीय अधिकारी उन्हें आदेश दे रहे है—अन्दर कोलाहल है। शिविर से रेलवे स्टेशन तक सड़क के दोनों ओर भारतीय सैनिक गार्डस तैनात है—रेलगाड़ी कल ही आकर प्लेटफार्म पर लग गई थी। अवसर पा मैं भी स्टेशन तक एक वार हो आया हूं। गाड़ी की सफाई हो चुकी है यही गाड़ी कुछ युद्धवन्दियों को अटारी स्टेशन तक छोड़कर वापस आई है। प्लेटफार्म पर शिविरों के नामांकित वोर्ड लगे है। जिससे युद्धवन्दी अपने नियत स्थान पर जाकर वैठें— पीने के पानी की समुचित व्यवस्था है और उधर चाय वन रही है जो गाड़ी छूटने से पहले युद्धवन्दियों को पिलाई जायेगी। मैंने भी गाड़ी में घूम फिर कर देखा—कितने ही डब्बों की खिड़कियो के काच नए ताजे टूटे हुए थे और प्रथम श्रेणी के डब्बों में सीटों और वर्थों को काटकर-तोड़-फोड़ की हुई थी—पूछने पर मुझे वताया गया कि ये सब कार्य उन युद्धवन्दियों के है जो प्रत्यावर्तित होकर वापस जा चुके है।

स्टेशन से वापस आया तो असंख्य सैनिक ट्रक, गाड़िया शिविर के अन्दर जा चुकी थीं। वे क्रमानुसार पंक्तिवद्ध अपना-अपना सामान गाड़ियों मे लाद रहे है, और उनमें चढ़ रहे है —सव कार्य वड़ी तेजी से हो रहा है। अव वन्दियों और उनके सामान से लदी गाड़िया भी पक्तिवद्ध हो रही हैं। भारतीय वरिष्ठ अधिकारी एक वार गाड़ियो का निरीक्षण करते हैं और फिर वाहर वाला द्वार खुलता है। एक के वाद एक गाड़ी वाहर आ रही है। युद्धवन्दी—अपने वतन लौटते युद्धवन्दी हाथ मिलाकर और हाथ हिला कर भारतीय अधिकारियों एवं सैनिको से विदा ले रहे हैं। वे सव खुश हैं—

देर तक हाथ हिलाते हुए—ऐ ! वह युद्धबन्दी क्या कह रहा है—"सर ! भारत-पाक रिश्ते सुधर जाएं तो एक बार पाकिस्तान जरूर आना—मेरा घर लाहौर मे है—अनारकली मे—एक बार जरूर सर—!" जाते-जाते वह कह रहा है—भावावेश में ! और यह बैठा है वह युद्धबन्दी भी जो कल ही दूसरे शिविर से जमीन में दबी अपनी घड़ी निकालकर लाया था। आने के समय वह उस शिविर मे था और तभी उसने अपनी बहुमूल्य घड़ी भारतीय अधिकारियों के पास जमा न कराकर जमीन मे गाड़ दी थी। कल तक वह इस रहस्य को छिपाए रहा और फिर शिविर कमान्डेन्ट से सब कहानी कह दी। हंसकर शिविर कमान्डेन्ट ने कुछ सन्तरियों के साथ उसे उस शिविर में भेज दिया था। घड़ी अब तक जंग खा चुकी थी। सब गाड़ियां शिविर के बाहर निकल चुकी थी।

बाधा सीमा चौकी तक इनके साथ जाने वाले अधिकारियों से पता लगा कि अटारी से बाधा तक इन्हे फिर सैनिक ट्रकों आदि से ले जाया जाता है और तत्पश्चात कुछ दूर पैदल जबकि सामान सब गाड़ियो से ही जाता है। सीमा की दोनो ओर भारत एव पाकिस्तान के कैम्प बने है सीमा पार करने से पहले भारत मे इन्हे अन्तिम चाय पिलाई जाती है और उसके बाद एक-एक कर क्रमानुसार ये सीमा पार करते हैं—बीच मे भारत, पाकिस्तान एवं अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास समिति के प्रतिनिधि बैठे रहते है। जिन्हें अपना नाम, नम्बर, रैंक आदि बता युद्धबन्दी सीमा पार कर पाकिस्तानी कैम्प में जाते हैं। पाकिस्तान ने एक बड़ा द्वार बना रखा है जहा लाउडस्पीकर पर युद्धबन्दियों के स्वागत मे एक रिकार्ड बजता रहता है—उस कैम्प मे जाने पर भी इनको चाय पान कराया जाता है। और ये 15-20 मिनट में ही भारत तथा पाकिस्तान की चाय के जायके मे अन्तर कर पाते हैं।

यह हो सकता है कि स्वदेश लौटने पर ये युद्धबन्दी अपने सैनिक अधिकारियो, सरकारी विभागों और प्रेस में अपने भविष्य का ध्यान रखते हुए भारत विरोधी बयान दें। क्योंकि इन्हे अन्ततः रहना तो भविष्य में पाकिस्तान मे ही है और किसी भी कीमत पर भारत और भारतीयो के व्यवहार की प्रशसा करके भारत के प्रति सहानुभूति एवं उदार विचारो

वाले सन्देहास्पद व्यक्ति कहलवाना पसन्द नही करेंगे। इसका उदाहरण पाकिस्तानी उर्दू अदीब इन्तेजार हुसैन की उर्दू कहानी नींद है (जिसका अनुवाद सारिका अगस्त 1975 के अंक में प्रकाशित हुआ है) लेकिन इसमे कतई भी शक नहीं होना चाहिए कि अपने प्रियजनों के बीच, अपने बीबी-बच्चो और मित्रगणो के बीच बैठे यहां प्राप्त सुविधाओ का हवाला देकर भारत की सराहना नही करेंगे, उन्हे तो ये बताएगे ही किस प्रकार इन्होंने शिविरो में उत्तम भोजन, औषधि, स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, धार्मिक स्वतन्त्रता, मनोरंजन और क्रीडा सबन्धी सभी सुविधाओं का उपयोग किया है। इनका स्वास्थ्य ही सब कहानी बता देगा। मुझे तो यह कहने मे भी कोई झिझक नही होती कि भविष्य मे फिर कभी भारत-पाक सघर्ष चलने की स्थिति मे (ईशा अल्लाह! ऐसा न हो) यदि ये शस्त्र उठा युद्धभूमि मे आ गए तो लड़ने की बनिस्बत हाथ उठाकर आत्मसमर्पण करना अधिक पसन्द करेंगे। ये जानते है कि भारत में युद्धबन्दियों के प्रति किस प्रकार का व्यवहार किया जाता है। पाकिस्तान लौटने के साथ-साथ यदि यह विकल्प भी होता कि चाहने पर उन्हें भारत की नागरिकता भी दी जा सकती है तो मेरा पूर्ण विश्वास है कि इनमें से एक बड़ी संख्या मे भारत मे रहने के इच्छुक प्रसन्न हो हाथ उठाकर आगे आ जाते।

☐ ☐

युद्धों से
ललनाएँ कुल की सब--
दूषित हो जाती हैं।
...और वर्णसंकर जन्मते हैं,
वासुदेव !

और—अब, कगार पर

"वह कौन रोता है वहां—
इतिहास के अध्याय पर,
जिसमें लिखा है, नौजवानों के—लहू का मोल है
प्रत्यय किसी बूढ़े कुटिल नीतिज्ञ के व्यवहार का;
जिसका हृदय इतना मलिन जितना कि शीर्ष वलक्ष है;
जो आप तो लड़ता नहीं,
कटवा किशोरों को मगर,
आश्वस्त होकर सोचता,
शोणित बहा, लेकिन गई बच लाज सारे देश की।"

किसी भी युद्ध के सन्दर्भ में मुझे कविवर दिनकर के "कुरुक्षेत्र" की ये पंक्तियां अनायास ही याद आ जाती हैं।

इतिहास साक्षी है कि युद्ध के मूल कारण सदा एक से नहीं रहे। एक समय था जब नारी के कारण युद्ध होते थे। हेलेन के कारण ट्राय का युद्ध और पद्मावती के कारण खिलजी द्वारा चित्तौड़ पर आक्रमण इसके प्रमाण है। राम-रावण युद्ध को यदि प्रामाणिक मान लिया जाय तो हम पाते हैं कि संघर्ष का प्रारम्भ सीता-हरण से होता है। एक तरह से देखा जाए तो महाभारत भी द्रौपदी के अपमान का बदला लेने के लिए ही हुआ था। आर्थिक कारणों से एक-दूसरे की सम्पत्ति हड़पने अथवा दूसरे राज्य में लूट-खसोट करने के उद्देश्य से भी युद्ध होते रहे हैं। मध्य काल में कई ऐसे भी आक्रान्ता हुए है जो अपने धर्म प्रचार अथवा विश्वविजय के उद्देश्य

से विशाल सेना के साथ अन्य राज्यो पर आक्रमण करने निकल पड़े। इसके अतिरिक्त अपने राज्य की सीमा-विस्तार अथवा अपनी शक्ति एव शौर्य प्रदर्शन हेतु भी दूसरे राज्यों पर आक्रमण होते रहे। यह प्रवृत्ति कमोवेश आज भी देखने को मिलती है। चीन का भारत पर आक्रमण कर बजर पथरीली धरती को कबजाने मे कोई आर्थिक उद्देश्य नही लगता।

आज युद्ध के कारण बदल गये है। अब अधिकतर युद्धों का उद्देश्य आर्थिक, राजनैतिक या मनोवैज्ञानिक होता है। आधुनिक युद्ध के पक्षधर इसे देशभक्ति, राष्ट्रीय सम्मान, लोकतत्र की प्रतिरक्षा, शान्ति की प्रतिष्ठा, न्याय की स्थापना या मानवता की सुरक्षा जैसे नामो से पुकारते हैं। किन्तु युद्ध, वास्तव मे, विनाश और महाकाल के बर्बर एव नग्न नृत्य के अतिरिक्त कुछ भी नही। स्वार्थान्धता, एक-दूसरे के प्रति भय, अविश्वास एव घृणा जब लबालब भर छलकने लगते हैं तो दो राष्ट्रों अथवा दो विभिन्न सैद्धातिक विचारधारा वाली शक्तियो के बीच युद्ध का शंख फूंका जाता है। नरमेध होता है। मानव मे बसे पशु की नीच प्रवृत्तियों की पुकार है युद्ध।

जब से मनुष्य ने समूहों मे रहना सीखा है, विद्वान लोग बताते है, तभी से युद्ध होते आ रहे है। युद्ध जनित विनाश से सत्रस्त मानव समाज युद्ध से घृणा भी करता आ रहा है। तभी तो बुद्ध, यीशु, महात्मा गाधी और मार्टिन लूथर पैदा होते है। किन्तु सभ्यता के कई सोपान लाघने के बाद भी मानव आज तक युद्ध से अपना पीछा नही छुड़ा सका। हर युद्ध, हर सघर्ष धरती के सीने को नए जख्मों से भर जाता है। माताओ की गोद सूनी हो जाती है। मानव समाज मे असख्य विकृतियां पनपती हैं। हत्या के डर से सत्य कही दुबक बैठता है। शान्ति और अहिंसा ऊब कर सन्यास ले लेती है।

सयुक्त राष्ट्र सघ के भूतपूर्व महासचिव स्वर्गीय श्री डॉग-हैमरसोल्ड ने ठीक ही कहा था—"जब तक मनुष्य हैं वे झगड़ते रहेंगे, जब तक राष्ट्र है उनमें सघर्ष होते रहेंगे। नि.शस्त्रीकरण के पक्ष में चाहे जितने भी सिद्धात प्रतिपादित कर दिये जायें ये संघर्ष ही एक दिन व्यापक युद्ध का रूप धारण कर लेंगे।" पिछले विश्वयुद्ध से यद्यपि मानवता ने कुछ सबक

सीखा है। कोरिया, लाओस, वियतनाम, कम्बोडिया, भारत, पाक, भारत-चीन, अरब, इजराइल और अन्य अनेक देशों के बीच हुए युद्ध-शांति स्थापना हेतु आज तक किये गये समस्त प्रयासों के मुह पर करारे थप्पड़ नही तो और क्या है ? संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना एवं उसके तत्वाधान में किये गए सभी प्रयत्नों के बावजूद आज भी किसी बड़े युद्ध की सम्भावना को नकारा नही जा सकता। आज भी यह अभिशप्त ससार दिशाहीन है।

अनेक समझौतों और अन्तर्राष्ट्रीय कानून की व्यवस्था के बावजूद भी संसार की महा शक्तिया, परमाणु, हाइड्रोजन, न्युकलीय और न्यूट्रान बम एव अन्य अनेक विनाशकारी शस्त्रास्त्रों के निर्माण में व्यस्त है। आज संसार के सभी देश अपनी सैन्य तैयारियों पर लगभग 400 अरब डालर प्रतिवर्ष खर्च करते है। इस राशि का 90 प्रतिशत तो विकसित देशों में ही खर्च होता है। परमाणु शस्त्रों की होड़ मे छोटे-छोटे अर्ध विकसित देश भी पिछड़ना नही चाहते। इन शस्त्रो का निर्माण जिन देशों की तकनीकी सामर्थ्य के बाहर हैं वे अपने धन के बल पर अन्य देशो से परमाणु शस्त्र खरीदना चाहते हैं। चारो ओर विषैली हवा बह रही है। दिन-प्रतिदिन विश्व जंग के भुजंग पाश में जकड़ता जा रहा है। आज के लोकतन्त्र मात्र प्रपचतत्र बनकर रह गये है। ससार आंख मूद एक ज्वालामुखी पर बैठा है जो न जाने कब लावा उगलना शुरू कर दे। धरती पर महाशक्तियों की चौपड़ बिछी है जो अन्य छोटे-छोटे देशो को अपने स्वार्थ के मोहरे बना अपने-अपने दाव की घात मे रहती है। आज भी उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद की कितनी खुली और निकृष्ट चालें रोज देखने को मिलती है। एक क्षेत्र की राख ठन्डी भी नही हो पाती कि दूसरे क्षेत्र मे संयत्र की ज्वाला भभक उठती है। कब कौन देश विश्व की राजनीति के तनाव का केन्द्र-बिन्दु बन जाए यह कहना कठिन है। "अगले युद्ध मे किस प्रकार के शस्त्रों का प्रयोग होगा ? जब आईन्सटीन से पूछा गया तो उन्होने उत्तर दिया था कि वास्तव में वे नही जानते किस प्रकार के शस्त्र प्रयोग किये जाएगे। लेकिन अपनी दूरदृष्टि से उन्होंने कहा था कि अगले युद्ध के बाद, जो भी युद्ध होगा वह आदि युग मे प्रचलित पत्थरो के औजारों से लड़ा जाएगा।"

इस सम्बन्ध मे भारत की वर्तमान स्थिति पर एक दृष्टि डालना असगत नही होगा। किसी भी राष्ट्र का भाग्य उसके पड़ोसी देशो से बहुत गहरे जुड़ा होता है। उसके बहुमुखी विकास, उन्नति एवं सुरक्षा के लिए उसे घेरने वाले देशो मे व्याप्त स्थिरता, शान्ति तथा उनके साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्धो का बड़ा महत्त्व होता है।

उसे अपनी प्रतिरक्षा पर कितना व्यय करना है यह उसके अपने पड़ोसी देशो के साथ सम्बन्धों पर निर्भर करता है। एक मित्र पड़ोसी देश किसी देश की प्रतिरक्षा की स्वयं मे एक दृढ़ प्रतिभूति होता है। ऐसी स्थिति मे शान्ति, सौहार्द्रपूर्ण वातावरण सहयोग की स्थापना कर समान लाभ की योजनाओं को कार्यरूप एवं पारस्परिक व्यापार को बढ़ावा देकर एक-दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति करते है। किन्तु विपरीत स्थिति होने पर वैमनस्य पाल एक-दूसरे से होने वाले लाभो से वचित रहते ही है अपनी सामर्थ्य से अधिक व्यय करके जो शक्ति और साधन विकास मे लगाने चाहिए उन्हे युद्ध की तैयारी में खर्च करते है।

दुर्भाग्य से स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ऐसी आदर्श सीमा का अभाव भारत को हमेशा खटका है। 1971 के पहले पूर्वी और पश्चिमी दोनो ओर पाकिस्तान भारत के लिए सिरदर्द रहा है यद्यपि पाकिस्तान मे भी भारत की तरह सर्वप्रथम संसदीय प्रणाली की सरकार बनी थी, किन्तु इसके बाद वहां कितनी बार सैनिक शासन हुआ। कितनी सरकारें बदली यह किसी से छुपा नहीं है। सरकारों की अस्थिरता के कारण पाकिस्तान भारत के साथ अब तक तीन बड़े युद्ध लड़ चुका है। हर बार युद्ध की शुरूआत पाकिस्तान ने ही की। जब-जब भी वहां के शासक अपने हाथों से शासन की बागडोर खिसकती महसूस करते। वे भारत पर एक युद्ध थोपते रहे। वास्तव मे देखा जाय तो पाकिस्तान का आस्तित्व ही भारत विरोधी भावनाओं पर आधारित है। जिन्ना से लेकर जिया तक—वहा जितने भी राष्ट्राध्यक्ष हुए सभी ने वहां की जनता की भावनाओ से खिलवाड़ करके हमेशा उसे भारत के विरुद्ध भड़काया है। अब भी यदा-कदा भारत के अभिन्न अंग कश्मीर का जिक्र होता रहता है।

1971 की पराजय के बाद मरहूम मियां भुट्टो ने पाकिस्तान मे

अमेरिका, चीन, फ्रांस, ब्रिटेन और अन्य देशों से आयातित शस्त्रो और सैनिक सामान के अम्बार लगा दिये जहां इन शस्त्रों को प्राप्त करने में अड़चन आई भुट्टो ने अरब और एशिया के अन्य देशों के द्वारा इन शस्त्रों को प्राप्त किया। चीन ने न केवल शस्त्र और लड़ाकू जहाज ही पाकिस्तान को दिए बल्कि पाकिस्तानी सैनिकों के प्रशिक्षण एवं कराकोरम जैसे महत्त्वपूर्ण मार्ग के निर्माण का उत्तरदायित्व भी अपने ऊपर लिया है। इस प्रकार भुट्टो ने भारत के साथ हजार वर्ष तक लड़ने का "जिहाद" छेड़ दिया था। फांसी दिये जाने से पहले जेल की कोठरी में भुट्टो द्वारा लिखे गये दस्तावेज से पता चलता है कि भुट्टो ने अपने शासन काल में न केवल पाकिस्तान के सैनिक तन्त्र को पुनर्जीवित दिया बल्कि उसे 1971 के मुकाबले कई गुणा दृढ़ और विकसित बना दिया था। शायद 1971 की पराजय के कलंक को मिटाने के लिए ही भुट्टो एक और निर्णायक युद्ध भारत पर थोपने की योजना बना रहे थे। उसी योजना को मूर्त रूप देने के लिए पाकिस्तान आज भी अणुबम बनाने की ओर अग्रसर है। यह एक विडम्बना ही है कि एक अर्द्ध विकसित देश अपने नागरिकों को रोटी के स्थान पर घास खाने की सलाह दे उनकी आवश्यकताओं को ताक पर रखकर परमाणु बम बनाने का प्रश्रय देता है। पाकिस्तान का अणु बम बनाने के पीछे क्या उद्देश्य हो सकता है? कुछ लोगो ने इसे इस्लामी बम का नाम दिया है। उनके मतानुसार क्योंकि यह अरब-इस्लामी राष्ट्रो की सहायता से बनाया जा रहा है। तो इसका प्रयोग अरबों के शत्रु इजराइल के विरुद्ध होगा। इस सन्दर्भ में यह नहीं भूला जाना चाहिए कि मिश्र-इजराइल की सन्धि के बाद स्थिति बदल गयी है। दूसरे, कोई देश अपने नागरिकों की सहायता से जिस वस्तु का निर्माण अपने यहां करता है उस वस्तु के उपयोग पर उसी देश का प्रथम अधिकार होता है। पाकिस्तान की नजर में भारत को छोड़-कर उसका सबसे बड़ा शत्रु और कौन हो सकता है? जिसके विरुद्ध वह इस बम का उपयोग कर सकता हो इस तरह से संसार की महाशक्तियो की राह पर यदि पाकिस्तान भारत के विरुद्ध कभी एक और नए युद्ध की घोषणा कर दे तो यह कोई नई बात नही होगी।

उत्तर में हिमालय के पार भारत के प्रति चीन के राजनीतिज्ञों के रुख

से सभी परिचित हैं। 1954 मे स्थापित पचशील के सिद्धान्त की कमर मे छुरा भोंककर चीन ने तिब्बत पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। भारत ने दलाई लामा को शरण दी तो हिन्दी चीनी भाई-भाई का नारा लगाने वाले भारत को ही अपना प्रथम शत्रु समझा। और 1962 में सीमा का अतिक्रमण कर भारत पर आक्रमण कर दिया। तब से भारत के प्रति चीन की नीति से स्पष्ट हो जाता है कि भारत के लाख चाहने के बावजूद चीन ने कभी भी मैत्री को बढ़ावा नही दिया, उलटे वह पाकिस्तान को उकसा-कर भारत पर आक्रमण कराता रहा है। ताकि भारतीय उपमहाद्वीप मे शान्ति न रह पाए और भारत सशक्त न हो पाए।

पिछले एक दो वर्ष की घटनाओं का अवलोकन करने से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। जब भारत के भूतपूर्व विदेश मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी चीन की यात्रा पर थे उसी समय चीन ने कम्बोडिया पर बडे पैमाने पर आक्रमण कर अपने रुख का परिचय दिया था। लगता है चीन अभी भी सीमा-विवाद को सुलझाने के लिए भारत से समता के स्तर पर वार्ता करने को तैयार नही है। इस प्रकार से चीन की नीतियां भारत के लिए सिरदर्द बनी हुई हैं।

भारत की सीमा से लगे विश्व में एक मात्र हिन्दू राष्ट्र नेपाल में भी राजनैतिक उथल-पुथल एव जनजागरण को नजर अन्दाज नही किया जा सकता। वहा का जनमानस सदियो से चली आ रही राजतन्त्र की गुलामी को नकारने के लिए तड़प रहा है। भूटान मे भी नेपाल की तरह विदेशी शक्तियां सहायता के नाम पर अपना प्रभाव जमाने की होड़ मे लगी रहती हैं। विशेषतया ये शक्तिया भारत को अपना एक मात्र प्रतिद्वन्द्वी मानकर भारत द्वारा की जा रही सहायता से अधिक सहायता कर इन राष्ट्र को भारत से विमुख कर अपने ऊपर निर्भर करने मे लगी रहती है।

बगला देश में शेख मुजीबुर्रहमान की हत्या के बाद सरकारो की अदला-बदली के बाद भी वहा भारत के प्रभाव मे कमी आई है। इसके अतिरिक्त बर्मा और श्री लका भारतीय मूल के अपने नागरिको को निष्कासित कर भारत भेजकर नई-नई समस्या उत्पन्न करते रहे हैं। उत्तर पूर्वी सीमा के नागालैंड एव मिजोरम के विद्रोही बर्मा के रास्ते ही चीन तक

आते-जाते हैं। इसमें यदि वर्मा सरकार ऐसे विद्रोहियों पर अपनी सीमा-प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दे तो भारत की कम से कम एक समस्या तो हल हो ही सकती है।

भारत, श्रीलका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और अन्य बहुत से देश जिनके चरण हिन्द महासागर की लहरें पखारती हैं कई वर्षों से मांगें करते आ रहे हैं कि हिन्द महासागर महाशक्तियों की शत्रुता या वैमनस्य का सैनिक क्षेत्र न बने और यह क्षेत्र शान्ति क्षेत्र घोषित कर दिया जाय। इसी संदर्भ में सन् 1963 मे सयुक्त राष्ट्र संघ की महा सभा में श्री लंका द्वारा प्रस्तुत एक प्रस्ताव भी गुट निर्पेक्ष देशों की सहायता से बहुमत से पास हो गया था। इसके बावजूद आज भी महाशक्तियां हिन्द महासागर में सैनिक अड्डे स्थापित कर अपना-अपना प्रभाव बढ़ाने मे सलग्न हैं। इन महाशक्तियों के किसी भी सघर्ष से इस क्षेत्र के देशों का प्रभावित होना स्वाभाविक है। निश्चय ही ये महाशक्तिया भारतीय उपमहाद्वीप और हिन्द महासागर में शान्ति की स्थापना नही चाहती। शायद इन्हें डर है कि ऐसा होने पर इस क्षेत्र के देश भी मजबूत हो आत्म निर्भर हो जाएगे।

विद्वानों ने भी किसी भी सम्भावित युद्ध की तीन रूपों में व्याख्या की है—विश्वयुद्ध महाशक्तियों के पक्षधर किन्ही दो देशों के बीच सिद्धान्तो के आधार पर क्षेत्रीय युद्ध और किन्ही दो देशों के बीच निजी हितो की सुरक्षा के आधार पर युद्ध। विश्व युद्ध की स्थिति मे विश्व के छोटे-बड़े लगभग सभी देश किसी न किसी रूप मे किसी एक पक्ष से सबद्ध अवश्य ही होंगे। ऐसी स्थिति में युद्ध अथवा युद्धबन्दियों से सम्बन्धित किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय कानून का कुछ अर्थ नहीं होगा। क्योंकि कानून का पालन कौन देश किस देश से कराएगा? वह भयंकर स्थिति होगी। विश्वयुद्ध में तो प्रत्येक पक्ष विपक्ष को अमूल नष्ट करने [illegible] ही युद्ध की आग में कूदेगा। यदि इस प्रकार के युद्ध में [illegible] का प्रयोग भी होता है तो युद्धबन्दियों का प्रश्न ही नहीं [illegible]। [illegible] तो विध्वंस से बचे मुट्ठी भर लोग। क्योंकि परमाणु [illegible] समर्थ-असमर्थ, स्त्री-पुरुष और बाल-वृद्ध में [illegible] नहीं [illegible] [illegible]शिमा पर जो बम गिरा था लगभग [illegible]

[illegible]

प्रभाव से ही मर गए थे। तत्पश्चात् कितने ही दिनो, सप्ताहों, महीनों और वर्षा तक लोग बम के अप्रत्यक्ष प्रभाव जनित असाध्य रोगों से सिसक-सिसक कर मरते रहें। शक्ति-संतुलन के सिद्धन्त और "वीटो" अधिकार का प्रावधान होने के कारण सयुक्त राष्ट्र संघ भी तृतीय विश्वयुद्ध को रोकने मे असफल रहेगा।

वियतनाम, कोरिया, लाओस, कम्बोडिया में हुए युद्धों को दूसरे प्रकार के क्षेत्रीय युद्धों की श्रेणी मे रखा जा सकता है। इस प्रकार के युद्ध मे जहा कुछ महाशक्तियां अपने-अपने पिठ्ठुओं की प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहायता कर उन्हें उकसाती हैं वही कुछ ऐसी भी मानवतावादी सस्थाए और तटस्थ देश होते हैं जो संघर्ष-रत दोनो पक्षो को संयुक्त राष्ट्र सघ के तत्वाधान मे युद्ध बन्द करने और शान्तिपूर्वक अपने मतभेदो को समाप्त करने के लिए बाध्य करते हैं। ये युद्ध कभी-कभी लम्बे समय तक चलते है। तदनुसार युद्धबन्दियो की समस्याएं भी लम्बे समय तक विद्यमान रहती है। यद्यपि इन समस्याओं का समाधान जेनेवा-अभिसमय द्वारा प्रतिपादित तरीको का पालन करके किया जा सकता है। किन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि कोई अभिरक्षक या प्रतिबधक देश किस सीमा तक अन्तर्राष्ट्रीय कानूनो और जेनेवा अभिसमय का पालन करता है।

भारत-पाक, भारत-चीन, अरब-इजराइल और अफ्रीकी देशों के बीच होने वाले युद्धों को हम तृतीय श्रेणी के युद्धो मे रख सकते हैं। इस प्रकार के संघर्षों की पृष्ठभूमि मे विश्व महाशक्तियों के सिद्धान्तों का होना आवश्यक नही। वास्तव में मुख्य होते हैं। संघर्षरत देशों के निजी स्वार्थ। इस प्रकार के युद्धो के परिणामस्वरूप उत्पन्न युद्धबन्दियों की समस्या का समाधान जेनेवा अभिसमय और अन्तर्राष्ट्रीय कानून का पालन कराकर किया जा सकता है।

जब तक युद्ध होते रहेंगे उनमे भाग लेने अथवा न लेने वाले सैनिक, असैनिको को युद्धबन्दी बनाया जाता रहेगा, और जब तक युद्धबन्दी बनाए जाते रहेंगे युद्धबन्दियो की समस्याए रहेंगी। कोई भी देश केवल शक्ति और बन्दूक के दम पर युद्धबन्दियों को रोक कर नहीं रख सकता। विगत मे ऐसे भी उदाहरण मिल जाएगे जब अभिरक्षक अथवा प्रतिबंधक देश

द्वारा शिविरों में टैंक लगा देने के वावजूद युद्धबन्दी शिविरों में भाग निकले थे। आवश्यकता है उनके साथ आदर्श मानवतापूर्ण व्यवहार की। यह नहीं भूल जाना चाहिए कि युद्धवन्दी किसी व्यक्ति विशेष के बन्दी न होकर एक राष्ट्र या राष्ट्र समूह के बन्दी होते है जिसके ऊपर उनकी देखभाल एवं सुरक्षा का उत्तरदायित्व होता है। उस प्रत्येक व्यक्ति को जो युद्धवन्दियों से सबद्ध हैं, उनके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसे व्यवहार की उसे स्वयं युद्धबन्दी होने की स्थिति में अपेक्षा होती हैं।

इतिहास की गति वड़ी तीव्र होती है। 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ और 1949 में स्थापित जेनेवा अभिसमय आज की परिस्थितियों में पुराने पड़ गए है। हाइड्रोजन, न्युक्लीय, और न्यूट्रान वम तथा अन्य अनेक घातक शस्त्रों का निर्माण तो इन संस्था और नियमों की स्थापना के वाद ही हुआ है ना? इसके अतिरिक्त जेनेवा अभिसमय युद्धोपरान्त सभी समस्याओं के समाधान में पूर्णतया सफल भी तो नही। विधिवत युद्ध की घोषणा पूर्व छोटी-छोटी झड़पो मे वन्दी वनाए गए सैनिक, गृह युद्ध, सरकार के परिवर्तन, सीमा-निर्धारण अथवा क्षेत्र-पुनर्विभाजन के फलस्वरूप शत्रु-देश के हाथ फसे व्यक्ति जेनेवा अभिसमय मे वर्णित युद्धबंदियों की परिभाषा में नही आते। आखिर इनका क्या स्तर है? और घुसपैठिए, देशद्रोही, कमान्डोज, जासूस, पैरोल को भग करने वाले व्यक्तियों की क्या स्थिति है? वे भी तो मनुष्य हैं। प्रत्यावर्तन का प्रावधान क्या उन पर भी लागू होता है? क्या वे कभी-कभी अपने देश, अपने घरों में अपने स्वजनो के वीच पहुंच पाते हैं। क्या अभिरक्षक अथवा प्रतिबंधक देश उन्हें भी प्रत्यावर्तित कर सकता है अथवा स्वेच्छा से उन्हें शरण दे सकता है? अपने देश के कर्णधारों के इशारों पर अपनी मातृभूमि की रक्षा में प्राणों की बाजी लगा देने वाले इन अभागों का क्या कसूर है कि उनके प्रति व्यवहार संबंधी अब तक कोई नियम नही बने। कितने प्रश्न है जिनका उत्तर जेनेवा अभिसमय मे नहीं है। अत: इन नियमों को और अधिक व्यापक एवं प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता है। ऐसा करते समय आज की परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना चाहिए। जो देश इन नियमों की उपेक्षा कर युद्धबन्दियो के साथ अमानवीय व्यवहार

करते हैं उसके लिए भी किसी अपराध-विधान का प्रावधान इन अभिसमयों मे होना चाहिए ताकि एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में मामलो की निष्पक्ष जाच कर दोषी पाए गए व्यक्तियो को उचित दण्ड दिया जा सके। इन नियमों का पालन करने हेतु ससार में मानवतावादी सस्थाओ एवं गुट निरपेक्ष देशो की संख्या बढ़ानी चाहिए तथा उन्हे विशेषाधिकार भी प्रदान किए जाएं। तभी मानवीय प्रतिष्ठा को बचाया जा सकता है। युद्धबन्दियों की दशा मे अधिक सुधार कर उनकी समस्याओं को कम किया जा सकता है।

साथ ही हमे अपनी आने वाली पीढ़ियों को युद्ध की विभीषिका से बचाने के लिए युद्ध की सम्भावनाओं को समाप्त करने की ओर ठोस कदम उठाने चाहिए। यह महज एक सपना-सा लगता है। किन्तु कभी-कभी सपने साकार भी हो जाते है। और यह सपना भी साकार हो सकता है एक नई विश्व-व्यवस्था की रचना करके जो मानव का हृदय-परिवर्तन कर उसे युद्ध से विमुख कर सके। न्यूक्लीय और परमाणु शक्ति को विनाश से विकास की ओर मोड़कर न्याय समानता और समता पर आधारित एक नए वातावरण का निर्माण कर सकें जिसमें "वसुधैव कुटुम्बकम" की परिकल्पना को मूर्तरूप दिया जा सके। प्रैस एवं प्रचार के साधन भी युद्ध के विरोध मे जन मानस तैयार करने मे सहायक हो सकते है। और अन्त मे—"शस्त्र अविश्वास के लक्ष्य है। यदि किसी तरह अविश्वास ही समाप्त हो जाए तो शस्त्र स्वतः ही समाप्त हो जाएगे और यदि शस्त्र समाप्त हो जाएं तो युद्ध कहा से होगा ? सृष्टि के आरम्भ मे मनुष्य इतना सभ्य नही था। समय-समय पर अपने अनुभवो के आधार पर उसने अपनी कितनी ही बुराइयों, प्रथाओ, कुरीतियो, रूढ़ियों और परम्पराओ को अलाभकारी पाकर उन्हे तिलाजलि दी है। और अब यदि उसने युद्ध के भयकर परिणामों को भोग कर भी युद्ध को समाप्त नही किया तो निश्चय ही एक दिन युद्ध उसे समाप्त कर सकता है तो क्या ''?

● ●
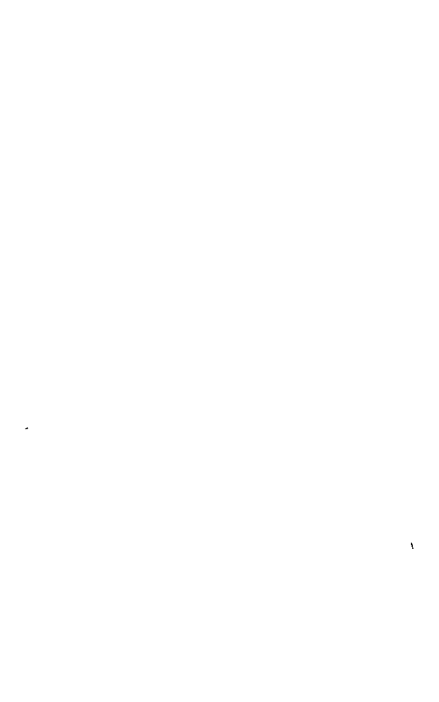
वीरसिंह

जन्म : जुलाई, 1942.
पश्चिमी उत्तर प्रदेश के एक गांव मे

शिक्षा : आगरा विश्वविद्यालय के स्नातक
कुछ वर्ष नगा प्रदेश में रहे, वहा से विदेश मंत्रालय में आए, अब चन्डीगढ़ में लेखा अधिकारी।
'युद्धोपरान्त' प्रथम पुस्तक है। एक पुस्तक 'नगा प्रदेश मे जीवन' विषय पर लिख रहे है।

सम्पर्क : रक्षा लेखा नियंत्रक,
पश्चिमी कमान,
चन्डीगढ़ 160007